# बटवारा

सामाजिक उपन्यास

लेखक

सी० एल० काविश

महेश-प्रकाशन

सांताक्रूज (ईस्ट) बम्बई ५५

# समर्पण

उस मा को, जिसे बेटों ने बांट लिया।

'काविश'

# सम्मति

श्री चुन्नीलाल काविश रस का अनुसंधान कर रहे हैं,—जीवन में और इसीलिए लेखन में भी। "बटवारा" में जो कुछ नया - नया - सा लगता है, वही उस नित - नूतन तत्त्व की एक झाँकी है। जब श्री काविश कुछ लिखते हैं तो वह "कुछ" उनको भी लिखता है। अतएव 'बटवारा' के पहले और 'बटवारा' के बाद के श्री काविश एक नहीं है। आगे वे बहुत कुछ लिखनेवाले हैं, और वह 'बहुत कुछ' उनको लिखता जायेगा। स्पष्ट है कि उनके बारे में अभी या कभी भी कुछ कहना मेरे लिए अनधिकार चेष्टा होगी। केवल यह जानता हूँ कि श्री काविश पहले रसिक थे, फिर रसज्ञ हुए, अब धीरे-धीरे रस मर्मज्ञ होते जा रहे है। कल वे क्या होंगे, यह तो वे स्वयं भी नहीं जानते; किन्तु जिसे वे जानने लगे हैं, उसे यदि मानने लगे तो फिर शायद उन्हें और कुछ 'होना' नहीं पड़ेगा, क्यों कि रसो वै सः।

महेश कौल
( फिल्म-डायरेक्टर )

# परिचय

श्री काविश जी का "बटवारा" उपन्यास पढकर बड़ी प्रसन्नता हुई। साधारणत उपन्यासो की जो प्रवृत्ति ऐतिहासिक या शृंगारी वृत्तोसे ओत-प्रोत होती है, उसम उपन्यासकार सस्ती भावुकता को बने बनाये ढाचो और कथानको मे बैठाकर एक निश्चित परिणाम तक पहुँचाने मे अपने कर्तव्य की इतिश्री कर देता है और वर्तमान अनेक सामाजिक, आर्थिक या मनोवैज्ञानिक वादो का कही-कही कुछ झलकता-सा अस्वाभाविक पुट देकर उसे कला, कौशल ( टेकनीक ) या शिल्प-जैसे अनुपयुक्त विशेषण देकर उसका विज्ञापन करने लगता है, किन्तु उपन्यास वास्तव मे वही है, जिसमें तीन भावात्मक तत्त्वों का समावेश हो—कुतूहल, मत्यतुल्यता और विश्वसनीयता । ये तत्त्व तभी उपन्यास के अङ्ग बन पाते हैं, जब लेखक सावधान होकर उस उपन्यास के कलेवर का विकास और सवर्द्धन करे।

काविश जी ने पेशावर के विस्थापित हिन्दू परिवारो के उन जीवन का चित्रण करनेका प्रयत्न किया है, जो देहरादून मे आकर रहने पर भी अपने प्रदेश की निष्ठा, ओज, आत्मसम्मान और चरित्र का पालन करते जा रहे हैं। इस प्रादेशिक निष्ठा की परम्परा में सुहागिन का वात्सल्य वास्तव मे व्यापक मातृ-भावना का प्रतीक है। उसी के साथ युग की कलुषित धारा मे बहनेवाला रामस्वरूप अपने पिता की सत्यनिष्ठाको छोड़कर माया के मोह में, पत्नी के प्रोत्साहन पर काला बाजार करने लगता है। सबसे छोटा भाई रामनारायण इस युग के पढे-लिखे युवको के समान उद्दाम होकर रायसाहब की पुत्री से स्नेह-संबन्ध स्थापित करता है। घर के बीच दीवार खिच जाती है और पेड़ाखान ने जो निष्ठा स्थापित की, वही अन्त में विजय प्राप्त करती है।

घटनाओं के क्रम मे आदि से अन्त तक कुतूहल व्याप्त है । जिस जीवन का चित्रण किया गया है, वह निश्चय ही लेखक का परिचित जीवन है, जिसे अत्यन्त सूक्ष्मता से चित्रित करके लेखक ने इतना सजीव कर दिया है कि वह सत्यतुल्य ही नही, सत्य प्रतीत होता है और इसीलिये वह विश्वसनीय भी है ।

इस प्रकार के उपन्यास हिन्दी साहित्य मे बहुत कम हैं, जिनमे इस सूक्ष्मता और सरलता से किसी समाज का चित्रण करने के साथ - साथ घटनाओं का स्वाभाविक सामजस्य किया गया हो ।

मै हृदय से इस उपन्यास का हिन्दी जगत् मे अभिनंदन करता हूँ और मुझे विश्वास है कि श्री काविश जी स्थानीय चित्रण के कौशल से पूर्ण अन्य उपन्यासों की सृष्टि करके हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि और अपनी कीर्तिवृद्धि करेगे ।

उत्तर बेनिया बाग, काशी
२६ जनवरी १९६०

सीताराम चतुर्वेदी

# दो शब्द

इस उपन्यास की भी एक कथा है। इसे लिखा था पाच साल पहले, किन्तु कोई प्रकाशक इसके प्रकाशन के लिए तैयार न हुआ। प्रकाशक इसकी भाषा को विदेशी मानते थे और कहते थे यह हमारी भाषा नही है। पर मै कहता था, यह मेरी बोली है। जिन पात्रो का यह इतिहास है, वे इसी तरह बोलते है।

उपन्यास के पात्र न तो गंगा के किनारे रहने वाले है, न गोमती की लहरो से उनका कोई भौतिक सम्बन्ध है। वे ऐतिहासिक और पौराणिक विशाल सिन्धु की सन्तान हैं।

सिन्धु के पार, जहा आज भी पौराणिक संस्कृति एक अन्य रूप मे जीवित है, वही इनका जीवन स्थान है और हिन्दू कला और संस्कृति के कारण इन पात्रों का हिन्दुस्तान के साथ एक आध्यात्मिक सम्बन्ध है। यह सम्बन्ध भौतिक नही, हार्दिक है। भाषा तो एक अलकार है, मनुष्य से इसी कारण भाषा का संबन्ध भौतिक ही होता है, पर मेरी बात किसी प्रकाशक की समझ मे नही आती थी। वे कहते थे, यदि हमने इसे छाप दिया तो हमारे साहित्य का स्तर गिर जायेगा।

मैं चुप हो गया और मेरा यह उपन्यास 'बटवारा' दिल्ली से बम्बई और इलाहाबाद तक यात्रा करके वापस आ गया।

एक प्रकाशक ने कहा—यदि पैसा आप लगाये तो हम छाप दें, दूसरे ने कहा, इसके अधिकार सदा के लिए हमें सौप दे, तो हम इसे छापने पर विचार करे।

उनकी बात सुन कर मै विचार करने लगा–मेरा उपन्यास है या बेटी, जिसका लोग "दहेज के साथ कन्या दान" मागते हैं ?

पर मेरे पास पैसा कहा था, जो प्रकाशक को साक्षात विष्णुस्वरूप मानकर अपनी रचना दान कर देता ? मैंने इस पोथे को बंद करके आले में रख दिया और साहित्य से मुंह मोड़ कर मैं फिल्म - जगत मे व्यस्त हो गया। मैंने सोचा, अपना कल्याण फिल्म के द्वारा ही लिखा है तो साहित्य से अपना क्या सम्बन्ध। यो भी साहित्यकार फिल्मकार को "हल्की दृष्टि" से देखते हैं; न उनको लेखक मानते हैं, न कवि। इसका कारण फिल्म का हल्का स्तर है। पर मैं फिल्म का उपकार मानता हूँ, क्योंकि मैंने फिल्म मे बहुत कुछ सीखा है और सीख भी रहा हूँ। और अब, इस उपन्यास के छपने मे भी फिल्म का ही उपकार मानना पड़ा।

ऐसें समय मे जब मेरा उपन्यास किसी दरिद्री की बेटी के विवाह की भांति छपने को तरस रहा था, डायरेक्टर करुणेश ठाकुर के साथ प्रोड्यूसर दीप खोसला, दीप-प्रदीप प्रोडक्शन्स के बँटवारे के बाद मेरे पास आये। उन्हें नये चित्र के लिये नई कहानी चाहिये थी, मैंने उन्हें बटवारा उपन्यास सुना दिया। उन्होंने कहानी खरीद ली और मेरा उपन्यास छप गया।

तात्पर्य यह कि इस युग में गरीब की रचना पहले बिकती है और विवाह बाद में होता है।

*काविश*

प्रोथी बिल्डिंग, प्रभात कालोनी.
सान्ताक्रूज (ईस्ट), बम्बई ५५

# बटवारा

## ( १ )

सन् तो ठीक से याद नहीं, लेकिन सन् १९४७ की घटना हिन्दुस्तान पर बीत चुकी थी, सम्भवतः सन् १९४९ की बात है। और महीना कौन सा था ? मार्च का ! तारीख फिर भूल गया हूँ, हाँ, इतना याद है, देहरादून के महन्तो का सालाना जुलूस आज-कल में ही निकलनेवाला था।

चकरौता रोड पर केमिस्टों की दुकानें रोज की तरह उस दिन भी खुली थीं, बाजारमें ग्राहक कोई नहीं था, और जो चन्द-एक थे, वे 'धनीराम ऐण्ड सन्स'' केमिस्ट की दुकान में दवाई खरीद रहे थे, बाकी केमिस्ट हाथ पर हाथ धरे बैठे थे।

धनीराम की दुकान के अन्दर से एक टाईवाला ग्राहक अपने-आपसे बात करता हुआ बड़बड़ाता बाहर निकल रहा था।

''तोबा तोबा, कैसा जमाना आ गया है, जो चीज ढूँढने जाओ मिलती ही नहीं, जिस दुकानदार से बात करो, वही कहता है दवा तो है नहीं, बाजार से मँगवा कर देनी पड़ेगी।''

ठीक उसी समय दुकान के सामने एक ताँगा आकर रुक गया, और एक पगड़ीवाला आदमी उतरकर दुकान के अन्दर जाने लगा उसने उस बड़बड़ाते हुए आदमी की बात सुन ली और पूछा—

कौन-सी दवा चाहिए आपको ?

टाईवाले आदमी ने डाक्टर का लिखा हुआ दवाई का कागज उसकी ओर बढ़ा दिया।

"यह दवा तो अन्दर है" आनेवाले आदमी ने नीचे से लेकर ऊपर तक दूसरे को देखकर कहा।

"लेकिन आप के लड़के ने कहा है कि दवा नही है, बाजार से मँगवा कर देनी पडेगी, दाम ज्यादा लगेगे ?"

दुकान का मालिक धनीराम यह बात सुनकर क्रोध से भर गया, उसके चेहरे का रंग बदल गया। उसने ग्राहक की ओर देखा. शायद जॉच रहा था, सच्चा है या झूठा। धनीराम की दुकान पर माल ब्लैक मे नही बिकता, यह सर्वविदित था। और धनीराम को आज यह खबर मिली कि माल उसकी दुकान पर भी काले बाजार में बिकनें लगा है, उसने उस आदमी को कोई उत्तर न दिया, और पर्चा लेकर दुकान के भीतर चला गया।

दो एक ग्राहक दवाये लेकर जा चुके थे। दुकान के बीच में "शोकेस" के पास धनीराम का बडा लड़का रामस्वरूप खड़ा था। उसे देखते ही धनीराम की ऑखों मे खून उतर आया, और रामस्वरूप का खून सूख गया।

धनीराम के पीछे वह ग्राहक खडा था, जिसके चेहरे पर सज्जनता के निशान देखकर रामस्वरूप ने उसे सफेद बाजार से खीच कर काले बाजार मे घसीट ले जाने की कोशिश की थी।

धनीराम तेजी से आगे बढ गया। वह एक ऐसा चॉटा मारना चाहता था, जो उसका बडा लड़का रामस्वरूप भविष्य में जीवन भर याद रखे, परन्तु धनीराम का उठा हुआ हाथ हवा में तैर कर ही रह गया। उसकी गाली "बेईमान का बच्चा" दुकान में गूँज गई। रामस्वरूप उससे पहले ही खिसक कर "डिस्पेंसरी" के अन्दर जा चुका था।

धनीराम भी उसके पीछे जाने लगा, परन्तु ग्राहक ने उसे रोक लिया, वरना धनीराम मार-पीट के बिना कभी न छोड़ता। वह अपने गुस्से को पी गया, उसने दवा निकालकर ग्राहक को देकर रामस्वरूप को पुकारा। वह डरते-डरते बाहर आ गया, लेकिन बाप से इतना दूर, कि उसके हाथ न आ सके। धनीराम पहले तो क्षण भर रामस्वरूप को देखता रहा, फिर गुस्से से बोला—

क्यों ओये, तुझे शर्म नहीं आती, तू किसका पोता है ?

रामस्वरूप चुपचाप खड़ा रहा, धनीराम ने थोड़ी देर उसके उत्तर की राह देखी और फिर बोला—

बे-गैरत, अगर फिर तूने ऐसी हरकत की तो गोली मार दूँगा। बेईमान औलाद से तो बे-औलाद होना अच्छा है।

इतने में दुकान के बरामदे में फलों की दुकान लगानेवाले बिशनदास ने अन्दर आकर कहा—

'अरे धनी, जरा बाहर आकर तो देख क्या हो रहा है ?"

"मैं अन्दर का तमाशा देख रहा हूँ, बिशन, हमारे घर में नया 'लाटेकिन' पैदा हुआ है, ब्लैकमें माल बेचना चाहता है, कम्बख्त इतना नहीं जानता, ये दवायें मरीजोंकी अमानत हैं, हमारे पास।"

बिशनदास बोला, "लेकिन जरा बाहर तो आ, तेरी ही बात हो रही है, बाहर भी।"

"मेरी बात ?" इतना कहकर धनीराम बिशनदासके साथ बाहर निकला। बाहर वह ग्राहक जो अभी-अभी दवा लेकर गया था, बीच बाजार में खड़ा सबसे कह रहा था—

"ये सब केमिस्ट बेईमान हैं, लेकिन यह एक रिफ्यूजी ईमानदार है, धनीराम।"

दूसरे केमिस्ट अपनी दुकानोंके अन्दरसे गर्दनें निकाल निकालकर उस आदमीकी ओर देख रहे थे, और वह एक साँसमें बोले जा रहा था—

"क्या देखते हो बेईमानो ? इस रिफ्यूजीसे ईमानदारी सीखो, जिसे तुम शरणार्थी कहते हो।"

यह बात सुनकर धनीराम पर कुछ अजीब ही असर हुआ, एक खुशी, लेकिन शर्म की भावनामें मिली हुई। नहीं, एक शर्म, खुशीकी भावनामें मिली हुई उसके दिलमें भर गई। वह यह बातें सुन न सका और अन्दर चला गया। बाहर वह ग्राहक बोले चला जा रहा था—"बेईमानो, तुम रिफ्यूजियोंको बुरा कहते हो, सबक लो इनकी ईमानदारी से।"

एक लठवाले आदमी ने उधरसे गुजरते हुए कहा:—"काहे को फजूल शोर मचाय रहे हौ, चुपचाप अपनो रास्ता नापौ--नाही तो रामकसम हम तोहार गर्दन नाप देब।"

- ग्राहक, उसके मजबूत लठ और भयकर सूरतको देखकर बकता–झकता आगे बढ गया। सब दुकानदार हँसने लगे। एक बोला—

"हॉ चौबेजी, यह ससुरा सबको गालियॉ दे रहा था। हमे बेईमान बताता था।"

चौबेजी ने अकड़कर कहा—"अरे हम सब सुनत रहैं लाला, जबतक चौबेजी येहि बाजार में हैं, तबतक कोई ससुर को मजाल है जो हमारे सेठनको ऑख दिखाय सके।"

"हॉ हॉ, चौबेजी।" सबने उसकी हॉ में हॉ मिलाई। चौबेजी ने लठ कन्धेपर रखा और एक लम्बा सुर लगाया—

"सुगना बोले रे हमरी अटरिया हो रामा।" चौबेजी के जानेके बाद, लाला बंशीधर केमिस्ट ने पड़ोसी केमिस्ट राधेश्याम से कहा—

"लालाजी, इस ससुरे रिफ्यूजी केमिस्ट से तो वह मुसलमान केमिस्ट ही अच्छा था। हाजी रहमतउल्ला। सुबह आकर सलाम करता, हमारे दु:ख सुख में शरीक होता, दवाओ के भाव–ताव मे भी हमारा साथ देता था। लेकिन यह तो महागुण्डा दिखाई देता है, सिर पर पगड़ी बॉधे फिरता है और बात करो तो काटने को दौड़ता है।"

"जी हॉ लालाजी, शक्ल नहीं देखते लुच्चे की, बिलकुल रावण से मिलती है। इसका उपाय सोचना चाहिए, नहीं तो हमारे बच्चे भूखे मर जायेंगे।"

उस रात सचमुच सारे बाजारके केमिस्ट इकट्ठे हुए, उनमे सब शामिल थे। देशी भी, विदेशी भी, शरणार्थी भी और शरण देनेवाले भी। सबने मिलकर धनीराम से पीछा छुडाने का उपाय सोचा और मालदार केमिस्टों ने उस पर अमल करने का वचन भी दिया।

—:x:—

( २ )

धानीरामकी दुकान थी चकरौता रोड पर और रहता था कर्णपुर मुहल्ले मे। इस मुहल्ले की किस्मत मे हमेशा से ही परदेशी लिखे थे। बटवारे के पहले अंग्रेजी सरकार ने अफगानी शहजादे लाकर कर्णपुरमे बसाये थे, बटवारे के बाद ये शहजादे तो पाकिस्तान चले गए, लेकिन उनकी जगह देशी सरकारने सरहदके लोग लाकर बसा दिए। सौ-वर्ष के बाद वह पुरानी सभ्यता जो अफगानी शहजादे शुरूमें लेकर यहाँ आये थे, इन हिन्दुओंके साथ फिर कर्णपुर मुहल्ले में पहुँच गई। वही सिर पर कुल्हे, पगड़ियो के ऊँचे तुर्रे, बड़ी-बडी घेरवाली सलवारें, वही सुर्ख और सफेद चेहरे। फर्क सिर्फ इतना था, कि जानेवाले लोग शाहजादे कहलाते थे, और आनेवाले ये लोग शरणार्थी, पुरुषार्थी, पीड़ित या रिफ्यूजीके नामसे जाने जाते थे।

इनके आ जानेसे भी मुहल्ले में कोई परिवर्तन नही हुआ। मसजिद भी उसी तरह खड़ी है, लेकिन उसकी सीढ़ियों पर घास उग आई है। मीनार शात है। दरवाजे पर एक ताला पड़ा रहता है। मसजिद के साथ रहमत मजिल भी ज्यों-की-त्यों नजर आ रही है। उसके ऊपर "रहमत मजिल का कुतुबा" भी अभी तक लगा है। "हाजामिन फजले रब्बी" भी वैसा ही लिखा है। लेकिन उसके नीचे किसीने 'ओम्' लिख दिया है।

बटवारे से पहले इस मकान मे हाजी रहमतउल्ला खान केमिस्ट रहते थे और अब सरहदके हिन्दू पेड़ाखान रहते हैं। पेडाखान ने हाजी रहमतउल्लाखान से उसकी केमिस्ट की दुकान और रहमत मजिल नकद रुपया देकर खरीद ली थी। पेड़ाखान का बेटा पेशावरमे भी अग्रेजी दवाओ की एक बहुत बड़ी दुकान करता था।

इसके अलावा पेड़ाखान भी वहाँ काफी जायदादका मालिक था। उसके बाग थे, मकान थे, मोटर, नौकर-चाकर सब थे। लेकिन अब वह रिफ्यूजी है। देहरादून पेड़ाखानके घरवालोको पसन्द आ गया, परन्तु पेड़ाखान अभी तक अपनी मातृभूमिको नही भूला। उसे अपने बागोकी ठण्डी छाये याद आती हैं। नाशपातियो और आडुओंके पेड़ उसकी आँखोंमे घूमते रहते हैं, फिर उसके वह पेशावरके दोस्त। उसे जब भी पेशावर याद आता तो वह एक आह भरकर कहता—अहा! मेरा पेशोर, अगूरोवाला, नाशपातियोवाला, आलूचोवाला और इस देशमें क्या रखा है? किन्तु उसके देशकी सीमाये तो फौजोकी निगरानीमे बड़ी हो गयी थीं, धर्मके नामपर एक ऐसी खूनी लकीर खीच दी गयी थी, जिसको पार करना मनुष्योके बस की बात नहीं। फिर भला पेडाखान क्या करता, कहाँ जाता। वह आमतौर पर आँगनमे लगे अलीचीके पेड़के नीचे बैठा हुक्का गुड़गुड़ाता, नसवार थूकता और जब उकता जाता तो हरिद्वार चला जाता। वहाँ वह हाथ जोड़कर प्रार्थना करता—

'हे गगा मैया! या अपने पेशोर वापिस भेज दे या अपने पास बुला ले।' इसी बूढे पेडाखानके बेटेका नाम धनीराम था। धनीरामका स्वभाव बिलकुल बच्चो का सा था। खुलकर हँसना और दिल खोलकर खर्च करना, यह उसकी आदत थी। उसे देखकर ऐसा मालूम होता था, जैसे—जिन्दगी भोलेपन और निश्चिन्तताका नाम है। धनीराम छोटा था, तभी उसकी माँ मर गई। पेडखानने दूसरी शादी नही की, माँ की-सी ममतासे उसने धनीरामको पाला था और धनीराम .... ? ..वह अब तीन जवान लड़कों का बाप था, बल्कि दादा भी कहलाने लगा था, फिर भी अभी तक अपने बापके सामने आकर वह बच्चा बन जाता। जबतक आदमीके माँ-बाप सिरपर रहते हैं, वह फूलकी तरह रहता है, फूल जो चाँदकी चाँदनीमे खिलता है और सूर्यकी किरणोमे पलता है। धनीरामकी माँ तो नहीं थी, किन्तु बाप जिन्दा था। इसीलिए वह चमक रहा था, चहक रहा था। धनीरामके तीन बेटे थे, रामस्वरूप, रामअवतार और रामनारायण।

रामस्वरूप पढा-लिखा था, दुकान वही चलाता था। मॅझला बेटा रामअवतार अनपढ था, देशके बटवारेसे पहिले वह अपने दादाके बागोमे उसका हाथ बटाता और अब बटवारेके बाद वह भी दुकान पर ही बैठता था। वह अब थोडी बहुत अंग्रेजी भी सीख गया था, दवाओके लेबल पढ लेता था, मिक्चर भी बना देता था। इन दोनो की शादी हो चुकी थी और भगवानकी कृपासे दोनोंके घरमे एक-एक लडका भी था। रामस्वरूपका लडका ५ वर्षका था और रामअवतारका चार वर्ष का।

धनीरामका सबसे छोटा लडका रामनारायण अभी कालेजमे पढता था। धनीरामकी सबसे बडी इच्छा यह थी कि उसका एक बेटा पढ-लिखकर डाक्टर बन जाय, इसलिए नही कि डाक्टर रुपया बहुत कमाते हैं, बल्कि इसलिए कि देशको छोड़कर आये हुए शरणार्थियोंको डाक्टरोंकी बहुत जरूरत थी जो उनके बीमारीके साथ, उनके दूसरे दु खोको भी समझ सके, जिनके दिलोमे दर्द हो। उनके शहरमे आये हुये रिफ्यूजी डाक्टर भी लगभग दुकानदार थे, वे डाक्टरीको धधा समझते थे, और धधेमे ज्यादा से ज्यादा रुपया खीचना जानते थे।

रामनारायण बी० एस० सी० पास करले तो धनीराम उसे दिल्ली मेडिकल कालेजमें भेज देगा, वह डाक्टर बन जायेगा। धनीराम एण्ड सन्सकी दुकान पर डाक्टर रामनारायण एम० बी० बी० एस० का बोर्ड भी लग जायगा। उसके नीचे लिखा होगा—यहा गरीबोका इलाज मुफ्त होता है, रिफ्यूजियोको दवा मुफ्त मिलती है।

इसी आशासे धनीराम अपने छोटे बेटे पर खास ध्यान देता था, उसे प्यार भी बहुत करता था। बड़े और मॅझले बेटे पर भी जान देता था, पर आज काले बाजार की उस घटना ने उसके दिलमें एक दर्द पैदा कर दिया था। मेरा बेटा, पेड़ाखा का पोता, काले बाजारकी स्याही दोनो हाथों से मेरे खानदान के मुँह पर पोत देना चाहता है, यह बड़े दुख की बात है।

उस शाम को जब धनीराम घर में आया तो उसकी पत्नी जिसे पेड़ाखा सुहागन के नाम से पुकारता था, रसोई मे बैठी अपनी मॅझली बहू का हाथ बटा रही थी।

धनीराम ने आँगन में प्रवेश करते ही पुकारा— "काका ! काका !"
धनीराम की पत्नी ने अपनी बहू की ओर देखा, वह भी सास की तरफ देखने लगी। धनीराम घर में आते ही हमेशा रामस्वरूप या रामअवतार के बच्चों को पुकारता था। आज क्या बात है, जो उसने अपने बाप को आवाज दी ? सुहागन उठकर बाहर आ गई और बोली—

बड़े बाबू तो दोपहर को हरिद्वार चले गये, कहते थे शाम को आऊँगा। अभी तक तो लौटे नही।

धनीराम ने सरसे पगड़ी उतारकर बीबी को देते हुए कहा—

आज तुम्हारे बेटे ने मेरे पुरखों की चिता पर लात मारी है।"

"क्यों, क्या हुआ ?" सुहागनने हैरानीसे पतिकी ओर देखते हुए पूछा।

"यह मत पूछो सुहागन, वह इज्जत जो मैंने वर्षों मे कमाई है, वह ईमानदारी, जिसे मै इस परदेशमे भी सीनेसे लगाये रखता हूँ, बुरे-से-बुरे समय में भी जिसे हाथ से नहीं जाने देना चाहता, उसने आज बीच बाजार उसे नीलाम करने की कोशिश की।"

"आखिर कुछ बताइये तो सही, मेरे हाथ-पाँव ठण्डे हो रहे हैं।"

धनीराम आँगन मे बरामदे से उतरने वाली सीढीपर बैठ गया, ऐसा लगता था मानो वह अन्दर से बिल्कुल टूट गया हो। उसकी पत्नी पति की पगडी गोद मे लेकर नीचे फर्श पर बैठ गई और उसके उतरे हुए चेहरे की ओर ध्यानसे देखने लगी। धनीराम बोला—

"मैं उसे अलग कर दूँगा। घर में नही रहने दूँगा। वह जानता है, मैंने कभी काले बाजार में कोई दवा नही बेची, किन्तु वह बदमाश दवा दुकान के अन्दर रखकर ग्राहक को कहता है बाजार से मँगवाकर देनी पड़ेगी, दाम ज्यादा लगेंगे। इतना नहीं जानता कि काले बाजार का माल खाने से खून काला हो जाता है, दिल काला हो जाता है, मुँह काला हो जाता है। मेरे पास अगर पिस्तौल होता तो उसे गोली मार देता।"

सुहागनने इधर-उधर देखकर कहा—
"इसमे उसका कसूर नही है ।"
"और क्या मेरा कसूर है ?" धनीराम गुस्से से लाल-पीला हो गया।
वह बडी-बडी आखे निकालकर अपनी पत्नीको घूरने लगा। ससुरकी आवाज सुनकर रामस्वरूप की बीबी कलावती अपने कमरेकी खुली खिड़की का पर्दा सरकाकर देखने लगी। रामअवतार की बीबी रसोई की खिड़की से झाँकने लगी।

सुहागन बोली—
"मै तो यह नही कहती, लेकिन इसमे कसूर कलावती का है। वह अपने पति से रुपये पैसो की बात करती होगी, इसलिए उसने कमाने का यह नया ढँग सोचा होगा।"

"चुप रह तू" धनीराम ने झिड़कते हुए कहा। "अपने लडके का कसूर पराई बेटी के सर थोपती है।"
सुहागन ने इधर–उधर देखा, और बडी बहू के कमरे की खिड़की का पर्दा सरका हुआ देखकर बोली—
"अन्दर चलिए, यहाँ आँगन मे शोर मचाने से क्या फायदा।"
इतना कहते-कहते वह उठ गई। धनीराम की डॉट सुनकर वह यह भूल गई थी कि उसकी गोद में पगड़ी है। उसके उठते ही, पगड़ी नीचे गिर गई। सुहागन का दिल धड़क गया। धनीराम ने पत्नी की ओर देखा। वह जल्दी से पगड़ी उठाकर उसकी मिट्टी झाडने लगी। उसका रंग उड़ गया। धनीराम अन्दर चला गया, सुहागन ने पीछे जाते हुए कहा:—
"मुझे माफ कर दीजिए।"

धनीराम ने पलटकर उसकी तरफ देखा और उसकी आँखों में तैरते हुए आँसू देखकर उसका दिल भर आया। उसने पत्नी के चेहरे को दोनो हाथों में लेकर कहा:—
"क्या हुआ सुहागन, तूने कोई जान कर तो पगड़ी नहीं फेकी।"

सुहागन का अन्तःकरण उसकी आँखों में छलक आया वह घुटी हुई आवाज मे बोली—

"जिस लड़के से आज आपको तकलीफ पहुँची है, उसे मैंने ही तो अपनी कोख से जन्म दिया है, अगर आप शान्ति से समझा दे, तो वह समझ जायेगा।"

गुस्सा करने से बात बिगड़ सकती है, यह सुनकर धनीराम को और गुस्सा आ गया, उसने अपनी पत्नी का चेहरा छोड़ दिया, और बोला—

"क्या बिगड़ सकती है, मै उसे गोली मार दूँगा।"

सुहागन ने कहा:—"ऐसी बुरी बात मुँह से मत निकालिए, वह आयेगा तब मै उसे डाट दूँगी, और यदि फिर ऐसी बात हुई, तो यही गोली मुझे मार दीजियेगा।"

छोटी बहू कहवे की प्यालियाँ और चायदानी लेकर कमरे में घुसी तो दोनो चुप हो गए। सुहागन ने बहू के हाथ से ट्रे लेकर चौकी पर रख दी, बहू बाहर चली गई। सुहागन ने प्यालियो मे कहवा डालते हुए कहा—

"मेरी कसम लगेगी अगर आपने अब रामस्वरूप को कुछ कहा तो।"

कोट उतारते हुए धनीराम बोला—

"जो कुछ कहना था, वह उसे दुकान पर कह आया हूँ।"

"कही, आपने मार-पीट तो नही की?" सुहागन ने चायदानी ट्रे में वापिस रखते हुए कहा।

"बदमाश को चाँटा मारने लगा था, तो भागकर डिस्पेन्सरी में घुस गया, हाथ ही नही आया।" और इतना कहते-कहते धनीराम मुस्कराया, "बड़ा बदमाश है, बचपन से ऐसा ही था। याद है, स्कूल से भागकर जब्बे मे चला जाता था। एक शिकायत आई तो मैं खोजने निकला। मुझे देखकर रेल की पटरी-पटरी भागकर, सीधा वजीरी चश्मे के साथवाले अपने दादा के बाग में जा घुसा। वहाँ काका की गोद मे घुसकर जा बैठा। अब भला काका के सामने मै क्या कहता? और हमारा काका भी वैसा ही है।

उसकी बदमाशी पर उसे पुचकारने लगा और मुझसे बोला, धनी, बचपन मे तू भी ऐसा ही था।"

सुहागन ने मजाक भरे स्वर मे कहा—

"इसमे क्या झूठ है, शादी के बाद तक आप ऐसे ही थे। काका के पास बैठे-बैठे, उठकर अन्दर रसोई मे घुस आते थे, और फिर .....।" इतना कहते–कहते सुहागन शर्मा गई।

"अरे इसमें मेरा क्या दोष था, वह तो तुम्हारी सुन्दरता थी, जो तुम्हे देखे बिना चैन नही लेने देती थी।" धनीराम ने प्यार की चुटकी ली।

"रहने दीजिये, अभी कुछ कहूँगी तो गुस्सा आ जायेगा आपको।"

कहवे का प्याला भरकर उसने धनीराम के सामने रख दिया।

धनीराम प्याला देखकर चौक गया—

"अरे, यह कहवा कहाँ से आ गया देहरादून मे?"

"दिल्ली से चरणदास ने भेजा है, उसका कोई दोस्त पाकिस्तान से आया था।"

"हाँ! चरनदास हमारा बड़ा ख्याल रखता है।"

"अपनी मौसी का ख्याल नहीं रखेगा, तो किसका रखेगा?" सुहागन बड़े गर्व से बोली।

धनीराम ने कहवे की चुसकी ली और बोला—

"काका को यह कहवा मत पिलाना, नही तो उसे पेशावर याद आ जायेगा।"

"वह तो बताना ही भूल गई, आज ज्यों ही पार्सल आया, बड़े बाबू सर हो गए। बार-बार बच्चो को बुलाकर पूछते थे, क्या आया है पार्सल मे और बच्चे भी बड़े ऊधमी हैं, मेरी आँख बचाकर पार्सल ही उठाकर बड़े बाबू के पास ले गए। बड़े बाबू मुझे पुकारकर कहने लगे, 'सुहागन बेटा! कहवे की प्याली तो पिला दो, मेरे देश की चीज क्यों छिपा रही हो।' अब मैं क्या करती, कहवा बनाकर दिया तो कहने लगे, 'अहा! मेरा पेशोर।' वो तो अपना देश भूलते ही नही, ऊपर से एक मुश्किल और

हो गई। रामस्वरूप और रामअवतार के बच्चे पेड से पत्थर मारकर आलीचिया उतार रहे थे।

मुन्नेने एक आलीचियो का गुच्छा लाकर उनके सामने रखा और कहा—

'बले बाबू देखो °जीची।' बस फिर क्या था, बड़े बाबू गुजरे बागो की बहार देखने लगे, बच्चो से कहने लगे—

आजकल आलूचो का मौसम होगा, मुन्ना मेरे वतन मे पाव-पाव भर का अलूचा लगता था, मेरे बाग मे।

रामअवतार का बेटा नन्हा भी उनकी गोद में जा बैठा, और तोतली जबान से पूछने लगा—

'वह *आलू इतना बड़ा?'

इस नन्हे ने अपने नन्हे नन्हें हाथो से ऐसी नकल उतारी कि बस मेरी भी हँसी निकल गई, पर बड़े बाबू नन्हे से कहने लगे—

आडू? वह तो सेर भर का होता था बेटा। एक बार मैने फलों की प्रदर्शनी मे पाँच सेर का एक आडू भेजा था। मुझे सरकार ने इतना बड़ा सर्टिफिकेट दिया था। आह! क्या देश था, कैसे लोग थे।

इतना कहते-कहते बड़े बाबू उठ खड़े हुए और मुझे पुकारकर कहने लगे, सुहागन बेटा, मै हरिद्वार जा रहा हूँ शाम को लौट आऊँगा।

मैं सीढियों पर घूँघट निकाले बैठी थी, क्या कहती।" इतना कहकर सुहागन चायदानी से 'तिकौजी' उतारकर प्याले में कहवा उडेलने लगी।

धनीराम सारी बात सुनकर कुछ बोला नहीं, उसने प्याला उठाकर एक तरफ रख दिया। इतने में बाहर से आवाज आई—

"सुहागन बेटा! पानी का एक लोटा तो भेज दे।"

"बाहर बड़े बाबू आ गये।"

इतना कहते-कहते धनीराम उठ खड़ा हुआ। और बाहर निकल गया। आँगन में बिछी चारपाई पर पेड़ाखान बैठा था, उदास निगाहों से जमीन की ओर देख रहा था।

---

° अलीची * आडू

"राम राम काका।" धनीराम ने बाहर जाकर अपने बाप के पास बैठते हुए कहा। पेडाखान "राम राम" कहकर चुप हो गया। धनीराम समझ गया कि आज काका पर उदासी का गहरा असर है। सुहागन पानी का लोटा और तौलिया लेकर घूँघट निकाले ससुर के सामने आ खड़ी हुई। पेडाखान ने हाथ-मुँह धोकर, तौलिये से मुँह पोछते हुए कहा—

"जरा-सा कहवा पिला दे बेटा! थक गया हूँ। आज तो हर की पेडी पर भी जाकर शान्ति नहीं मिली।"

"हरद्वार गये थे काका?" धनीराम ने पूछा।

पेड़ाखान 'हाँ!' कहकर पास रखे डब्बे से सूखा तम्बाकू निकालकर मलने लगा।

"मेरे लिए क्या लाये हो।" धनीराम ने फिर बात छेड़ी।

"मै क्या लेने गया था।" पेड़ाखान ने फिर चिढ़कर कहा।

धनीराम ने बाप की तरफ देखा और कहा—

"प्रसाद।"

"हाँ प्रसाद, पर लाया नहीं।" काका ने जवाब दिया।

"क्यो नही लाये?" धनीराम ने पूछा।

"मेरा जी नहीं चाहा, गंगा मइया से नाराज होकर आया हूँ।"

पेड़ाखान ने बात समाप्त करने के लिए कहा।

धनीराम बाप के मिजाज से परिचित था। उसने बात का सिरा पकड़ लिया, और कहा—

"वाह काका! जब पेशावर में थे तो रोज कहते थे, कि अब पोते बड़े हो गये हैं, अब तो संन्यास लेकर हरिद्वार जा बैठने को जी चाहता है और आज हरिद्वार के करीब आ गये हैं, तो गगा मइया से नाराज हो गये। ऐसा क्यों?"

पेड़ाखान तम्बाकू को चिलम पर रखते हुए बोला—

"यह कैद है, कैद।"

"कैसी कैद काका ? क्या आदमी इतनी खूबसूरत जगह पर कैद हो सकता है ?"

"तू नहीं समझता, समझ भी नहीं सकता।"

इतना कहकर पेड़ाखान फिर चुप हो गया। परन्तु धनीराम बात को इस तरह छोड़नेवाला नहीं था। वह जरा खिसककर दादा के और करीब आ बैठा और बोला—

"नहीं समझता, तो समझाओ।"

"अब तुम बच्चे थोड़े हो धनी, जो तुम्हें समझाऊँ, भगवान की कृपा से पोतो वाले हो गए हो तुम।"

बाप-बेटे की बातें सुनने के लिए सुहागन घूँघट निकाले हाथ में साग की टोकरी लेकर सीढ़ी पर आ बैठी थी। हाथों से साग चुन रही थी, और ध्यान बातों की ओर था।

रामअवतार ने दुकान की चाबियाँ लाकर माँ के सुपुर्द कीं और दादा के पास आ बैठा। रामस्वरूप अभी नहीं आया था। उसकी बहू कलावती अपने कमरे में कंघी-चोटी कर रही थी। छोटी बहू कौशल्या बार-बार रसोई की खिड़की से उचक उचककर दादा ससुर और ससुर की बातें सुन रही थी। यह सब जानते थे कि अभी थोड़ी देर में दादा गुस्से से भरकर हकलाने लगेगा और कहेगा—"धनी ! तू तो—मैं, मैं, तुझे कुछ नहीं कहता। अब तू दादा कहलाने लगा है।" पर आज बुड्ढे का मिजाज सच-मुच खराब था। धनीराम उसे ज्यों-ज्यों गुस्सा दिलाने की कोशिश करता, पेड़ाखान चुप हो जाता। अन्त में धनीराम उठकर बाप की गोदी में जा बैठा और बोला—

"मुझे समझाओ काका ! यह घर है, गृहस्थी है, परिवार है, इतना खूबसूरत शहर है, फिर यह कैद कैसी है।"

बूढ़े को बूढ़े की गोद में बैठे देखकर सब हँस पड़े। सुहागन ने दुपट्टा अपने मुँह में ठूसकर कहकहा दबा लिया, कहीं ससुर उसकी आवाज न सुन ले। बेटे को अपनी गोद में देखकर बूढ़े पेड़ाखान का दिल ममता

से भर गया। उसे बूढ़ा धनीराम सचमुच बच्चा मालूम होने लगा।

उसने प्यार से धनीराम के सिर पर हाथ फेरकर कहा—

"धनी, यदि आज तेरी माँ जीवित होती, तो तेरे लाड़ को देखकर उसकी छातियो मे दूध उतर आता।"

इतना कहते-कहते बूढ़े की आँखो मे आँसू उतर आये, और इस बात को सुनकर सब चुप हो गये। किन्तु धनीराम सचमुच बच्चो की तरह शर्मा कर, बाप की गोद से अलग होकर बाहर भाग गया। उसे भागते देखकर पेडा-खान हँस पड़ा—"बदमाश मेरे साथ मजाक करता है।"

दादा को खुश देखकर, सब खुश हो गये। खूँटे पर बँधी गाय रँभाने लगी। उसका बछड़ा माँ-माँ पुकारने लगा। पेड़ाखान ने बछड़े की रस्सी खोलते हुए कहा—

"सुहागन, बर्तन ला, आज मै दूध दुहता हूँ। ग्वाला तो जाने कब आयेगा, बछड़ा भूखा मालूम होता है।" और साथ ही उसने पुकारा, 'नन्हे-मुन्हे' आवो, दूध की धारे ले लो।"

रामस्वरूप और रामअवतार के बच्चे भागते हुए बाहर आ गये, दोनो इस बात पर मचलने लगे कि पहले हम गाय की धारे लेगे। लेकिन पेड़ाखान ने उन्हे पुचकारते हुए कहा—

"नहीं बेटा, पहले बछड़ा फिर तुम दोनों। उसका हक पहले है। वह उसका बेटा है। यह ममता की मारी गाय दूध उसी के लिए देती है, पर पी जाते हैं हम। पहले इसे पी लेने दो।"

गाय अपने बछड़े को चाट रही थी, और बछड़ा मजे से दूध पी रहा था।

रात भीग चुकी थी, चाँद अपनी किरणे समेटकर मसूरी की पहाड़ियो की ओट मे जाकर छुप गया था। देहरादून का मुहल्ला कर्णपुर अन्धकार मे डूब गया था। घरो के दरवाजे बन्द थे, खिड़कियो से भी रोशनी नहीं आ रही थी। म्युनिसिपैलटी की बत्तियाँ जल रही थी, लेकिन इनकी रोशनी भी उदास मालूम हो रही थी। कर्णपुर की मोड़ पर लेटनेवाले कुत्ते बड़े जोर से कभी-कभी भौक कर चुप हो जाते थे। गली में एक कुत्ता

भूं. भू . भू औ . औ . करके बड़े जोरों से रोने लगा।

पेड़ाखान अपनी चारपाई पर करवटें बदल रहा था। कुत्ते के रोने की आवाज सुनकर उसे कुछ शक हुआ, वह चारपाई से उठने लगा। यह कम्बख्त हमारे घर के सामने बैठा क्यों रो रहा है। वह उठनेवाला था कि कुत्ते की रोने की आवाज बन्द हो गयी। पेड़ाखान फिर चारपाई पर पड़ रहा। अभी आँख भी झपकने न पाई थी कि भौं. भौं.. की आवाज फिर आने लगी। उसे गुस्सा आ गया कि कुत्ते का बच्चा बदशगुनी फैला रहा है। उसने उठकर दरवाजा खोला और देखा ठीक गली की बत्ती के नीचे कुत्ता "रहमत मंजिल' की तरफ मुँह उठाये रो रहा है।

पेड़ाखान ने उसकी तरफ देखा और गुस्से से दुतकारने लगा. लेकिन कुत्ता बजाय भागने के एक कदम आगे बढ़ा और ज्यादा जोर से भूं . भू .. औ . औ करके रोने लगा।

कुत्ते ने अपना मुँह आसमान की तरफ कर लिया। पेड़ाखान ने एक पत्थर उठाकर मारा. वह पत्थर ठीक बत्ती पर लगा, बत्ती टूट गई। गली मे अन्धेरा भर गया, और कुत्ता दुम दबाकर भाग गया। पेड़ाखान को लौटते हुए दरवाजे की चौखट से ठोकर लगी। वह गिरते-गिरते सँभल गया और अपनी चारपाई पर जाकर बैठ गया, फिर सोचने लगा. यह कुत्ता भी अजीब जानवर है, इसे आनेवाली बुरी घटनाओं की तस्वीर पहले नजर आ जाती है।

आज से ठीक चालीस वर्ष पहले जब धनीराम ८-९ वर्ष का था तो अमावस की एक रात मे इसी तरह कुत्ता रोया था, और धनीराम की माँ उठकर खिड़की से झाँकी थी। उसने कुत्ते को दुतकार दिया. और पेड़ाखान से बोली "यह काला कुत्ता रोज रात को यहाँ रोता है न जाने किसकी मौत आनेवाली है ?" पड़ोस मे एक पंडित जी बीमार थे। पेड़ाखान ने कहा—" वह बेचारा चल बसेगा " लेकिन ऐसा नहीं हुआ। पंडित जी तो अस्पताल मे जा दाखिल हुए और जीते-जागते लौट भी आये, परन्तु धनीराम की माँ चालीस दिन के अन्दर ही भगवान के घर

चली गयी। उसके बाद कभी कुत्ता नही रोया और आज कुत्ते के रोने की आवाज पेडाखान के कानो मे पड़ी। इसीसे उसका ध्यान पिछली बातो की ओर चला गया। पत्नी की मृत्यु का पूरा चित्र उसकी आँखो के सामने घूम गया। अब चालीस दिन के अन्दर पेडाखान भी धनीराम की माँ के पास चला जायेगा। उसने भी कुत्ते को दुतकार दिया है, और पड़ोस मे अब तो कोई बीमार भी नही, तो बस अपनी बारी है। बहुत अच्छा है, यह वक्त मौत का ठीक है, धनी दादा बन गया है, मैंने अपनी उमर खा ली है, सुख है, शान्ति है, धनी के सारे बेटे अच्छे हैं, नेक हैं, मेरा नाम रोशन करेंगे आज शायद हरद्वार भी इसीलिए गया था। चलो, सब काम खत्म हो गये, कुछ बाकी नहीं रहा। हाँ, अगर मरने से पहले एक बार "पेशोर" देख लेता तो बस।

मातृभूमि की याद आने पर उसने एक लम्बी आह भरी, तम्बाकू सुलगाने के लिए चारपाई से उठ खड़ा हुआ। दूर चौक के घटाघर ने एक, ..दो,...तीन, . चार बजा दिये।

पेड़ पर से एक मुर्गा छलाँग मार कर आँगन मे आ गया और गर्दन उठाकर बोलने लगा कुकड़ूँ कूँ–कुकड़ूँ कूँ ..। पेड़ के नीचे बँधी हुई गाय ने अपने कान फटफटाये और उठ खड़ी हुई, अपनी पीठ पर उसने दो-चार बार दुम पटकी और बें...बे करके बोलने लगी। अन्दर का कमरा खुला और सुहागन बाहर निकली।

पेडाखान अब हुक्का गुडगुडा रहा था। मुर्गा कुड कुड़ करता हुआ बरामदे की सीढ़ी पर चढने लगा। सुहागन ने बरामदे मे रखी एक बोरी में से मुट्ठी भर चने निकाल कर आँगन में डाल दिये, और बाँस की सीढ़ी लगा कर वह छप्पर पर चढने लगी। पेड़ाखान ने अपनी बहू को देखकर कहा–

"सुहागन, आज रात भर यहाँ कुत्ता रोता रहा है। मेरे दिन अब पूरे हो गये हैं। तूने मेरी बड़ी सेवा की है, मै तुझे कुछ नही दे सका। अगर कभी कुछ कहा-सुना हो, तो माफ कर देना बेटा।"

सुहागन ने छप्पर पर से हरी मकई के डण्ठल नीचे फेंकते हुए, घूँघट

की आड से ससुर की ओर देखा। सामने चिलम मे आग सुलग रही थी, और कश लगाने से भडक उठती थी। पेडाखान जलते हुए तम्बाकू की तरफ देख रहा था, धुंए और अन्धेरे मे उसे ससुर का चेहरा दिखाई नही दिया, वह कुछ बोली नही।

उसने नीचे उतरकर डण्ठल गाय के आगे डाल दिये, और फावड़े से गाय का गोबर इकठ्ठा करने लगी। पेडाखान ने बाहर अलगनी पर टॅगी तौलिये को खीचा और बोला—

"बेटा, मैं नहर पर नहाने जा रहा हूँ और वहा से मन्दिर चला जाऊँगा।"

इतना कहकर पेडाखान दरवाजे की कुडी खोलकर घर से बाहर निकल गया। सुहागन क्षण भर वहीं खड़ी कुछ सोचती रही, उसने ससुर का बिस्तरा उठाया और लपेटकर बड़े सन्दूक पर रख दिया। बरामदे के साथ सीढियों के करीब पूरब की ओर बने हुए कमरो की तरफ जाकर उसने दरवाजा खटखटाया—

" छोटी बहू, छोटी बहू "

अन्दर से खॉसने की आवाज आई और सुहागन बोली—

"अच्छा बिटिया जग गई है. फिर उसने दूसरे दरवाजे पर जाकर बड़ी बहू को पुकारा, लेकिन वहॉ से कोई आवाज नही आई, सुहागन ने कहा—

"जग जा बिटिया, अब दिन निकल आया है, यह वक्त सोने का नहीं है।"

छोटी बहू ने दरवाजा खोला। बाहर सर्दी का बड़ा जोर था। उसने अपना दुपट्टा दोहरा करके सिर के ऊपर लपेट लिया, और बाहर आकर अपनी सास के चरण छू कर अन्दर रसोई घर मे चली गई। सुहागन जब अपने कपड़े कन्धे पर डालकर स्नान घर मे जाने लगी, तो अभी तक रामस्वरूप के कमरे का दरवाजा बन्द था।

उसने फिर दरवाजा खटखटाकर कहा—

"हाय री बहू। अब जागो भी, आखिर कब तक सोओगी तुम ?"

और कहकर चली गई । अन्दर रामस्वरूप ने कलावती को झझोड़ कर कहा—

"बाहर माँ बुला रही है।"

कलावती ने करवट बदल कर कहा -

"माँ तो सोने ही नहीं देती. ओहू, रात को बारह बजे तक चौके में मरना पड़ता है और मुँह अन्धेरे ही पुकारने लगती है। ऐसी जिन्दगी से मौत भली।"

रामस्वरूप ने फिर उसे झंझोड़ा और बोला—

"घर के मालिकों को इसी तरह काम करना पड़ता है कला, इसमें बुरा मानने की क्या बात है।"

इस पर कलावती अपना लिहाफ फेंक कर खड़ी हो गई ।

"घर की मालकिन ! मैं घर की मालकिन हूँ ? मेरे हाथ में एक कंगन तक नहीं।"

रामस्वरूप बोला—

"यह तुम्हारे नंगे-बुच्चे हाथ देख कर दुःख तो मुझे भी होता है, लेकिन क्या करूँ, हम रिफ्यूजी हैं, और वह भी गरीब केमिस्ट।"

कलावती बिगड़ गई।

"ऐसी बात न कहिए, वह कपूर भी तो रिफ्यूजी है, और यही केमिस्ट का काम करते हैं मगर उनकी बहू सोने से लदी रहती है।"

रामस्वरूप ने कहा—

"वह तो ब्लैक में दवायें बेचते है, काले बाजार का सोना है वह सारा। हमारे बाबूजी को काले बाजार से चिढ है। कल मैंने जरा सी हिम्मत की थी, तो मुझे मारने को दौड़े थे। इस घर में रहकर काले बाजार में धंधा नहीं किया जा सकता, वरना मैं तो लाखों कमा सकता हूँ।"

कलावती पति के जरा पास आकर बोली—

"तो इस घर को छोड़ दीजिये न।"

"ऐसा मत कहो कला, अगर काका ने सुन लिया तो जान से मार डालेंगे दोनों को ।"

अभी रामस्वरूप नही जगा और राम अवतार भी सो रहा है ? धनीराम बाहर आँगन मे खड़ा दातून हाथ में लिए बड़े बेटे के कमरे के बन्द दरवाजे को देखकर अपनी छोटी बहू से पूछ रहा था ।

छोटी बहू अपने जेठ के दरवाजे की सीढ़ियो पर पानी का लोटा रख कर अपने कमरे मे जा घुसी, और राम अवतार के चेहरे पर अपने ठंडे-ठंडे हाथ फेरकर उसे जगा दिया। वह मुस्कराकर उठ बैठा ।

"क्या है ! कोशी तूने तो मुझे परेशान कर दिया ।"

वह धीरे से बोली—

"छोटे बाबू जी बाहर बैठे आप को पुकार रहे हैं ।"

सुहागन स्नान घर से "हरे राम-हरे राम" कहती हुई निकली ।

धनीराम दातुन फर्श पर झटकते हुए बोला—

"अरे। यह तू किसका नाम ले रही है ।" छोटी बहू सास-ससुर के मजाक को सुनकर शर्मा गई और सीधी रसोई घर मे जाकर दही बिलोने लगी। सुहागन ने माथे पर बल डालकर अपने पति की तरफ देखा और मन ही-मन मुस्कुराकर अन्दर चली गई। रामअवतार ने अपने कमरे की सीढी पर बैठते हुए कहा—

'राम राम बाबू,"

"राम, राम ।" धनी बोला, "जरा अपनी माँ को समझाओ तो, रोज कृष्ण भगवान की मूर्ति लेकर उसकी आरती उतारने लगती है, और हम जिन्दा देवता मौजूद हैं, हमारी आरती क्यो नही उतारती ?"

रामस्वरूप, यह बात सुनकर न रह सका. वह भी बाहर निकल कर अपने कमरे की सीढी पर बैठ गया, और लोटे से दातून निकालते हुये दबी आवाज मे बोला—

"हिन्दुस्तान मुर्दापरस्त देश है न, जीते जी पानी को नहीं पूछते और मरने पर श्राद्ध करते हैं ।"

धनीराम ने बेटे की ओर देखा, कुछ बोला नहीं। इतने में तरकारी का टोकरा लिये बिशनदास ने प्रवेश किया—

"यह क्या बहस हो रही है बाप-बेटे में ?"

टोकरा उतारने में मदद करते हुए धनीराम ने कहा—"अरे कुछ नहीं बिशन, जरा यों ही मौज आ गई थी, बच्चों से हँसी-मजाक कर रहा था।"

"भाभी, ओ भाभी !"

बिशनदास ने धनी की पत्नी को पुकारा—

रामअवतार ने कहा—

"चाचा, अभी तो मा पूजा कर रही होगी।"

"अच्छा तो मै यह टोकरा रखे जाता हूँ।"

इतना कहकर बिशन दास जाने लगा तो धनीराम ने कहा—

"अरे यार बिशन ठहर, चाय पी ले।"

"नहीं भाई, मुझे देर हो रही है। अभी और ग्राहकों को भी तरकारी पहुँचानी है।"

इतना कहकर बिशन जाने लगा तो रामअवतार की पत्नी हाथ मे छाछ का गिलास लेकर बाहर निकली। रामअवतार समझ गया बोला—

"चाचा, यह तुम्हारी बहू छाछ लाई है, यह तो पी लो।"

"अरे बेटी! तू रोज तकलीफ करती है। सुनो—यह रामअवतार तुझे कुछ कहता तो नहीं, यह परेशान तो नही करता।"

वह बेचारी घूँघट निकाले खड़ी रही, कुछ बोली नहीं। रामअवतार ने कहा—

"चाचा तेरे पास यह मेरी शिकायत नही करेगी।"

"और किसके पास करेगी ? बेचारी के माँ-बाप तो पाकिस्तान के हवाले हो गये। अब तो मैं ही इसका मैका हूँ। इसका बाप गगाराम मेरा कैसा दोस्त था, घंटाघर के आगे से जब भी गुजरता, मेरी दुकान पर घण्टा-आध घण्टा बैठकर ही जाता।

पूछती। अरे हां, बिरादरी के चौधरी की बेटी है न।"

धनीरामने कहा—" यह बात नहीं बिशन, वह तुझे मेरे रिश्ते में मानती है। इसीलिए घूँघट निकालकर रहती है तेरे सामने नहीं आती।"

"अरे हां यार, वह तो मैं भूल ही गया, कि मैं उसका चाचा ससुर हूँ।" इतना कहते-कहते बिशनदास ने जेब में चार नाशपातियां निकालीं और इधर-उधर देखकर कहा—

"वह काका तो नहीं घर में ?"

" नहीं। "

" ले बेटा, यह पेशावर का मेवा है, अपनी जेठानी से बांट कर खाना. हां।"

इतना कहकर बिशनदास बाहर चला गया। छोटी बहू नाशपातियों लेकर अन्दर गई और अपनी सास के सामने रख दीं। वह पूजा की आल-मारी के सामने सोने के ठाकुर रखे, उनकी पूजा कर रही थी। उसने आँखे खोलकर इशारे से अपनी बहू से पूछा. "क्या है ?" बहू ने धीरे से कहा—

"बिशन काका दे गये हैं।"

सुहागन ने फलों को उठाकर भगवान को अर्पण कर दिये और छोटी बहू को उँगली से एक तरफ इशारा करके, ऊँची ऊँची आवाज में श्लोक पढ़ने लगी। छोटी बहू ने उस तरफ देखा, तो रामनारायण अभी तक सो रहा था। छोटी बहू ने जाकर उसे पुकारा, "नारायण! नारायण!" फिर झकझोरा, परन्तु वह करवट बदल कर सो गया। फिर झकझोरने पर तकिया मुँह के नीचे लेकर पेट के बल सो गया। इतने में रामअवतार अन्दर आया। बड़े कमरे में माँ को पूजा करते देखकर लौट जाने ही वाला था कि उसकी नजर रामनारायण पर पड़ी जिसे उसकी पत्नी जगाने की कोशिश कर रही थी। रामअवतार ने इधर-उधर देखा और पानी का गिलास उस पर उडेल दिया।

रामनारायण हड़बड़ा कर उठ खड़ा हुआ और चिल्ला कर बोला।

"भाभी !" फिर रामअवतार की ओर देखकर बोला, भैया ! यह क्या ?"

"यह इलाज है न जानेवालों का, आज कालेज नहीं जायगा तू ? दोपहर हो गई है और सो रहा है।"

नारायण ने भिड़ककर कहा।

"आज छुट्टी है, नहीं जाता कालेज।"

लेकिन रामअवतार उसका जवाब सुनने से पहले ही बाहर निकल गया। नारायण माथे पर बल डालकर बकता-झकता माँ के पास चला गया।

"देखा माँ। सोये हुए पर पानी उड़ेल दिया भैया ने, अब अगर मुझे सर्दी लग गयी, जुकाम हो गया तो क्या होगा ?"

सुहागन ने बडी-बड़ी आँखें निकालकर छोटी बहू को घूर डाला, रामनारायण को गर्दन हिला-हिला कर तसल्ली देने लगी। उसके श्लोकों की गति घरकी परिस्थित के साथ बदलती-बदलती रहती थी। गृहस्थियों की पूजा कुछ इसी तरह की होती है। एक गृहस्थ जीवन खुद ही पूजा है।

गृहस्थ जीवन एक कठिन व्रत है, और उसपर भगवान की उपासना एक कठिन मार्ग। पर चलना तो है ही, मार्ग कैसा भी हो। सुहागन रोज सोने के ठाकुर रख उनकी आरती उतारती थी, भोग लगाती, उनको रिझाती थी।

यह काम कोई घंटा भर रोज चलता था, लेकिन इस घंटे के अन्दर घर के काम ज्यों के त्यों चलते रहते। बहुये रसोई घर मे दुकान पर जाने वालों के लिये नाश्ता बना डालती, दोहपर के खाने का प्रबंध कर देती, दही बिलो लेतीं, और इस बीच मे सब मरद नहा-धो कर रसोई मे नाश्ते के लिए आ बैठते और फिर सुहागन सब को नाश्ता परोस देती।

रामनारायण की छुट्टी थी, वह किताबें लेकर छत पर जाने के लिए बाहर निकला, तो रामअवतार ने देखा और रामस्वरूप से कहने लगा—

"देखा भैया, ऐसे पढ़ने जा रहा है जैसे पास ही हो जायेगा।"

"और क्या, आज तक कभी फेल हुआ हूँ ?" कह कर छत पर जाने लगा।

अवतार बोला—

"अब के होगा तो फेल," धनीराम ने कहा "होने दे फेल, क्या होता है, अभी तो मै जिन्दा हूँ। बीस साल भी फेल होगा, तो पढाऊँगा। एक बार डाक्टर बना कर ही रहूँगा अपने बेटे को।"

रामनारायण ने यह वाक्य सुन लिया और उसका सीना गर्व से फूल गया।

छत पर पहुँच कर उसने इधर-उधर देखा। सामने गली के पार राय-साहब का मकान था। छत पर एक कुर्सी पडी थी। सामने मेज पर एक पुस्तक खुली थी, जैसे अभी-अभी कोई पढता हुआ कहीं जरूरी काम से उठ कर गया है।

रामनारायण ने छत की मुन्डेर पर अपनी किताब खोलकर रख दी, और एक पत्थर उठाकर सामने राय साहब के घर की तरफ फेंक दिया। पत्थर छत के ऊपर बने हुये कमरे के दरवाजे से टकराकर गिर पड़ा। नारायण अपनी मुण्डेर की आड मे बैठकर झरोखो से देखने लगा। गार्गी पत्थर की आवाज सुनकर बाहर आ गई। नारायण भी इधर-उधर देखकर मुण्डेर की आड से बाहर निकल आया। दोनो एक दूसरे को देखते रहे।

गार्गी रायसाहब लक्ष्मीदास की इकलौती बेटी थी। रायसाहब का घर मुहल्ले मे सबसे बड़ा था और रायसाहब मुहल्ले में सबसे बड़े थे। रायसाहब की बेटी गार्गी एफ० ए० मे पड़ती थी और छत पर मुँह अँधेरे आ जाती थी। कभी-कभी ऊपर वाले कमरे मे भी सो जाती थी।

बड़े लोगों को अपने सन्तानों की शिक्षा की चिन्ता बहुत होती है। शिक्षा उन लोगों को अपनी सन्तानो से अधिक प्यारी होती है। उनके बच्चे पढ-लिखकर बडे आदमी बनेगे।

रायसाहब लक्ष्मीदास की भी यही इच्छा थी कि उनकी बेटी पढ-लिखकर कुछ बन जाय, क्यो कि यही उनका बेटा था और यही उनकी बेटी, एक मात्र सन्तान। और गार्गी यह सोच रही थी कि नारायण डाक्टर बन

जायेगा तो मैं अपने-आप कुछ बन जाऊँगी। रामनारायण और गागा, दोनो ने अपनी ज़िन्दगी का भविष्य पहले ही से बना लिया था, और उसकी शुरुआत थी—यह प्यार की मंजिल।

बड़ी बहू कलावती जब रसोई घर मे घुसी तो छोटी बहू लगभग नाश्ता तैयार कर चुकी थी। सुहागन पूजा का आखिरी श्लोक पढ रही थी। देर से जागने पर सास की डाट पड़ेगी, यह सोचकर कलावती अपनी देवरानी से बोली,—

"मै उपले थापने जा रही हूँ, सुबह का गोबर यो ही इकट्ठा किया रखा है।'

अचानक छोटी बहू को ध्यान आया कि आज तो उसी की बारी थी। और सचमुच उसे बुरा लगा, कि उसका काम रह गया। उसने अपनी जेठानी से कहा—

"यहा चौके मे बैठ जाओ, मै उपले थाप लेती हूँ।"

लेकिन बड़ी बहू बाहर जा चुकी थी। सास की झिड़की से बचने की एक ही सूरत थी, गाय की सेवा। और गोबर थापने से गाय और घर दोनों की सेवा हो जाती थी। गाय का गोबर सिमट जाता और घर के लिए ईंधन बन जाता।

पूजा समाप्त करके जब सुहागन रसोईघर में आई, तो उसने छोटी बहू को ही वहा पाया—

"बड़ी बहू अभी जागी नहीं क्या?"

"वह तो कबसे उपले थाप रही हैं माजी" छोटी बहू ने सास को खुश करने के लिए एक छोटा-सा झूठ बोल दिया।

उपले थाप रही है, सास कुछ सोचने लगी। और फिर बहू को इतना कहकर कि तुम नाश्ता परोसना शुरू करो, मै जरा रामस्वरूप से अभी कुछ कहकर आती हूँ, वह बाहर चली गई।

घर में कल से गडबड चल रही थी, यह तो छोटी बहू से छिपा नहीं था पर बात क्या है, यह वह नही जानती थी। और यह जानने की उसने कोशिश भी नहीं की। वह अपने काम मे लगी रही, लेकिन बडी बहू कलावती की बडी बड़ी आँखे घर के हर कोने मे लगी रहती, फिर भला उसके कमरे मे घुसती सुहागन उसे कैसे नजर न आती।

बड़ी बहू ने देखा, सासने कमरे मे घुस कर दरवाजा भेड दिया। वह सोचने लगी, आज बात क्या है।

अन्दर रामस्वरूप खूँटी पर से कोट उतार रहा था। उसने माँ को देखा तो उसका दिल किसी परेशानी के कारण घबड़ा गया। माँ कमरे मे बहुत कम आती हैं, आज कोई खास बात होगी। किन्तु दूसरे ही क्षण उसे उत्तर मिल गया। कल दुकान पर जो कुछ हुआ था, उसी के बारे मे माँ कुछ समझाने आई होगी, और क्या। यह सब लोग जमाने से हट कर चलनेवाले हैं, नफा-नुकसान पर ध्यान ही नही देते।

सुहागन ने कहा—

"बेटा! कल तुमने बाप के दिल को दुख पहुँचाया, उसे सुनकर मै काँप गई हूँ। भले लडके क्या कभी ऐसा करते ह ? खानदान में जो रीति चली आई है, उससे हटकर चलनेवाला विद्रोही कहलाता है।"

"मैने क्या किया है माँ ?" रामस्वरूप ने अनजान बनकर माँ से पूछा।

"अभी तूने कुछ किया ही नहीं। जो बात हमारे घर में कभी नहीं हुई, जिसे तेरे बाप दादों ने कभी नहीं सोचा, तू इसे कल करने चला था ?"

"अधिक पैसे मागने पर इतना हुल्लड़ हो गया" रामस्वरूप खुद फूट पड़ा :—

"यह बात मेरी समझ मे नहीं आती हम दूकानदार हैं, अधिक से अधिक रुपया कमाना, फायदा उठाना हमारा काम है। इस कर्त्तव्य मे मुँह मोड़ना मै पाप समझता हूँ। हमारे साथ के दूकानदारो के पास मोहरें हैं। घर में दो-दो, चार-चार नौकर हैं। सोने और जवाहरातों से उनकी औरते

लदी रहती हैं। परन्तु हमारे घर मे सारा काम औरतो को करना पड़ता है। और मेरी माँ के हाथो मे कोई गहना नहीं।"

"बेटा! औरतो का सिंगार गहना नही होता, घर का सुख और शान्ति होती है। जिस घर में सुख नही, वह श्मशान के समान है। धन आदमी सीने पर रख कर थोड़े ही ले जाता है। चार दिन की जिन्दगी मे किये हुये शुभ कर्म ही पीछे रह जाते हैं। अपनी सारी जिन्दगी मे तेरे पिता को इतना परेशान कभी नही देखा था, जितना वे कल थे। मैं हाथ जोड़ती हूँ ऐसा काम फिर कभी मत करना, नहीं तो जैसा करेगा वैसा भरेगा। किसी दूसरी दुनिया मे नहीं, इसी दुनिया मे।"

"पर माँ ... ...।"

रामस्वरूप और कुछ कहना चाहता था, किन्तु मा ने उसे टोक दिया और कहा—

"मै कोई बहस सुनना नहीं चाहती, पाप पाप ही होता है, तर्क का सहारा लेने से पापी का पाप न तो छिप सकता है, और न पुण्य ही बन सकता है। अगर तूने फिर ऐसा किया, तो मै ज़हर खा कर सो रहूँगी।"

इतना कहकर सुहागन बाहर निकल गई। बड़ी बहू खिडकी के पास कान लगाकर सुन रही थी। सुहागन ने उसे देख लिया और बोली—

"बेटा! तू यहा क्यो खड़ी थी, अन्दर आ जाती तो समझाने में मुझे सहारा तो देती।"

बड़ी बहू कुछ बोली नही, और उपले थापने चली गई।

सुहागन ने धनीराम को रसोई में बैठे देखा तो मुस्कराने लगी।

धनीराम—"कहा थी मै कब से राह देख रहा हूँ, ला नाश्ता दे दे।"

सुहागन ने कहा—नाश्ता तो तैयार है। जरा रामस्वरूप के कमरे मे गई थी। आज महन्तों का जुलूस निकलनेवाला है, उसे कहा है, शाम को जल्दी आ जाए, तो बच्चों के साथ हम भी जुलूस देखने जायेंगी।

धनीरामने कहा—वाह ! तू उसके साथ क्यो जायेगी ? उसे कहो, वह अपनी बहू को लेकर जाय। मै अपनी बहू को लेकर जाऊँगा। जरा मेरी *मुशदी-लुंगी निकाल दें और नये कपड़े भी। शाम को खूब 'टस' निकाल कर मै तुझे लेकर जाऊँगा।

"और घर मे कौन रहेगा ?" सुहागन ने पूछा।

धनीराम—"काका घर पर रहेगे, भला वह जुलूस देखने क्या जायेगे। बस, हम दोनों चलेगे, हाथो मे हाथ लेकर।" धनीराम ने जरा छेड की।

सुहागन शर्मा गई और बहू की तरफ देखा, जो घूँघट निकाले अपने ससुर के सामने थाली रख रही थी। बोली—

"बूढे मुँह मुहासे, देखने चले तमाशे।"

धनीराम ने कहा—बुढापा कहाँ है भाग्यवान, अभी तो मै साठ बरस का भी नही, और मर्द तो साठे मे पाठा होता है।

बहू पानी का गिलास लेने बाहर गई, तो सुहागन ने मीठी झिड़की देते हुए कहा—

"शर्म करो, बहुएँ आपकी बाते सुन कर क्या सोचती होंगी ?"

"यही न, कि हमारा ससुर अब भी हमारी सास पर जान छिड़कता है, उनके पति भी तो इसी तरह जान छिड़कते हैं।"

"या बेशर्मी, तेरा आसरा।"

सुहागन इतना कहकर आलुओं की देगची चूल्हे से उतारने लगी। छोटी बहू भी रसोई मे आ गई, और बड़ी बहू भी घूँघट निकाले सास के पास बैठ कर धीरे से बोली—

"उनका नाश्ता दे दीजिये कमरे में मँगवाया है।"

सास ने एक बार बहू की तरफ देखा, परन्तु कुछ बोली नही। उसने सोचा कि अब अगर टोका तो यह भी पूछेगे, क्या बात है, कमरे मे नाश्ता

---

* सरहद प्रान्त के लोगो की एक खास पगड़ी।

क्यों मँगवाया है; और अगर कह दिया मत भेजो, उसे यहीं खाना पड़ेगा तो फिर आज स्वरूप को भूखा ही जाना पड़ेगा। बेटे और पति की जिद को वह अच्छी तरह जानती थी। धनीराम ने दूकान पर जाते हुए कहा—

"हाँ, मेरी मुशद्दी-लुंगी निकाल कर रखना, मैं पाँच बजे आ जाऊँगा। जुलूस चकरौता रोड पर आया कि मैं घर पहुँच जाऊँगा।"

"समझ गई? हाँ, हाँ, समझ गई। अब जाइये न आप रामअवतार भूखा बैठा होगा। उसका नाश्ता ठण्डा हो जायेगा। कब से ताँगा गली में खड़ा है।"

"ओफ हो! बुढ़ापे में औरत मर्द की सूरत से भी परेशान हो जाती है।"

इतना कह कर धनीराम बाहर चला गया।

—:०:—

डकरौता रोड पर दूसरे केमिस्टों की दूकानें रोज देर से खुलती थीं और धनीराम की दूकान सबसे पहले। किन्तु आज धनीराम की दूकान खुलने से पहिले ही बाकी सब दूकानदार अपनी दूकानें खोल चुके थे। उन्हें ग्राहक की तलाश नहीं थी, धनीराम का इन्तजार था।

जब रामअवतार ने आकर दूकान खोली, तो राधेश्याम केमिस्ट अपनी दूकान से कूद कर वंशीधर की दूकान में जा घुसा और कहने लगा—

"आ गये लाला जी! वह आ गये वो।" वंशीधर ने धनीराम की दूकान पर नजर डाली, रामअवतार दूकान लगा रहा था. अभी किशनअ... नहीं आया था बोला—

"अभी तो लौन्डा आया है। वह साला आया ही नहीं, जरा आ लेने दो, उसे बाकी लोगों को भी खबर कर देनी चाहिए कि दूकान खुल रही है सब तैयार रहें। और हाँ, वह रुपये की थैली कहाँ है?"

"वह तो गड़ाबड़िया एण्ड सन्स के पास थी।"

राधेश्याम ने उत्तर दिया। इन दोनों के चेहरे का रंग इस तरह उड़ गया था, जैसे वह कोई भयंकर काम करने जा रहे हों। इतने में तांगा निकला। सबने उसकी तरफ देखा और फिर सारे बाजार में गुपचुप इशारे हो गये। धनीराम की दूकान के दरवाजे पर धीरे-धीरे सारा बाजार इकट्ठा हो गया। उनके हाथ में थैली देखकर धनीराम ने दिल में समझा, बाजारवालों ने धर्मशाला वगैरह बनाने का विचार किया होगा, चन्दा लेने आये होंगे मेरे पास। वह सबको आदर के साथ अन्दर ले गया।

"आप सबने किस लिए इतनी तकलीफ की? मुझे बुला लिया होता, मैं खुद हाजिर हो जाता। बताइये क्या आज्ञा है?"

धनीराम बेचारा इन सबको अपने पास देखकर, इज्जत के बोझ से मरा जा रहा था। ये इतने बड़े लोग जिन्होंने हमें अपने देश में आसरा दिया है, वे इस तरह शरणार्थी के पास चल कर आये हैं। मैं इनकी क्या सेवा करूँ? उसने रामअवतार को कहा—

"बेटा नाश्ता फिर करना, पहले भाग कर चाय का इन्तजाम करो।"

रामअवतार नाश्ता छोड़ कर उठने ही वाला था कि एक आदमी ने दिल कड़ा करके कहा—

"लाला जी, हम चाय पीने नहीं आये हैं। आप दूकान बेच दीजिये।"

धनीराम ने उनके तेवर देखे और हैरान होकर बोला—

"क्यों बेच दूँ?"

राधेश्याम ने कहा—

"इसीलिये कि तुम्हें दुकानदारी करनी नहीं आती। दो रुपये में बिक सकने वाली दवा चार आने में बेचते हो तुम। यह दुकानदारी है?"

धनीराम को गुस्सा आ गया, परन्तु यह सोचकर कि ये लोग यहाँ बैठे हैं, धीरज से बोला—

"मुझे दूकानदारी तो करनी आती है, परन्तु चोरी करनी नहीं आती। अगर मैं दो आने की चीज, चार आने में बेचूँ, तब आकर आप लोग यह बात कहते, तो मैं यह दूकान सचमुच बेच देता। लेकिन जब मैं सही दामों पर बेचता हूँ, तो फिर आप लोगों को एतराज क्यों है—यह बात मेरी समझ में नहीं आई?"

"आपने सस्ते दामों माल बेचकर हम लोगों की दूकानदारी चौपट कर दी है। हमारी साख खराब कर दी है। अब आप की समझ में कुछ आया या नहीं?"

बशीधर बोला—"हमने इसी दूकान में मोटरें खरीदी हैं। बिल्डिंगें बनाई हैं, परन्तु अब तो नौकरों की तनख्वाह भी पूरी नहीं कर पाते।"

दूसरे ने कहा—"हाँ सेठ जी! दो, चार आने कमीशन में दूकानदारी थोड़ी होती है। इससे तो भीख मांगकर खाना अच्छा है।"

अब धनीराम बिगड़ गया! वह अपने आप को न सभाल सका, उसने कहा—

"सुनो लाला! इसी दूकानदारी और ईमानदारी पर मै जी रहा हूँ। बच्चों को पाल रहा हूँ। लड़के को कॉलेज मे पढ़ा रहा हूँ। सुख-चैन की जिन्दगी बिता रहा हूँ, और जो रुपया साल के बाद इकट्ठा होता है, उसमें सोना खरीदता हूँ। यह देखो मेरी पगड़ी में भी सोने का फूल लगा है।"

यह कहते-कहते उसने सर से पगड़ी उतार कर उन्हें दिखाई—सचमुच कुल्ले के ऊपर सोने का एक फूल चमक रहा था। सबने देखा, और फिर एक-दूसरे का मुँह देखने लगे। धनीराम आगे बोला—

"और मै अच्छा खाता हूँ। तन्दुरुस्ती भी अच्छी है, ईमानदारी से दिल भी मजबूत रहता है। मेरी सूरत देख लो।" उसने अपनी मूँछों पर ताव दे डाला। "अब जरा आइने में अपने चेहरे देखो, ईमानदारी और बेईमानी का फर्क साफ दिखाई दे जायेगा।"

रामअवतार पास खड़ा था, उसने शीशा उठाकर बाप के हाथ में दे दिया। सब लोग इस अनादर पर एक-दूसरे को देखने लगे। एक ने कहा—

"हम तो सुनते थे कि सरहद के लोग घर-आये मेहमान का निरादर नहीं करते।"

धनीराम बोला—सिर्फ मेहमान का। चोर की तो टाँग तोड़ देते हैं और कभी-कभी गोली भी मार देते हैं। हमारे यहाँ दूकान माँ के बराबर समझी जाती है, जो सबका पालन पोषण करती है। समझे? और अगर कोई.............

राधेश्याम का बेटा कुछ हुज्जत करने लगा। धनीराम ने बड़ी-बड़ी

आँखें निकाल कर उसकी तरफ देखा, तो वह चुप हो गया। धनीराम कहने लगा—

"अब अगर किसी ने फालतू बकवास की तो मार कर दाँत तोड़ दूँगा। यह मत समझना कि तुम इतने सारे हो, और मै अकेला। हम बाप बेटे तुम सब पर भारी है।"

इतनी बात कहकर धनीराम ने रामअवतार की तरफ देखा, राम-अवतार ने बाप की तरफ। दूकान खरीदने वाले व्यापारी धनीराम का स्वभाव देखकर और अपनी इज्जत बेच कर वहाँ से खिसक गये। दो, चार ग्राहक दूकान पर खड़े थे, धनीराम ने ग्राहको को दवा देने से पहले एक अगरबत्ती जलाई और फिर एक लम्बी सास लेकर बोला—

"अब इनको दवा दे दो बेटा। सारी हवा गन्दी कर गये थे, कम्बख्त।" इतना कहकर वह अखबार लिये बरामदे मे आ गया और सब दूकानदारो की तरफ ऐसे देखने लगा, जैसे कुछ हुआ ही नही।

चकरौता रोड के सब दूकानदार मुँह लटकाये अपने-अपने ठिकानो पर बैठे, अपनी बेइज्जती को याद करके मन-ही-मन दुःखी हो रहे थे, इतने मे बाजार मे चौबे जी का सुर सुनाई दिया—

"सुगना बोले रे, हमरी अँटरिया हो रामा।"

चौबे जी कौन थे, यह कोई नहीं जानता था। सब उन्हे चौबे जी कहते थे। वह इस बाजार मे ही रहते और न जाने कब से रहते चले आये थे। सेहत अच्छी थी, कसरती बदन था, कन्धे पर लट्ठ रखते थे, इसीलिए शायद बाजार वाले इन्हे चौबे जी कहते थे। भले ही वे दुबे जी हों। महीने की हर पहली तारीख को वह दो-चार बड़े काले बाजार के व्यापारियों के पास लठ लिये पहुँच जाते और दान दक्षिणा लेकर महीने भर के लिये निश्चिन्त हो जाते। काले बाजार के लोग उनके विरुद्ध कुछ न बोलते बल्कि इज्जत ही करते थे। किन्तु चौबे जी थे समझदार, वह अपने सामने किसी ताकतवर को देख कर बोलते नही थे। इसलिए असामी भी उन्होंने

वैसे ढूंढ रखे थे, जो विशेषतः कमजोर थे। और बेईमान अधिकतर कमजोर होता है, एवं शारीरिक कमजोरी मनुष्य को दबा नहीं सकती। चरित्र की कमजोरी ही तो मनुष्य को बोलने नही देती। बेईमानो के चरित्र चूकि कमजोर होते है, इसलिए वही कमजोरी उन्हे दबा देती है, और वह ऊपर से सज्जन होने की चादर ओढ लेते है, कोई गाली दे तो उसे सज्जनता की जेब मे रख लेते हैं, कोई ज्यादती करे तो उसे सज्जनता के नाम पर सह लेते हैं। पर अन्दर-ही-अन्दर जल जाते है। ऊपर से लोगा को बताते हैं देखिए मै सज्जन हूँ. इसलिए गाली का जवाब नहीं देता।

वास्तव मे सज्जन पुरुष को अन्दर से ही बुरा नही लगता, उसे गुस्सा हो नही आता, और अगर कभी गुस्सा आ जाय तो फिर मौत आ जाती है। यह चौबे जी दूसरी तरह के सज्जन लोगो से हर महीने माल ऐंठते थे, और मौज उडाते थे, अगर किसी महीने किसी ने दक्षिणा देने से इन्कार किया तो फिर सारे बाजार मे अजीब भयानक खबरें उड़ने लगतीं। चौबे जी अपने लठ को तेल पिला रहे हैं, चौबे जी सिल पर छुरी तेज कर रहे हैं, चौबे जी ने भंग का गोला घोट लिया है, चौबे जी की आँखे लाल हो रही हैं, चौबे जी ने आज फासी पर चढने का फैसला कर लिया है। इन खबरों का नतीजा यह होता कि उनके साथ झगडा करने वाला व्यक्ति शाम से पहिले-पहिले जाकर चौबे जी से माफी माग लेता, और चौबे जी अपनी लाल लाल आँखों से उसकी तरफ एक बार देख कर हँस देते। माफी मागने वाला चौबे जी को मुस्कुराने का भी दाम देता।

आज चौबे जी बड़े अच्छे मूड में थे, इसीलिए बाजार में गाते हुए निकले—

"सुगना बोले रे हमरी अटरिया हो रामा।"

मतलब यह था, कि जरा उनके आसामियो को ध्यान आ जायेगा, आज पहली तारीख है। सोचा पहले चक्कर में सूरत दिखा दूँ, फिर दूसरे चक्कर में पैसे वसूल कर लूँगा। लेकिन दूसरा चक्कर आसामियों ने होने नहीं

दिया। एक केमिस्ट दूकान के चबूतरे पर बैठा दूध पी रहा था । उसने चौबे जी को भी बुला कर दूध पेश किया ।चौबे जी ने दूध चढ़ा कर एक डकार ली और बोले—

"मस्त रहो लाला। खाली दूध से काम नाही चलत, हमारि तनखवा भी तो ढीली करौ।"

"कौन सी तनख्वाह ?" बंशीधर पास बैठे थे, उन्होंने पूछा।

"लेओ सुनो !" चौबे जी बोले।

"लेकिन चौबे जी तुम हमसे तो हर महीने ले जाते हो, उससे एक पैसा भी नही माँगते, जो रोज लाखो का व्यापार करता है, जिसकी दूकान मे सारे दिन ग्राहक घुसे रहते हैं ।"

"उससे डरते है, चौबे जी उससे कैसे ले सकते हैं।" राधेश्याम ने कहा।

यह बात सुनकर चौबे जी के घमण्ड को ठेस पहुँची, वह तड़प गये, और लाठी सीधी करके बोले—

"का कह्यो, चौबे जी और डर जायें ! तुम लाला अभी चौबे जी को पहचानत नाही हो।"

"पहचानते हैं चौबे जी, पहचानते हैं, अच्छे लोगो पर जोर चलता है आप का।"

"अरे, हमसे ज्यादा कौन ससुर बदमाश है, इहा जरा सामने तो आवे लाला।"

"पहले तो हम तुम्हे ही बहादुर समझते थे। लेकिन अब तो मालूम होता है, कि अगले महीने से यह पगार भी जो तुम ले जाते हो. उसी को देनी पड़ेगी।"

"किसको ? जरा जल्दी से हमे तो बताओ, मुँह में का बुदबुदावत हो ?" चौबे जी खूब गुस्से में बोले।

"अरे छोड़ो चौबे जी, हम पर रोब जता कर माल ले जाते हो, अब तो हम उस समय तक कौडी नही देगे, जब तक तुम धनीराम की दूकान से अपनी माहवारी वसूल करके नहीं लाओगे।"

" ये बात है, ल्यौ अबहिन ल्यौ।"

इतना कहकर चौबे जी धनीराम की तरफ बढ चले, और ये दोनो केमिस्ट अपनी गरदनें लम्बी करके उसको देखने लगे कि क्या करता है यह चौबे जी उस गुन्डे धनीराम के साथ।

"काहो पठान भैया।" चौबे जी नें दूकान के बरामदे में अपना लठ खटखटाया।

धनीराम ने उसे ऊपर से नीचे तक एक कड़ी निगाह से देखा तो चौबे जी मुस्करा दिए।

"राम राम।" चौबे जी ने एक तरफ दोस्ती का हाथ बढ़ाया।

'राम राम' कहकर धनीराम प्रश्नार्थक निगाहो से उसकी तरफ देखने लगा।

"हमका पहचानत हो न तुम!" धनीराम के सामने रखी हुई बेंच पर चौबे जी बैठ कर बोले।

"पहचानता हूँ, बाजार में तुम्हारे गीत सुनता हूँ। लेकिन मेरे यहाँ कैसे आ गये, यह सोच रहा हूँ।"

चौबे जी समझ गये कि यह आदमी अन्दर से कड़ा है, जरा बात समझ कर करनी पड़ेगी, हँस कर बोले—

"अरे, काम कौनो नाही। हम तो अपने ही रमरमीं धागे से बंधे आ गये, इही तो सभै जानत है। अपना खाना-पीना इही बाजार के मत्थे चलत है, और अब की कुछ तुमऊ बढाओ, तो काम बने।"

धनीराम ने समझ लिया कि चौबे जी लठ के सहारे माँगने आये हैं।

"इसीलिये दूकान पर घुसते ही लठ खटखटाया था तुमने?" धनीराम ने अखबार को एक तरफ हटाते हुए तेज आवाज में चौबे जी से पूछा।

"का क्यों लठ खटखटावत रहीन हम ? का मतलब है तुम्हार, अरे हमे पैसा चाही पैसा ।"

"सुनो चौबे, मैं दोबे बना दूँगा तुम्हारा, और पैसा एक नहीं दूंगा, समझे ?"

"सब देत हैं, तुम काहे ना देहो भाई ?" चौबे जी ने खड़े होकर जरा कड़क आवाज मे कहा ।

इस पर इधर-उधर के दूकानदार भी जरा मूड मे आ गये, और अपने अपने बरामदे मे आकर दोनो की बात सुनने लगे । धनीराम कह रहा था—

"गुण्डे वह पालने हैं, जो चोरी करते हैं, मै न चोरी करता हूं, न गुण्डे पालता हूं । और अगर ज्यादा बात की तो टागें पकड़ कर चीर डालूंगा" ।

रामअवतार चौबे जी के पीछे खड़ा था, उसने चौबे को कमर से पकड़ लियाऔर आराम से बाजार की तरफ घुमा दिया । चौबे जी भिन्ना गये। उन्होन लठ उठाया, तो धनीरार ने लठ छीन कर बाजार में फेंक दिया और रामअवतार ने उसे दूकान से नीचे ढकेल दिया ।

"एक मर्द से दो जने भिड़त हो" चौबे जी लठ उठाते हुए खिसियाने होकर बोले, "अकली पर अकेला होये तब जाने । जानत हो ना हमारा नाम चौबे है चौबे ।"

धनीराम ने दूकान से नीचे उतरते हुए कहा—"ठहर तेरे चौबे की ।"

चौबे जी लठ उठाकर ज़रा दो कदम पीछे सरक गये और अपनी मूछों पर ताव देकर बोले "राम कसम, हम आज बताय दैब कि हम का हैं ।"

चौबे जी बकते–झकते रहे, और धनीराम अपने ग्राहको को दवाई देनें में लग गया । सारे दूकानदारों के मन में लड्डू फूटने लगे और वे आपस में कानाफूसी करने लगे—

"अजी यह चोबे जी महा गुण्डा है, वह उसे आज मौत के घाट उतार कर ही रहेगा । उसकी सूरत नहीं देखते ।"

कोई कहता—"आज पता चलेगा उस धनी के बच्चे को । यह चौबे तीस बरस की कैद काटने गया था काले पानी, वहाँ से भाग कर आगया है । इसको

कोई जानता नहीं। वह जो रामपुर में डकैती हुई थी ना, वह इसीका काम था। सूरत नही देखते, देखकर दिल धड़कने लगता है।'

इधर चौबे जी की खबर बाजार मे घूमने लगी। जो भी बिशनदास से फल खरीदने आता, वह कोई न कोई खबर चौबे जी की सुना जाता "लठ को तेल पिला कर धूप मे रख दिया है।' बिशनदास कहता—

'उसे कहो आग पर रखे' और अगर कोई कहता 'सिल पर छूरी तेज कर रहा है' तो उसे जवाब मिलता 'सान पर लगा कर रखे, इसी से उस की गर्दन काटी जायेगी।'

उस दिन अपमान का दुख भुलाने के लिए चौबे जी ने भंग का गोला खाया, परन्तु उससे भी वे भुला न सके। क्यो कि धनीराम पर इस झगड़े का कोई असर नही पड़ा था। उसने तो यहां तक कह दिया कि 'यह ससुर भंग छोड़ कर गोबर भी खा ले तो भी मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकता।' अब शाम हो गई थी, और चौबे जी के सारे हथियार बेकार हो गये। उधर बंशीधर जैसे लोग घूमते-घामते चौबे जी की तरफ आते और कहते—

"वाह, चौबे जी, भरे बाजार में इज्जत देकर चुपके बैठे हो। हमीं पर रोब गाठते थे। इस शरणार्थी ने तुम्हारा सारा कस-बल निकाल दिया न।"

और चौबे जी अन्दर ही अन्दर घबरा जाते, पर ऊपर से कहते—

"अरे देखो तो सही, आठ दिन के अन्दर ही अन्दर क्या होता है यहाँ।"

कहने वाला आदमी भी हंस देता और कहता—

"अरे रहने दो, हमने देख ली तुम्हारी। सारी अकड़ दो मिनट मे किरकिरी हो गई।"

चौबे जी सचमुच सोच में पड़ गये, कि आज तो इज्जत गई इस बूढे के हाथ से, क्या करना चाहिए। वह उठकर बाजार से खिसक गया और शराब के अड्डे पर जाकर उसने एक पौवा मुँह से लगाया ही था कि पल्टन बाजार मे महन्तों के जुलूस के ढोल तासे बजने लगे, हाथी झूमने लगे।

धनीरामने आवाज सुनी तो उसे याद आया, आज तो वह सुहागन से कह कर आया था कि जुलूस देखने चलेंगे। उसने कोट पहनते हुए रामस्वरूप और रामअवतार से कहा—

"तुम दूकान बढाकर जल्दी से आओ, मै घर जाता हूँ, बच्चे राह देख रहे होंगे, जुलूस के लिए।"

इतना कहकर वह घर की ओर चल दिया। जुलूस अभी पल्टन-बाजार के शुरू मे था, और लोगो के ठठ जुलूस देखने के लिए सड़क के दोनो तरफ अभी से आ खडे हुए थे। धनीराम जब भीड़ को चीरता हुआ बाजार मे पहुँचा, और सड़क पार करने के लिए दूसरी तरफ की भीड़ से बाहर निकलने लगा, तो कोई तेज चीज उसकी पसली मे चुभ गई। उसने पलट कर देखा तो चौबे जी पीछे थे। छुरी धनीराम की पसली में घुस चुकी थी। धनीराम ने एक हाथ से अपनी पसली में घुसी हुई छुरी निकाली और दूसरा हाथ चौबे की ओर बढाया, लेकिन वह भाग निकला। धनीराम की पसलियों से खून की एक धार फूट पडी।

खून देखकर धनीराम अपने घर की तरफ भागा, उसने हाथसे घाव को जोर से थाम लिया ताकि खून न बह सके। लेकिन खून कई रगों और नाड़ियो को काट कर निकला था, इसीलिए बहता चला गया, और बाजार की काली सड़क पर लाल खून की एक लकीर खिच गई। कुछ खूनके छींटे चौबे के कपड़ों पर भी पड़े थे। परन्तु बाजार की भीड़ जो महन्तो के हाथी देखने आई थी, वह इन धब्बों पर क्यों नजर डालती। लेकिन चौबे जी का भागना लोगो के लिए धक्का-पेल हो गया, और किसी ने चौबे की गिरेबान मे हाथ डाल कर कहा— "यह रहा कातिल"। और चौबे जी पकड़े गये।

सुहागन घर मे कपड़े निकाले, ज़ेवर पहने, माग में सिन्दूर भरे पति का इन्तजार कर रही थी। बच्चे सज-धज कर पैडाओं के सर हो रहे थे—

"बाबू नहीं आये, बले बाबू तुम ले जाओ हम को मेले में।"

कि इतने में धनीराम ने घर मे प्रवेश किया। उसे खून मे लथ-पथ

देखकर पेड़ाखान के होश उड़ गये। वह चिल्लाया—

धनी! और धनीराम की तरफ बढ़ा, सुहागन, देख धनी को क्या हो गया है। पेडाखान ने अपनी बहू को भी आवाज दी। सुहागन भागकर आई, उसका घुँघट कहीं था, पॉव कटी थे, और वह खुद कही थी। इतने मे रामस्वरूप और रामअवतार भी भागते हुए घर के अन्दर घुसे। रामनारायण ऊपर छत पर था, वह भी अपने दादा की आवाज पर लपक कर नीचे आया। गली के लोग भी इधर-उधर से आ गये। लेकिन धनीराम अपने बूढ़े बाप की तरफ देख कर कह रहा था—

" मै नही मरूँगा काका, नही मरूँगा, मुझे सिर्फ एक छुरी लगी है, मै नही मरूँगा।"

फिर धनीराम अपने बेटों की तरफ देख कर बोला—

"मैं उस समय तक जिन्दा रहूगा, जब तक ईमानदारी जिन्दा रहेगी।"

खून बहता जा रहा था, रामनारायण डाक्टर की ओर भागा—

"अरे नहीं नारायण, मै नही मरूंगा, बेटा अभी तुझे डाक्टर बनाना है, मुझे। अवतार! देख यह मेरी पगड़ी तुम बेटों के हाथ है। इसको बेचना या सिर पर रखना। उसकी हालत बिगड़ने लगी। "मै...मै...नही मर सकता, ईमानदारी मुझे जिन्दा रखेगी ईमानदारी।"

इसके बाद उसकी आवाज अन्दर की तरफ जाने लगी। उसने बोलने की कोशिश की परन्तु एक हिचकी आई और धनीराम का सिर सुहागन की गोद में लुढक गया, पगड़ी उसके बाप पेड़ाखान के पावों पर जा गिरी। रामअवतार ने पगडी उठा ली, सुहागन की चीख गूज गई, और पेड़ाखान के मुंह से निकला—

"धनी—यह तूने क्या किया बेटा!"

वह उसके पास बैठ गया, जैसे समझा रहा हो "बेटा तुमको मुझे कन्धा देना है, मेरी चिता मे आग लगानी है, मरने के तो मेरे दिन थे, तेरे नही, तू तो अभी बच्चा है।" फिर बेटे का नाम लेकर वह चीख पड़ा। अन्दर से बहुए भी दोनों हाथों से सिर पीटती हुई, अपने ससुर के

पावों की तरफ आ गई। सुहागन की मांग का सिन्दूर आज ब्लैक मार्केट वालों ने उसके पति के खून से धो डाला। उसकी चुड़िया तोड़ डाली, उसका सुहाग लूट लिया, पेडाखान की सुहागन बहू, अभागन हो गई। मौत अबके फिर पेडाखान को धोखा दे गई थी, वह आई लेकिन उसके लिये नहीं... उसके बच्चे के लिये, और उसे ले गई।

चौबे जी फासी पा गए। और काले बाजार के लोग, जिन्होने ईमानदारी को मरवाया, उसी तरह कानून की शरण में शरीफ आदमियों का जीवन व्यतीत करने लगे। अब उनके रास्ते से दोनो काटे निकल गये थे, धनीराम, जो उनके व्यापार को घुन की तरह चाट रहा था, और वह गुंडा जो उनके सीने पर मूँग दल रहा था। इन दोनो की मौत पर काले-बाजार मे खूब जलसे मनाये गये।

धनीराम की मृत्यु के बाद पेडाखान का दिल दुनिया से और भी ऊब गया। वह घर से अधिकतर बाहर ही रहता था। मन्दिर की सीढी, नहर का किनारा या परेड मैदान मे लगी हुई बापू की मूर्ति का साया-यही उसके ठिकाने थे। वह मूर्ति की तरफ देखता और सोचता, "मेरे बेटे की मौत भी बापू की तरह हुई है" वह अमर हो गया है, बापू के मार्ग पर चलकर।

घर में धनीराम की जगह उसके बड़े बेटे रामस्वरूप को सौप दी गई, बाप की हर चीज उसे मिल गई, सोने की जेब घड़ी, दूकान के अन्दर रखी तिजोरी की चाभिया, बही-खाता और पिस्तौल का "लाइसेन्स" भी उसी के नाम हो गया। किन्तु धनीराम की पगड़ी, सुहागन की पूजा वाली अलमारी में टांग दी गई, पगड़ी के नीचे धनीराम की एक तसवीर लटकी थी और उसके नीचे सोने के ठाकुर रखे थे, जिनकी रोज पूजा की जाती थी।

रामस्वरूप धनीराम के मृत्यु-संस्कार के बाद सोचने लगा, "अगर धनीराम अपनी जिद न करता, तो आज जिन्दा भी होता और मालदार भी।" वह ज्यों-ज्यों अपने बाप के बारे में सोचता, उसे कोई समझदारी की बात नहीं दिखाई देती। लेकिन फिर भी वह धनीराम के कामों को गलत नहीं समझता था, क्योकि इसमे उसका खून शामिल था।

एक रात वह पलंग पर लेटा था कि अचानक उसकी आँख खुल गई, वह सोचने लगा मेरा बाप मुनाफे को बुरा क्यों समझता था? इस पर वह सोचता रहा, पर उसकी समझ में कुछ नहीं आया। उसे बार-बार बाप की बात सुनाई देती थी "यह दवाये बीमारों की अमानत हैं।" वह सोचता, अमानत क्यों हैं और कैसे? एक आदमी को जरूरत हो, दूसरे

के पास चीज रखी हो, तो समय की माग है कि वह फायदा उठाये, और जो नही उठाता वह बेवकूफ है, नुकसान उठाता है। और फिर उसके सामने उसका बाप आकर खड़ा हो जाता, जिसकी पसली से खून की एक धार निकलती दिखाई देती और वह परेशान हो जाता।

उस रात भी वह सोचता रहा, कमरे मे बिजली का बल्ब जल रहा था, उसकी रोशनी के पास ही उसे एक कीड़ा रेगता हुआ दिखाई दिया, और बालिश्त भर की दूरी पर एक छिपकली बिलकुल कीड़े की तरफ एक-टक देखे जा रही थी। जब कीड़ा थोडा-सा पीछे की तरफ रेगता तो वह भी अपने पंजों के बल आगे रेग जाती, और फिर एक-टक देखने लगती। आखिर उसने झपट कर कीड़े को मुंह मे ले लिया और निगल गयी, और फिर भागती हुई अन्धेरे में गायब हो गई। रामस्वरूप उठकर बैठ गया, उसके चेहरे पर एक अजीब तरह की कठोरता आ गई। उसने सोच लिया मौके से लाभ उठाना हर प्राणी का काम है। उस छिपकली ने भी कीड़े की कमजोरी का फायदा उठाया है। यह सोचते-सोचते वह लिहाफ ओढ कर सो गया, गहरी नीद।

उसी रात पेड़ाखान हुक्के पर चिलम रखे आग ढूँढ रहा था। दियासलाई की आखिरी तीली हवा के जोर से बुझ गई, और उपले की आग आज उसकी बहू रखना भूल गई थी। पेड़ाखान क्या करे? आग नहीं थी। समय क्या होगा, घड़ी भी उसके कमरे में नहीं। वह अपने कमरे से बाहर निकलकर, बरामदे मे रखे हुऐ मिट्टी के चूल्हे की राख मे चिनगारी ढूढता रहा जब वहाँ भी आग नही मिली, तो उसने मजबूर होकर आवाज दी—

"कोई आग तो दे जाओ भाई, यहाँ तो आग ही नहीं है, मुन्ना हो ... मुन्ना।"

वह आवाज देकर, खडा रहा हाथ मे चिलम लिए इस प्रतीक्षा में कि अभी कोई जवाब आयेगा, अभी कोई जवाब देगा, लेकिन कोई जवाब नही मिला। पाँच, सात मिनट बीत गये, तो उसे याद आया कि क्या मै

इस घर में मेहमान हूँ ? मेरा अपना घर है, यह सब धनीराम का कुम्बा है, मेरा परिवार है, मै यहाँ पराया तो नही हूँ, मै दरवाजा खटखटा कर क्यो नही कहता हूँ कि आग दे जाओ ? यह सकोच क्यो आ गया है मुझमे ? मैने उस दिन से बहू को भी नही पुकारा, जिस दिन से धनीराम चला गया है । क्या सिर्फ उसी के कारण यह मेरी बहू थी ? अब नही है ? यह तो जन्म-जन्मान्तर के सबध होते है । फिर सकोच क्यो ? इतना सोचकर उसने आवाज दी ।

"सुहाग . . .

सुहाग कहकर पेड़ाखान रुक गया अब क्या उसे सुहागन कहेगा ? वह तो अब अभागन है, सुहागन नही । इसीलिए वह सुहाग के आगे का "न" न बोल सका और दीर्घ 'ई" उसके कलेजे से फूटकर चीख की तरह उसके मुँह पर आ गई । उसने कहा सुहागी—और बूढ़ी आँखो में आँसू छलक आये—

"सुहागी बेटा !" उसने फिर पुकारा । "आज आग नहीं है, माचिस भी अन्दर है ।"

दरवाजा खुला और सुहागी बाहर निकली । वह चुपचाप आग सुलगाने लगी । अब पेड़ाखान बरामदे से उतर कर बाहर पलग पर बैठ गया और बोला—

"बेटा ! तुझे इस घर में आकर कोई सुख नहीं मिला । तू भी सोचती होगी कि कहा फंसा दिया मा-बाप ने, पर सुहागी संसार तो इसी का नाम है ।"

अपना अनोखा नाम सुहागी सुनकर उसके दिल मे एक धक्का लगा । उसके ससुर ने ही उसका नाम सुहागन रखा था, और आज वही उसे सुहागी कहकर पुकार रहा था । किन्तु जब उसका सुहाग रहा ही नहीं, तो वह सुहागन कैसे पुकार सकते हैं । उसके सुख के साथ उसका नाम भी उसका घरवाला अपने साथ ले गया । इतना सोचकर सुहागी उठी, उसकी हिचकी शुरू हो गई । वह रोने की आवाज किसी तरह दबा न सकी ।

इधर पेडाखान भी चुपके-चुपके रो रहा था। उसकी मूछें, उसके आसुओ से भीग गई।

धनीराम के मरने के बाद, आज बहू और ससुर पहली बार मिले थे। और दोनों का अन्त करण आसुओ से भीगा हुआ था। आखिर पेडाखान चिलम लेकर बहू के पास जा खड़ा हुआ और बोला—

"बेटा! चुप हो जा अब। आदमी की जिन्दगी को मौत ही सहारा देती है। मेरी तरफ देख, तू तो उसकी बीवी है, मै उसका बाप हू और मा भी हू। मैने उसे किस तरह पाला था, कभी गर्म हवा का झोका तक नही लगने दिया, और अब अपने हाथो से चिता मे लिटा कर आया हू, आग की ज्वालाओ में।" इतना कहते-कहते वह रो पड़ा और रोते हुये बोला, "चुपकर सुहागी बेटा, अब चुप कर जा।"

लेकिन उसकी तसल्ली से सुहागिन का दुख और बढ़ता गया। सास की आवाज सुनकर रामअवतार की बहू कौशल्या कमरे से बाहर निकली, और फिर थोडी देर के बाद सारा घर जाग गया। सामने रायसाहब की बेटी गार्गी भी जाग कर छत पर आ गई।

जिस घर मे ऐसी मृत्यु होती है, वहां वर्षो तक दुख की छाया रहती है। और फिर धनीराम को तो मरे अभी थोडे ही दिन हुए थे। रामस्वरूप ने दरवाजा खोलकर झाका, इतनी रात गये घर मे कुहराम कैसा है। और फिर मा के पास आकर बोला—

"इस तरह तमाशा बनाने से क्या फायदा। वह लौटकर तो नहीं आ जायेगे।"

किन्तु मा के आसू किसी तरह नही रुके। रामस्वरूप यह समझकर कि ये भावुक लोग हैं, अक्ल की बाते इन पर असर नहीं करती, उठकर वह अन्दर चला गया।

—००—

आज सुबह दूकान रामस्वरूप ने खोली। "भैया इतनी जल्दी दूकान पर चले गए, क्यो ?" रामअवतार समझ न सका। फिर यह समझकर चुप हो गया कि रात सारा घर परेशान था, शायद भैया भी परेशान होंगे, इसीलिए घर से जल्दी भाग गए होंगे। रामअवतार जब नाश्ता लेकर दुकान पर गया, तो वहा ताराचन्द्र दलाल बैठा भइया से बाते कर रहा था। यह दलाल धनीराम के होते हुए भी कभी-कभी आया करता था। जो दवा बाजार मे न मिलती हो, उसे यह दलाल लाकर देता। धनीराम इससे हमेशा कहा करता था—

"कुछ काम किया करो भैया, यह मुलाकात की आमदनी अच्छी नही होती भैया।"

यह दलाल उन्ही के देश का था, इसीलिए धनीराम से कभी उधार पैसे भी ले जाता था, और धनीराम से हमेशा कहा करता था—

"भैया, अगर यह दूकान मेरे पास होती, तो सारा देहरादून खरीद लेता।" इस पर धनीराम हँसकर कहता—

"और फिर मर जाता, क्यो ?"

"मरना तो सबको ही है।"

दलाल इतना कहकर उठ जाया करता था। उसकी देहरादून में बहुत जान-पहचान थी। पुलिस के बड़े-बड़े अफसर और सेठ—सब उसे जानते थे। पुलिस वाले इसलिए कि झूठी गवाही दे देता था और सेठ इसलिए कि उनके व्यापार में सहायक होता था। आज रामस्वरूप से भी उसने वही बात दोहरायी, जो धनीराम से कहा करता था—"भैया अगर यह दूकान मेरे पास होती, तो मैं सारा देहरादून खरीद लेता।"

रामस्वरूप ने पूछा—"वह कैसे ?"

"अरे काम से, नफे से, और कैसे?" ताराचन्द बोला, फिर उसने रुपये कमाने के सारे तरीके उसे बता दिये, और कानून से बचने के ढंग भी समझाने लगा, कि इतने मे रामअवतार को आता देखकर वह चुप हो गया। रामस्वरूप ने कागज निकाला और रामअवतार से कहा—

"स्टेशन जाकर बम्बई की बिलटी छुडा लाओ।"

रामअवतार जाने लगा तो ताराचन्द्र ने रामस्वरूप से कुछ कहा और फिर उसने रामअवतार को रोक लिया और बोला—

"तुम बैठो, मै खुद जाता हूँ।" और बिना नाश्ता किए ही चला गया।

बिल्टी का माल दूकान पर नहीं आया, बल्कि एक चेक लेकर रामस्वरूप आ गया। रामस्वरूप को बिना माल के देखकर रामऔतार ने पूछा—

"क्या बिल्टी नही आई भैया?"

रामस्वरूप ने कहा—"बिल्टी आ भी गई, और बिक भी गई, मैंने ५०% मुनाफा लेकर दवा बेच दी है।"

इतना कहकर रामस्वरूप अन्दर चला गया और रामअवतार कुछ पूछ न सका, केवल आश्चर्य से दूकान की तरफ देखता रहा। उसी दिन से रामस्वरूप ने माल दुगने दामो मे बेचना शुरू कर दिया, किन्तु रामअवतार की अनुपस्थिति मे। वह रामअवतार को ऊपर के कामो में लगाये रखता। दूकान के अन्दर जो डिस्पेसरी थी, उसको भी उसने चारों तरफ से इस तरह तख्तो से बन्द करवा दिया कि आवाज इधर से उधर न जा सके और फिर थोड़े दिनो मे ही उसने यह भी सोचना शुरू किया कि मेरी अनुपस्थिति में रामअवतार भी ब्लैक में माल बेचता होगा। लेकिन रामअवतार का किसी बैंक मे हिसाब नहीं था और रामस्वरूप की पत्नी का एक बैंक में चोरी से हिसाब भी खुल चुका था। रामस्वरूप वह रुपया ताराचन्द्र के द्वारा अन्दर ही अन्दर ब्याज पर भी चलाने लगा।

कुछ दिनों बाद फिर माल आया, आज भी रामस्वरूप खुद छुड़ाने गया और उसे ताराचन्द्र के घर रख आया। अपने हिसाब से रुपये निका-

लकर दुकान के गल्ले मे रखकर बोला—

"मैने माल बेच दिया है अवतार।"

अब रामअवतार से न रहा गया। उसने कहा—"भैया, सारा माल तुम एक ग्राहक को दे आये हो, तो बाकी ग्राहकों को क्या देंगे?"

रामस्वरूप ने घूरकर रामअवतार की तरफ देखा।

उस दिन दोनों भाइयो के बीच कोई बात नही हुई। रामअवतार ने घर जाकर भी किसी से कुछ नही कहा। वह घर वालो को दुखी नही करना चाहता था। रामअवतार को यह शंका भी नही थी, कि रामस्वरूप काले बाजार में धन्धा करता है, वरना वह एकदम विद्रोह कर देता, लेकिन उसका ख्याल था कि भाई एक एक शीशी न बेचने के बजाय इकट्ठा माल बेच देता है, केवल दोनो की दूकानदारी मे अन्तर है, और बस—

एक दिन गार्गी भागी-भागी नारायण के घर आकर उसकी छोटी भाभी से कहने लगी—

"बहन जी, जरा अपनी दुकान से यह दवा मँगवा दीजिए।"

भाभी ने रामनारायण को पुकारा। रामनारायण ने गार्गी को देखा तो खुश हो गया।

"जरा रायसाहब के लिए यह दवा तो दुकान से ला दो जाकर।" कौशल्या ने कहा।

"रायसाहब? कौन रायसाहब?" नारायण ने अनजान बनते हुए कहा।

"अरे गार्गी के पिता और कौन।"

"गार्गी? यह क्या पहेली है भाभी।"

कौशल्या चिढ़ गई और शायद समझ भी गई, बोली—

"ऐसी बात कह दूँगी कि सिरपर पैर रखकर भागोगे यहा से। मैं सब जानती हूँ।"

नारायण 'अच्छा-अच्छा' कहकर, दस रुपया का नोट भाभी से छीनकर और साइकिल उठाकर भाग गया। गार्गी भी वहा खड़ी न रह सकी। उसके पाव लड़खड़ा गए, उसके सिर से आन्चल खिसक गया और वह पलटकर

आने लगी, तो कौशल्या ने रोककर कहा—

'बैठो न, अभी दवा लेकर आ जाता है नारायण।'"

"घर पर भिजवा देना भाभीजी, पिताजी की तबीयत ज्यादा खराब है।' गार्गी बहाना करके चली गई। किन्तु उसके दिल मे एक चोर बैठ गया। क्या नारायण की भाभी इस राज को जानती है और अगर जानती है तो क्या होगा इसका परिणाम।

फिर उसने अपने आप सोच लिया—"क्या होगा, शादी होगी और क्या।"

दवा लेकर रामनारायण ने गार्गी के घर का दरवाजा खटखटाया तो वह ऊपर से देखकर भी नीचे न उतरी, नौकर को नीचे भेज दिया। नारायण ने दवा के साथ एक चिट्ठी भी लिख रखी थी कि आज शाम को ग्रीन होटल मे चाय साथ पियेंगे। उसने नौकर को देखकर क्षणभर सोचा कि इसको चिट्ठी दे या न दे। लेकिन दूसरे ही क्षण उसने ऊपर गार्गी की तरफ देखा और कहा—

"इस दवा का कैशमेमो भी दवा के साथ है।"

गार्गी समझ गई, उसने रास्ते मे कैशमेमो ले लिया फिर दवा और दो रुपये भी। चिट्ठी गार्गी ने अपनी कमीज मे अडोस ली और दवा तथा दो रुपये राय साहब को दे दिये। राय साहब दमे के रोगी थे। वह हमेशा से यह दवा खाते चले आये थे। यह दवा पाच रुपये और कुछ आने मे आती थी, वह दवा की कीमत आठ रुपये सुनकर चौक पड़े—

"अरे! क्या धनीराम के लड़के ने ब्लैक मार्केट शुरू कर दी है?"

गार्गी ने बाप की तरफ देखा, रायसाहब फिर बोले—

"पाच रुपए पाच आने में हमेशा लाता हूँ, और यह आठ रुपए की आई है।"

गार्गी हँस दी, और कुछ बोली नहीं। राय साहब ने बेटी का हाथ पकड़कर कहा—

" चोट्टी बाकी पैसे तूने उड़ा लिये है।" परन्तु गार्गी पहले की तरह हँसती ही रही और हाथ छुड़ाकर बोली—

" उनकी दुकान से तो सिर्फ ५ रुपये में आई ।"

" और तीन रुपये ?"

" मेरा कमीशन "

गार्गी इतना कहकर भाग गई । लेकिन अपने कमरे में जाकर उसने सोच लिया कि मेरे साथ रामनारायण ने मजाक किया है, इसलिए कहता था "कैशमेमो साथ है ।" अगर पिता जी समझ जाते तो ? आज करूंगी उसे ठीक ।

शाम को ग्रीन होटल के हाल मे घुसते ही रामनारायण ने होटल बॉय के सहारे अपना चेस्टर उतारा और फिर गार्गी का चेस्टर उतारने में मदद करने लगा । अपना चेस्टर उतरवाते समय गार्गी ने नारायण की नजर बचाकर, उसकी जेबसे बटुवा निकालकर अपनी साड़ी मे छिपा लिया । नारायण को बटुए का पता ही नही चला कि कब और किस तरह उसके दिल की भांति वह गायब हो गया । नारायण पीछे-पीछे चलने लगा और हाल के साथवाले केबिन में दोनों जाकर बैठ गये । नारायण ने कहा—

आज तो मेरे पॉव के नीचे से जमीन खिसक गई, जब भाभी ने मुझे···।

गार्गी बात काटकर बोली—

" हालत तो मेरी भी देखने के काबिल थी। काटो तो बदन मे खून नहीं। धरती माता अगर जगह देती तो जमीन में धॅस जाती लज्जा के मारे ।"

नारायण उसके चेहरे को गौर से देखने लगा । उसके लम्बुतरे चेहरे पर बड़ी-बड़ी ऑखे लज्जा से भर गईं । और उंगलियों से मेज़ के शीशे को कुरेदने लगी । बॉय ने मेज के ऊपर चमचे और कॉटे लाकर रख दिये, गार्गी ने वह चमचे उठा लिये । लेकिन अभी कुछ पीने को तो वह लाया ही नहीं था । रामनारायण ने बॉय को आर्डर दिया —

" दो चाय और··· "

गार्गी बोल पडी —

" और बाकी सब कुछ जो है । "

रामनारायण ने गार्गी की तरफ देखा

" यहाँ तो सब नानवेजीटेरियन ( मासाहारी ) ही होगा । और तुम तो वेजीटेरियन (शाकाहारी) हो । मास-मछली कुछ खाती नही । "

" आप जो नानवेजीटेरियन है । " गार्गी ने कहा

" लेकिन तुम्हारे सामने गोश्त कहाँ खाता हूँ ?"

" कितने दिन नही खायगे आप, आखिर एक दिन खायेंगे ही सो आज खा लीजिये ।"

"तुम्हे मुझसे नफरत होने लगी है ।" अब गार्गी ने उसके चौड़े चकले चेहरे की तरफ गौर से देखा ।

"नफरत मै करूंगी । "

और फिर एक लम्बी सान लेकर चुप हो गई । नारायण का दिल उसके अन्दर की बात जानने को मचल उठा, वह बोला—

" क्यो क्या तुम नफरत नही कर सकती मुझसे । और अगर नहीं कर सकती तो क्यो नही कर सकती ?"

रामनारायण ने बिलकुल साफ बात उसके सामने रख दी, क्यों कि वह उससे कहलाना चाहता है, "मै तुमसे प्यार करती हूँ, तुम बहुत हसीन हो, सुन्दर हो नारायण ।" लेकिन गार्गी उसकी तरफ देखकर दिल ही दिल मे उसकी सादगी की तारीफ करने लगी, और ऊपर से मुस्करा पड़ी । रामनारायण ने फिर उसी तरह से पूछा—

"क्यों, क्यो, मेरी बात पर हँस क्यो पडी, क्या मैने कोई गलत बात कही है ?" लेकिन गार्गी ने दिल से उठने वाली लहरो को उभरने नही दिया, हृदय के बंद को तोडकर उसे बाहर आने से रोक लिया । उसने नारायण के माथे पर एक लट गिरी देखी, दिल ही दिल मे उसे चूम लिया, गोरे माथे पर काली लट, मालूम होता

था, बादल का टुकडा चाद पर लहराने लगा है। वह देखती रही चुपचाप।

रामनारायण का दिल गार्गी की नजरों से गरमा गया। उसने अपने चेहरे पर गर्मी महसूस की, और मेज के ऊपर बड़े काटे से खेलने वाले हाथों को पकडकर रामनारायण ने पूछा—

"क्यो ? बोलो न।"

उसके ढंग मे शर्म भर गई, लेकिन उसके छूने से गार्गी ने अपने बदन में बिजली दौडती महसूस की। उसकी नजरें मेज पर झुक गई, वह अपना हाथ नारायण के हाथों से खींच लेना चाहती थी, परन्तु उसमे शक्ति बाकी न थी। इतने मे बॉय के कदमो की आवाज सुनाई दी। रामनारायण ने गार्गी का हाथ छोड दिया, तब वह सम्भल सकी। उसने अपनी साड़ी का आचल सम्भाला और खुद भी सम्भल गई। नारायण गार्गी के चेहरे की तरफ ताक रहा था। वह चाहता था, इस कमल के फूल पर वह भौरा बन कर मॅडराता रहे। गार्गी ने चाय प्यालियो मे उड़ेलते हुये कहा—

"आज मै खाऊँ या न खाऊ, आप खूब खाइयेगा।"

"क्यो ?" नारायण ने पूछा।

"मुझे यह देखना है कि पठान ज्यादा से ज्यादा कितना खा सकते हैं।"

"यह जो सामने रखा है, इससे तो डकार भी नहीं आयेगी।" नारायण शेखी में आ गया। "हमारे देश की रोटी तुमने देखी नहीं, हमारे यहा यह जितनी बड़ी मेज है न, करीब-करीब इतनी बड़ी रोटी बनती है।"

"साइकिल पर बैठकर उस रोटी के चारो तरफ चक्कर काटते होंगे।"

नारायण की बात को गप्प समझ कर गार्गी बोली।

रामनारायण का चेहरा लाल हो गया।

"मैं झूठ बोलता हूँ क्या ?"

उसने अकड़कर गार्गी की ओर देख कर कहा।

"नहीं आप झूठ नहीं बोलते, मैं मजाक के मूड में हूँ, आपको गुस्सा क्यो आने लगा ।"

"तुम जानती हो गार्गी, यह सेन्टीमेन्टल बात है, देश की बात है। तुम कभी हमारे रसोई घर मे घुस कर देखो. तुम्हे अब भी हमारे घर में इस मेज से आधी रोटी तो दिखाई दे ही जायेगी।"

"मेज से आधी रोटी ? उफ !"

गार्गी ने दोनो हाथो से अपना सिर दबा लिया।

रामनारायण ने फिर अपनी बात पर जोर देते हुए कहा—

"क्या तुम्हे विश्वास नहीं होता. मै घर से रोटी लाकर अभी दिखा देता हूँ।"

इतना कहते कहते रामनारायण उठ खड़ा हुआ। गार्गी उसका हाथ पकडकर उसे बिठाते हुये बोली—

"मुझे विश्वास है बाबा कि आप लोग पठान हैं, दिखाने की जरूरत नहीं, लेकिन मै पठान नहीं हूँ।"

"मै बना लूगा।" नारायण ने सादगी से कहा।

गार्गी का जी इसपर सर पीट लेने को चाहता था, कि यह आदमी मेरी बात क्यों नहीं समझता। और रामनारायण को गुस्सा आ रहा था, कि गार्गी उसकी बात पर विश्वास नहीं करती, क्या वह झूठा है ? गार्गी की झिड़की में जो प्यार और स्नेह झलकता था, रामनारायण की सादगी मे भी वही प्यार भरा था। गार्गी ने एक बिस्किट काँटे से अपनी प्लेट मे सरकाते हुए कहा—

"चाय नहीं पियोगे, ठण्डी हो जायेगी।"

"चाय क्या पिऊँगा, यहाँ कहवा तो मिलता ही नहीं, जो हमारे देश की चीज है। अरे हाँ, आजकल घर मे आया हुआ है।" उसने मेजपर हाथ मारा और कहा "देखो याद नहीं रहा, अगर थोड़ा सा पुड़िया में डालकर ले आता, तो यहां भी बन सकता था। जब कहवे को चायदानी मे डालते है तो उसके पत्ते हाथ भर चौडे हो जाते हैं।"

गार्गी उसके चेहरे की तरफ देख रही थी, पता नहीं चल सका कि दिल मे वह इस सादगी को प्यार कर रही थी या अपने आप को कोस रही थी। लेकिन इतना पता है कि वह बिना आंख झपके ही नारायण को देखना चाहती थी और बाहर हाल मे बैठे लोगों की बातचीत के शोर के बिना उसकी बातें सुनना चाहती थी। साथमे ऊपर मे उसे डाटना भी चाहती थी। रामनारायण ने सामने रखी "भुनी मुर्गी" की टाग खीची और उसे दाँतो मे पकड़कर हाथो मे खीचता हुआ बोला—

"यहा की जलवायु नानवेजिटेरियन खुराक को अच्छा नही बना सकती। हमारे वतन मे तो यह ·····" और मुर्गी टानोमे नोचने के कारण वह वाक्य पूरा न कर सका। उसकी इस बात पर तो गार्गी की हँसी बुरी तरह छूट पड़ी। "हँसती हो, तुम हँसती हो" रामनारायण ने अपना मुँह रोक कर कहा। और फिर दूसरी टाँग भी साफ कर गया। गार्गी ने थोड़ा सा सलाद अपनी प्लेट मे उडेला और एक वेजीटेबल कटलेस काटे और उठा कर प्लेट मे इस तरह रखा जैसे कोई पाप कर रही हो।

"खाओ न। गार्गी क्या बात है, तुम कुछ खाती ही नही हो, देखो यह पेस्ट्री का एक टुकडा है, यह एक अण्डा।"

"छी छी" गार्गी ने कहा—"क्या कहते हो, मैने कभी अण्डा खाया है ?"

"लेकिन आज खाकर देखो न।"

इतना कहते कहते उसने अण्डा छीलना शुरू किया।

गार्गी ने कहा—

"आप मेरे लिए तकलीफ न कीजिए, मै नही खाऊँगी।"

"इसका मतलब है तुम मुझसे प्यार नही करती।"

नारायण अपने मन के भाव को दृढ करने के लिये झूठ बोला।

"बिल्कुल नही।"

गार्गी ने चाय के प्याले मे शक्कर घोलते हुए कहा।

"मै पहले ही जानता था।"

रामननारायण ने अपने मुहसे हड्डी थूकते हुये कहा।

"जानते थे, तो मुझे चाय पर बुलाया क्यो था ?" गार्गी ने चिढ़ाने की खातिर चेहरे के भाव बदलते हुये जवाब दिया। उसकी भौहे तनी हुई थी, माथेपर बल पड़े थे।

" तुम आई क्यों हो " नारायण उसी अन्दाज में बोला।

गार्गी उँगली से माथे को छूकर बोली—तुम दिल के बड़े छोटे हो।

रामनारायण ने सवाल किया—तुम्हारा दिल बडा है ?

' तुमसे बडा ही है, कहो निकालकर दिखाऊँ। तुम्हे तो खून से सना हुआ दिल देखकर भी कुछ न होगा, पठान जो ठहरे तुम।"

गार्गी ने अपनी समझ मे तेज बात कही। वह उठकर खडा हो गया, जैसे गार्गी ने उसे सुई चुभो दी हो—"मैं जाता हूँ।"

गार्गी ने हाथ पकड़कर रोकते हुए कहा—बिल तो चुकाते जाओ।

रामनारायण ने जोर से पुकारा—बॉय . बिल लाओ।

दो मिनिट तक कमरे मे बिलकुल शान्ति रही वे दोनो आपस मे नज़र बचाकर एक-दूसरे को देखते रहे। बॉय ने बिल लाकर नारायण के सामने रख दिया। उसने जेब मे हाथ डाला और फिर तड़पकर खड़ा होगया।

"मेरा बटुआ ?" गार्गी एकदम हँस पडी, "तुम हँस रही हो ?"

"और क्या करूँ ?"

"अब क्या होगा ? बटुआ तो मेरे पास है नही, कही गिर गया है।"

गार्गी बोली—गिर गया है . या ?

"या किसी ने निकाल लिया है।" नारायण ने गार्गी का वाक्य पूरा कर दिया।

"अब क्या होगा ?"

"होगा क्या ! घबराते क्या हो, वह जो बड़ा चेस्टर बाहर लटका कर आये हो, उसे मैनेजर के पास गिरवी रख देगे इसमे पैसे पूरे हो जायेंगे और अगर न हुए, तो अपनी यह टाई, सूट, पतलून भी उतार कर रख देना मै तो अपने काटे उतार कर दूँगी नहीं, इसके मोती बडे कीमती हैं।"

इतना कहकर वह फिर जोर से हँसने लगी। रामनारायण को गुस्सा आ गया। अजीब लड़की है, इसे समय का भी ख्याल नही। वह गार्गी

को घूरने लगा और फिर एक बार उसने अपने जेब उलट कर इस तरह झाड़े, जैसे कोई छोटा सा मोती खो गया हो। गार्गी एक दम खड़ी हो गई और बोली—

"यह रहा।"

उसने मेज पर हाथ बढा दिया। "कहाँ" ? वह और जरा आगे बढा।

गार्गी ने मेज पर गिरा हुआ बटन उठाया, जो शायद नारायणके कोट से गिरा था। रामनारायण आखे फाडे ताक रहा था। एक उंगली के साथ अँगूठे की मदद से उसने इस तरह बटन उठाया, जैसे वह टूट जायेगा, और बडे गौर से देख कर नारायण की तरफ बढाती हुई बोली—

"एक बार और झाड़कर देखो ना, कोई बटन और भी गिर पड़े।"

"तुम्हें मजाक सूझ रहा है ?"

"पठान होकर घबरा रहे हो, बात क्या है ? पैसे ही देने हैं न, अगर नही होंगे, तो क्या करेगा ? कल आकर दे जायेंगे। चलो काउटर पर चल कर मैनेजर से बात करें।"

"कौन बात करेगा ?" नारायण ने पूछा।

"तुम तो कोरे पठान हो, मैं बात करूँगी।"

रामनारायण के स्वाभिमान को चोट लगी। गार्गी बात करेगी जाकर मैनेजर से, हमारे पास पैसे नहीं हैं। वह सन्देह की आखों से एक बार मेरी तरफ देखेगा, और फिर गार्गी से मुस्कराकर कहेगा—"Oh ! never mind Miss, I can trust the lovers."

यह सुनकर रामनारायण कैसे सहन करेगा। यही सोचकर उसने कहा—

"तुम जाओगी? नहीं, बैठ जाओ।" रामनारायण ने गार्गी को कन्धों से पकड़ कर बैठा दिया। वह यह भूल गया कि अभी थोड़ी देर पहले गार्गी उसे चिढ़ा रही थी। वह बाहर निकला। गार्गी ने पर्दा हटाकर देखा तो राम-नारायण हाथ मे बिल लिए भारी कदमों से मैनेजर की मेज और की बढ़

रहा था। अब गार्गी को तरस आ गया, उसने पुकारा—

"जरा सुनिये तो।"

रामनारायण को जैसे पीछे से सहारा मिल गया, वह वापस आ गया। गार्गी ने मुस्कराते हुये कहा—

"आप मेरे दो रुपये ग्यारह आने दे दे, तो मै आपका बटुआ दे दूँ।"

"दो रुपये ग्यारह आने ? वह कैसे ?" नारायण ने हैरान होकर पूछा, "और बटुआ तुम्हारे पास है, अच्छा मज़ाक है।"

"हा मजाक तो है ही। आप दस का नोट लेकर दवा लेने गये और बीच मे दो रुपए ग्यारह आने खा गये। पाच रुपया पाच आने की दवा मिलती है।"

रामनारायण आसमान से गिर पड़ा।

"गार्गी! और सब कुछ कहना, मगर यह इल्जाम मत लगाना, जिसकी वजह से मेरे बाबू जी परलोक चले गये।"

गार्गी ने उसकी तरफ देखा और बोली—

"मै मजाक नही कर रही। मुझे पिता जी ने जानते हो क्या कहा ?" "क्या ?" नारायण ने पूछा। "कहने लगे कि धनीराम के बेटो ने ब्लैक मारकेट शुरू कर दी। मैं तो हमेशा पाच रुपए पाच आने की दवाई लाता हूँ, यह आठ रुपए की कैसी आई।"

"यह झूठ है।" नारायण आपे से बाहर हो गया।

गार्गी ने कहा—"मैंने पिता जी को भी यकीन दिलाया कि यह झूठ है, और वह यह समझते हैं कि बाकी रुपये मैंने ले लिये है।"

"लेकिन गार्गी!" नारायण बोला, "यह दवा आठ रुपये की है, दुकान से लाया था। बड़े भैया ने खुद दी है।"

गार्गी सोच मे पड़ गई। रामनारायण के चेहरे से सच्चाई का प्रकाश झलक रहा था। बोली—

"मै कुछ कहती नहीं। अगर गलती से उन्होंने पैसे ले लिए, तो यह भूल है, यह कोई अपराध नहीं और अगर खानदान की प्रथा से अलग

चलने का उन्होने फैसला कर लिया है, तो तुम्हे अपनी जिन्दगी के बारे मे आज ही फैसला कर लेना चाहिए।" और गार्गी ने बटुआ निकाल कर रामनारायण के सामने रख दिया। रामनारायण थोडी देर चुपचाप बैठा रहा। फिर बोला—

"भैया ने भूल से ज्यादा पैसे ले लिये होगे, मै जाकर पूछूँगा।" इतना कह कर रामनारायण उठ खड़ा हुआ।

सब खाना खाकर, अन्दर सुहागी के पास बैठे रामायण सुन रहे थे। पेडाखान बाहर उपलो की अगीठी के पास बैठा आग ताप रहा था। छोटे बच्चे दरवाजे की दरार मे बदाम फसा कर दरवाजा बन्द करते, और बदाम को टूटता देख खुशी से ताली बजाते फिर बदाम की गिगी निकाल कर खा जाते। ठाकुरों की अलमारी के दरवाजे खुले थे, अन्दर धनीराम की तस्वीर प्रकाश मे चमक रही थी। सामने सुहागी बैठी पढ़ रही थी। रामस्वरूप उसी कमरे मे बैठा दुकान के खाते लिख रहा था, असली खाते, ब्लैक के रुपये तो वह अपने खाते मे लिखता था। खाते भी काहे को, रुपया रात को लाकर कलावती के पास रख देता, और हफ्ता–दस दिन के बाद बैंक मे जाकर जमा कर देता। आज भी कलावती काले बाजार के कमाये हुए रुपये, अपनी गाठ मे बाध कर हाथ जोड़े कथा सुन रही थी। छोटी बहू रसोई घर मे बैठी बर्तन–भाण्डे सम्भाल रही थी। जब से धनीराम की मृत्यु हुई थी, तब से बड़ी बहू ने रात को रसोई घर में आना छोड़ दिया था। छोटी बहू बिना बोले-चाले घर का सारा काम करती रहती, उसे काम करने में एक खुशी मालूम होती। रात के पहले पहर मे जब सब घर वाले सो जाते, तो उस समय तक वह काम से निपट न पाती।

आज भी जब अन्दर सुहागी ने रामायण समाप्त करके "सुनो वीर हनुमान" कहा, तो कौशल्या के सामने तब भी बर्तनों का ढेर रखा था। उस पर तुर्रा यह कि अभी तक नारायण घर नहीं आया था। वह उसकी राह देख रही थी, वह कभी देर करके घर आता, तो भाभी उसकी राह देखा करती। राह देखना कैसा? उसका काम भी तो समाप्त नहीं हो पाता था। रसोई के बाहर दरवाजे के करीब पैरो की आहट हुई, छोटी बहू ने नजर उठाकर देखा तो रामअवतार खड़ा था, वह बोला—

"मै हाथ बंटा दूँ।"

कौशल्या का मन खुश हो गया, उसकी सारी थकावट उतर गयी। वह इसीलिए रात को देर तक काम मे लगी रहती थी, कि अभी कोई आयेगा और कहेगा "क्यो जी, मै हाथ बटा दूँ?" और वह मुस्कुरा कर कहेगी "नाथ! दासी की सेवा करेगे।" किन्तु आज यह कहने से पहले ही रामअवतार ने अन्दर आकर उसके हाथ से बरतन ले लिये और उठाकर माजने लगा।

"राम राम, यह क्या कर रहे है आप?"

किन्तु रामअवतार चुपचाप उसकी तरफ देखे बिना काम मे लगा रहा। तब तो कौशल्या परेशान हो गई। उसने कहा—

"आप को मेरी सौगन्ध लगेगी, मेरा मरा मुँह देखोगे।"

रामअवतार ने आँखे उठाकर उसकी तरफ देखा और कौशल्याने अपनी बाहे उसके गले में डाल कर कहा—

"आप मेरी कसम की भी परवाह न करेंगे?"

रामअवतार ने बर्तन हाथ से रख दिया, और कौशल्या के राख से भरे हुए हाथ चूम कर उसे खीच कर गले से लगा लिया और कहा—

"इतनी रात गये तू अकेली काम करती रहे, यह भी कोई बात है। तू बर्तन माज ले कोशी, मै इतनी देर में सारे बर्तन धो कर ऊपर चौकी पर रख देता हूँ।"

कौशल्या अपने पति के राख से सने हुए हाथ अपने चेहरे पर मल डाले और फिर अपने आंचल से पोछते हुए बोली—

"न जी, मुझे अच्छा नहीं लगता, आप जाकर अन्दर आराम कीजिये, मै अभी काम सम्भाल कर आती हूँ।"

रामअवतार ने शरारत भरी नजरों से देख कर कहा—

"और अगर मै आराम न करके प्यार करूँ तो?"

कौशल्या ने कनखियों से देखकर कहा—

"मैं जाकर मां जी के पास बैठ रहूगी।"

"मा के पास जा बैठेगी?"

इतना कहते-कहते उसने कौशल्या का हाथ पकड़ लिया, कौशल्या के चेहरे पर लाली दौड गई और बोली—

"छोड दीजिये, नही तो मै मै ."

'मै' से आगे वह कुछ न बोल सकी, क्योकि उसके ओठ रामअवतार के ओठो ने बन्द कर दिये थे।

'खट खट-खट" इतने मे किसी ने घरके बाहरी दरवाजे को थपथपाया।

"कौन है ?"

बाहर से दादा ने पुकार कर पूछा।

"मै" बाहर से रामनारायण बोल उठा।

"अच्छा।"

कहकर पेडाखान खाट से उठना ही चाहता था कि कौशल्या राम-अवतार के बाहु-पाश से अपने आप को छुड़ा कर बाहर भाग गई। दरवाजा खुलने की आवाज सुनकर दादा भी पलग पर पड़ा रहा। नारायण ने अन्दर आकर रामस्वरूप के कमरे की तरफ देखा। वह बन्द था, रोशनदान से हल्की-हल्की रोशनी बाहर आ रही थी।

"क्या छोटे भैया सो गये ?"

नारायण ने भाभी से पूछा।

"नहीं तो,—शायद सो गये हो।"

कौशल्या ने सच बोलते—बोलते, प्यार की छुपी लहर मे बहते हुए झूठ बोल दिया—

किन्तु रामअवतार सामने बरामदे की सीढी पर खडा था, उसने कहा—

"ओए! तेरा यह वक्त है, आने का ?"

रामनारायण को ख्याल आया, सचमुच देर हो गई है। वह गार्गी से निछुडने के बाद न जाने कब तक परेड मैदान मे बैठा रहा। झूठ का सहारा लेते हुये रामनारायण बोला—

"वह, भैया, आज हमारे कालेज में उत्सव था, इसीलिए शाम को आना पड़ा। एक जरूरी बात करनी थी आप से, मै भाभी से आप के बारे में पूछ रहा था।"

"क्या बात है ?"

कौशल्या बोली—"कुछ रुपया मागता होगा, और क्या बात हो सकती है ।"

"नही भाभी, रुपये तो नहीं चाहिए, कुछ और ही बात है ।"

"तो अन्दर आकर बताओ ।" रामअवतार बोला ।

"तो फिर मैं समझ गई ।"

इतना कह कर कौशल्या मुस्कराई और रसोई घर की तरफ चल दी । और दोनो भाई बरामदे की सीढियो पर ही बैठ गये । ठीक उसी जगह जहाँ धनीराम की पगड़ी सुहागी की गोद से गिरी थी । रामनारायण ने दबी आवाज से पूछा—

"वह जो दमे की दवा है, उसकी क्या कीमत है ?"

"पाच रुपये पाच आने, क्यों ?"

"लेकिन बड़े भाई साहब ने मुझसे आठ रुपये लिये हैं ।"

"आठ रुपये ? तुमसे ?"

रामअवतार गुस्से मे आ गया । बड़ा भाई छोटे भाई से भी ब्लैक मारकिट करता है । अब तो बहुत हो गया । पहले तो उसका जी चाहा, वह बड़े बाबू के कमरे मे जाकर चीख पडे और कहे, "देखो तुम्हारा पोता अपने बाप की पगड़ी नीलाम कर रहा है ।" और फिर भाभी से जाकर कहे, "देखो भाभी, बड़े भैया ने तुम्हारे ससुर की आत्मा को दुखी कर दिया है, और फिर अपनी मा को झझोड कर कहे, "मा यह तेरा बेटा है, इसे तूने अपने कोख से जन्म क्यों दिया था, यह मेरा भाई नहीं है ।" लेकिन वह कुछ न कह सका, कुछ न कर सका. बस वही सीढी पर बैठा रहा । उसने सब के दिलो मैं दुख की ज्वाला को भड़काने के बजाय, सारी आग अपने दिल में दबा ली । रामनारायण बोला—"भैया लोग क्या कहेंगे ।" और अपने दिल का बोझ हल्का करके मा के कमरे मे सोने के लिए चला गया । परन्तु रामअवतार अपना बोझ किसके सिर पर डाल दे ? उसकी समझ में कुछ नहीं आता था ।

—×—

आज रामअवतार ने दूकान खोली और सफाई करने लगा तो उसके हाथ मे बैंक की अकाउन्ट बुक आ गई। उस पर कलावती का नाम लिखा था। वह चौक गया। अभी वह किताब देख ही रहा था कि रामस्वरूप आ गया। रामस्वरूप ने आते ही रामअवतार के हाथ से किताब छीन ली। और बोला--

"तुझे तलाशी लेने को किसने कहा?"

'तलाशी तो नहीं ले रहा था भैया, यह किताब देख रहा था, जो माल तुम बाहर बेच आते हो, उसका पता शायद इस किताब में मिल जाये।"

रामअवतार ने ठण्डे दिल से यह बात कही। परन्तु रामस्वरूप बिगड़ गया, चिल्ला कर बोला—क्या माल दुकान पर लाकर रखूं ताकि तू उसे ब्लेक मे बेच दे।

"माल मै काले बाजार मे बेचता हूँ या तुम बेचते हो, उसका पता तो कल रात मुझे राय साहब के घर से ही मिल गया था। छोटे भाई को भी जिसने दुगने दामों दवा दी, वह मुझे चोर ठहराता है?"

"बकवास मत करो। जिस भाव में चाहूंगा माल बेचूगा, तुम्हे रहना है तो रहो, नही तो जाओ।"

"दुकान जैसी तुम्हारी है, वैसी ही मेरी भी है, तुम मुझे निकालने वाले कौन होते हो?"

"बहस करता है?" रामस्वरूप आगे बढा, लेकिन रामअवतार वहीं खड़ा रहकर बोला--

"तुम बड़े भाई हो, इसलिये मुझे अच्छा नही लगता कि तुमसे झगड़ा करके लोगों को तमाशा दिखाऊं। लेकिन मै यह ब्लैक मारकिट नही चलने दूंगा। आज ही इस बात का फैसला करके रहूंगा कि तुम्हे अपने आप

का खून बेचने का हक कैसे पहुँचता है ।"

इतना कहकर वह बाहर निकल गया। रात को यह झगड़ा सुहागी के सामने पेश हुआ, बात बढ़ी और जब रामअवतार चिल्ला कर कहने लगा—

"अपने बाप की मर्यादा बेचने वाला, अपने बाप की कमाई हुई इज्जत का खून करने वाला, मुझे ब्लेक मारकेटर कहता है। अरे अगर तुझे शर्म है तो तू चुल्लू भर पानी मे डूब मर ।"

तब रामस्वरूप अपनी पत्नी के सामने इस बेइज्जती को सहन न कर सका। उसने रामअवतार के मुँह पर चाटा मार दिया। ठीक उसी समय पेड़ाखान कमरे मे घुसा। रामअवतार के मुंह पर लगे हुये चाटे को देख कर उसका खूँन खौल गया। वह आगे बढ़ा और बोला—

"तू तो बड़ा हो गया है। तूने रामअवतार की बीबी के सामने चाटा मारा है, मैं तेरी बीबी के सामने तुझे चाटा मारूंगा।"

इतना कह कर उसका हाथ उठ गया। सोहागी काप गई, क्यों कि रामस्वरूप बड़ा गुस्सा वाला आदमी था। मा को डर लगा कि वह दादा का सामना न कर बैठे। वह घूंघट खीच के दोनो के बीच आगई, उसके पहुंचने से पहिले चाटा लग चुका था। परन्तु रामस्वरूप कुछ बोला नहीं। चाटा खाकर अपने कमरे मे चला गया।

उस रात किसी ने कुछ नहीं खाया। आधी रात के समय पेड़ाखान ने उठकर गाय को घास डाली और बहू को आवाज दी—

"सुहागी, जिस घर में गाय और बहुएँ रात को भूखी सोयेंगी, उस घर मे दीपक-बत्ती कौन डालेगा?" और उसके बाद सुहागी ने मंझली बहू को पुकारा। वह फौरन लिहाफ से निकल कर सास की चारपाई के पास आगई। पर जब बड़ी बहू पुकारने पर न आई, तो सुहागी उसके कमरे तक चली गई, मगर उसकी आखों की जागी हुई नींद भी सो गई। आखिर सुहागी ने कहा—

"सोतों को कोई भी जगायेगा, पर इन जागतों को कौन जगाये। बेटा तो मेरा ही है, मुझे इतना बुरा नहीं लगा, जितना इस बड़ी बहू को।"

अब बहू उठकर बैठ गई। बोली—

"इज्जत तो मेरी है, और औरत की इज्जत औलाद से ज्यादा प्यारी होती है।"

सुहागी भी चुप न रह सकी, कहने लगी—

"मेरे मरे पति की इज्जत तुम्हारे पतिने बेच डाली, मै अपना कलेजा किसको दिखाऊँ ?"

बात बजाय बनने के बिगड़ने लगी। बाहर दादा यह रग देखकर उठ बैठा, कभी वह हाथ लाठी पर रखता तो कभी आसू पोछता था। क्या करे? कुछ समझ मे नहीं आता था। मा आखिर उठकर अपने कमरे में आ गई, और छोटी बहू से बोली—

"बेटा तू खाना खा ले अब इस घर का एक चिराग तो ..

इतना कहते-कहते उसका गला भर गया। वह यह न कह सकी कि बुझ गया। छोटी बहू भी आखे मलकर अपने कमरे मे चली गई। रामनारायण आधी रात के बाद घर पहुँचा। बड़े भैया के कमरे मे बत्ती जल रही थी, और अन्दर से फुसफुसाने की आवाज आ रही थी। पेड़ाखान बैठा हुक्का पी रहा था। वह घबराया, दादा अभी उल्टे-सीधे प्रश्न पूछेगा। परन्तु पेडाखान चुपचाप दरवाजा खोलकर, अपने बिस्तर पर आ बैठा, कुछ बोला नहीं। नारायण भी चुपके से अपने कमरे मे घुस गया। मा के कमरे की बत्ती जल रही थी। लेकिन कमरे मे उदासी छाई हुई थी। रसोई मे छोटी बहू भी नहीं थी, खाना ज्यों का त्यों रखा था। रामनारायण ने खाना नहीं खाया। वह इस डर से कि सब लोग मेरे देर से घर आने के कारण नाराज होंगे, चुपचाप अपने बिस्तर पर चला गया।

इस घर का प्रत्येक आदमी रात भर अपनी उलझनों में फँसा रहा। सब सोने की कोशिश करते रहे, पर कोई भी नही सो सका। रात करवटों में कट गई।

सुबह जब रामस्वरूप कमरे से बाहर निकला, तो सुहागी बरामदे की सीढ़ियों पर बैठी पाव के अँगूठे से जमीन कुरेद रही थी। दरवाजा खुलने

की आवाज ने उसे चौंका दिया, वह चिन्ताओं में खोई, इस घर म दर गए हुए अपने पति को याद कर रही थी। रामस्वरूप ने मा के सामने चाभियां पटककर कहा—

"सँभालो दूकान की चाभियां। मै रावण हू ब्लैक मे माल बेचता हू, और बेचता रहूँगा, क्योकि मै नही चाहता कि मुझे भी कोई मेरे बाप की तरह कत्ल कर दे। तुम सब शरीफ आदमी हो सिद्धातो के लिए मरना भी तुम लोगों को अच्छा लगता है, परन्तु मुझे नही, क्योकि मे समझता हूँ कि आदमी सिद्धात अपनी परिस्थिति के अनुसार बनाता है, और समय आने पर तोड देता है। वह सिद्धात जो टूट नही सकता, लोहे की चट्टान बन जाता है और धर्म का रूप धारण कर लेता है। धर्म भी एक चट्टान है, जिसके साथ सन् १९४७ मे इसान टकराये और खत्म हो गए। मैं अभी जिन्दा रहना चाहता हू।"

सुहागी आश्चर्य से अपने बेटे की तरफ देखती रही। उसके चेहरे पर उसे वही कड़वाहट दिखाई दी, जो उसके बाप के चेहरे पर उस दिन दिखाई दी थी जिस दिन रामस्वरूप ने पहली बार काला बाजार में दवा बेचने की कोशिश की थी। सुहागी ने समझ लिया कि रामस्वरूप अब जिंदगी के गुणो को नहीं, केवल जिन्दगी को देख रहा है। किसान अब इसलिए खेती करना नहीं चाहता कि उसका कर्तव्य है और अनाज अच्छा उगने से उसे खुशी होगी, बल्कि वह मिट्टी को इसलिए कुरेद रहा है कि शायद इससे सोना निकल आए और वह राजा बनकर अपनी हुकूमत जमा ले। फिर भी सुहागी चुप नहीं रही। वह बोली—

"जिन्दगी यदि आदमी के सिद्धातों पर जिन्दा रहती तो मनुष्य कभी नहीं मरता। सिद्धात तोड़ने और बनाने पर जीवन निर्भर नहीं है, वह तो किसी अज्ञात शक्ति के हाथ में है। हां, बहाने जरूर बन जाते हैं। बाकी सिद्धात धर्म की तरह अटूट होकर क्या मनुष्य को मानवता से गिरा कर राक्षस और पशु नहीं बना देते?"

इतना कह कर सुहागी रामस्वरूप के चेहरे की तरफ देखने लगी। उसके चेहरे की सारी कोमलता मिट चुकी थी, और एक घमंड की छाया

छा गई थी। वह अपनी आंख सिकोड़े बिल्ली की तरह मां को देख रहा था। उसने अक्ल के सारे दरवाजे बंद करके केवल वह खिड़की खुली रखी थी जो तर्क की रणभूमि मे जीतने के लिए खोली जाती है, सच्चाई के लिए नहीं। मा ने कहा—

और सन् १९४७ की जिस घटना की बात तुमने की है, वह धर्म की खराबी नही थी, बल्कि मनुष्य की इच्छा की खराबी थी। चाहिये, और चाहिए, अधिक चाहिए, मुझे चाहिए— ये आवाजें एक मनुष्य के अंदर से उठी, और फिर मनुष्य को देखकर मनुष्य बदलने लगा। जब एक बार ऐसी आवाज गूंजती है, तो फिर टकरा टकराकर गूंजती चली जाती है, मनुष्य की बुद्धि से टकराती है, दिलों को खटखटाती है और फिर मनुष्य बदलकर पशु बनता जाता है। ऐसा पशु जिसके हाथ में बुद्धि का अस्त्र होता है और फिर वह खाड़े का नाम धर्म और तलवार का नाम मजहब रख लेता है। धर्म तो ऐसी चीज है बेटा, उससे जो इच्छा करो, वही मिल जाता है। लोगो ने सन् १९४७ मे धर्म से यही इच्छा की थी कि इंसान कटे, मरे। वह कटे, मिटे और मर गए। और अब तुम्हारे अन्दर भी एक चाहत की इच्छा पैदा हुई है। अब तुम अक्ल के बल पर ऐसी बातें कर गुजरोगे, जिसके सामने सन् १९४७ की घटना भी शर्म से पानी हो जायेगी।"

सुहागी इतना कहकर उठ खड़ी हुई। अब उसके पास कहने को कुछ भी नही था। रामस्वरूप ने कहा—

"अगर मै इतना ही बुरा हूँ, तो मुझे अलग कर दो।"

मा के कदम वहीं रुक गये।

"आज तक इस खानदान मे कोई बेटा कभी अलग नहीं हुआ।" सुहागी बोली।

रामस्वरूप बोला—"क्या हुआ, मै खानदान की मर्यादा बदलता हूँ, और तुम लोग मुझे अलग नहीं करोगे, तो मै खुद अलग हो जाऊंगा, कचहरी के दरवाजे खुले हैं।"

सुहागी ने पलटकर रामस्वरूप की तरफ देखा, वह क्या करे, क्या कहे, आखिर बोली—

"मैने कोख से बैरी जन्माया है बेटा। तुम्हारा दोष नहीं है।"

इतना कहकर अन्दर चली गई।

घर के सब लोग यही चाहते थे, कि किसी तरह बड़ा भाई अलग न हो, मगर बड़ा भाई मानता ही न था। रामअवतार और रामस्वरूप के बीच मे फिर बहस चली।

रामअवतार ने कहा, "हम तो बाप की जगह तुम्हे ही समझ रहे थे, भैया। लेकिन जब तुमने बाप की पगड़ी नही सँभाली, तो हम किस गिनती में हैं?"

रामस्वरूप बोला—"बिलकुल सच कहते हो। मै तो अब इस घर में रहकर राम का अवतार नहीं बनना चाहता, तुम जानो और तुम्हारा आदर्श।"

पेड़ाखान ने यह बात सुनी तो वह चुप न रह सका। वह आगे बढ़कर बोला—

"तुम यह समझते हो कि तुम हमारे साथ नहीं रहोगे, तो हम भूखों मर जायेंगे?"

रामस्वरूप ने दादा की तरफ देखा, और कुछ नहीं बोला। पेड़ाखान ने उसके मुँह में हाथ देकर कहा—

"बोल नामर्द, देखता क्या है?"

"क्या बोलूँ, मै तो अकलमन्दों से बात कर सकता हूँ।"

"मैं बेवकूफ हूं? मैं कौन हूं, जानता है? तेरे बाप का बाप हूं। कुत्ते के बच्चे।"

रामस्वरूप बोला—

"अब अगर आपने कुछ कहा, तो जबान मेरे मुँह में भी है, मैं कहे देता हूं।"

पेड़ाखान गुस्से से पागल हो गया। वह भाग कर लठ उठाने अन्दर की तरफ दौड़ा, और बोला—

"ठहर, मैं तेरी जबान ही काटे देता हूँ।"

सुहागी ने जब पेड़ाखान को देखा, तो दौड़कर दोनों के बीच में आ गई। वह रामस्वरूप के दरवाजे की देहली पकड़ कर बैठ गई। उसके चेहरे का घूँघट भी उसके दिल की तरह खुला जा रहा था। पेड़ाखान वहीं पर रुक गया। उसका गुस्सा अन्दर ही अन्दर दब गया, और भावनायें आँखों मे छलक पडी। वह क्षण भर रामस्वरूप के दरवाजे की तरफ देखता रहा, जिसकी देहली पर सुहागी बैठी थी, और अन्दर अन्धेरा था। फिर बोला—

"इसे अलग कर दे, मै इसे घर मे नहीं देख सकता।"

सुहागी शात बैठी रही, उसकी आखो से आसू बहते रहे। दिन को भी सब भूखे प्यासे रहे। रात को मा ने एक बार फिर कोशिश की। बहू के कमरे में जाकर आचल उसके सामने फैला दिया और बोली—

"तू कुलवंती है। इस घर की लाज अब तेरे हाथ में है। तू चाहे तो इस इज्जत के दो टुकड़े न होने दे।"

लेकिन बहू का दिल न पसीजा। वह बोली—

"मै तो मर्दों की बात मे बोलती नही हूँ। तुम्ही ने तो ऐसा कहा था कि तू मर्दों की बात मे बोलने वाली कौन होती है?"

सुहागी अपना अपमान न सह सकी। उसने कहा—

"अच्छा; अगर तू यही चाहती है, कि भाइयों मे फूट पड़ जाय, तो ऐसा ही सही। अपने घर वाले को लेकर जहा तेरा दिल चाहे चली जा।"

इतना कह कर वह तेजी से कमरे से निकल गई।

रामनारायण ने भी सुलह करने के लिये बात की, लेकिन रामस्वरूप से नहीं, भाभी से—

"तुम मेरी मा हो, तुम्हीं ने मुझे पाला-पोसा है, फिर मुझे छोड़ कर क्यों जाती हो?"

भाभी ने साफ जवाब दिया—

"वह तो सच है बेटा, पर जब बन्दरिया के पाव जलने लगते हैं, तो बच्चों को भी पाव के नीचे दबा लेती है।"

छोटे भाई ने कहा—

"आदमी और जानवर मे यही अन्तर तो है कि आदमी ऐसा नहीं कर सकता।"

लेकिन इन बातों का परिणाम कुछ नहीं निकला। हुआ यह कि दूसरे दिन सुबह बड़े भाई ने दूकान के ऊपर एक और ताला चढा दिया, और साथ ही यह भी कहा कि मै वकील के यहा जा रहा हूँ। वकील का नाम सुनकर मा चौक गई। उसने कहा—

"वकील के पास जाने से पहिले मुझे जहर दे दे, ताकि मै वेशर्मी देखने के लिये जिन्दा न रह सकूँ।"

रामस्वरूप न माना। आखिर घर के बाटने की नौबत आ गई। दुकान के माल के तीन हिस्से हुये, दो एक तरफ और एक एक तरफ। घर मे एक गाय थी, उसकी कीमत लगा कर तीसरा हिस्सा बड़े भाई को दे दिया गया। जब सब कुछ बँट गया, तो कलावती ने कहा—

"आलमारी के ठाकुर भी बांटो।"

सुहागन ने जब ठाकुरो की कीमत दे दी, तो बाप की पगड़ी बँटने लगी। रामस्वरूप कहता था—

"इसका तीसरा हिस्सा फाड़ कर मुझे दे दो।"

कानून की दृष्टि से यह बात ठीक थी। सुहागी ने जब यह बात सुनी, तो वह घबरा गई, कहीं पेड़ाखान के कान तक यह बात न पहुँच जाय। उसने धीरे से कहा—

"बेटा! बाप की पगड़ी को खानदान का आदमी ही हाथ डाले, यह मर मिटने की बात है।"

रामस्वरूप अड़ गया। बात बढ़ती चली गई, आखिर रामस्वरूप उठ कर आलमारी की तरफ यह कहता हुआ बढ़ा कि देखूँ, मुझे कौन रोकता है।

मा आगे जाकर खड़ी हो गई, और बोली—

"पगड़ी को हाथ लगाने से पहिले तुझे मेरी लाश पर से गुजरना पड़ेगा।"

रामस्वरूप क्षण भर के लिये रुका और फिर बोला—

"तुम पगडी क्यों रखना चाहती हो ?"

"इसीलिए कि यह निशानी है। इसी की वजह से घर में बरकत है।"

रामस्वरूप के हाथ मे बात आ गई। वह बोला—

"बस इसी कारण से तो मै इसे लेना चाहता हूँ। क्या सारी बरकत इसी घर मे रहेगी ?"

इतना कहकर उसने मा को एक तरफ ढकेल देना चाहा, परन्तु मा हटी नही। वह दीनता भरे स्वर मे बोली—

"आखिर तू चाहता क्या है, पगडी की कीमत ले ले।"

रामस्वरूप— 'अच्छा बोलो पगड़ी के लिए क्या देते हो ?"

यह सुन कर रामअवतार न रह सका उसने जोशीले स्वर में कहा—

"मैं अपनी जिन्दगी देता हूँ, लोगे ?"

"तुम्हारी जिन्दगी की कोई कीमत नहीं है। इस दुनिया में केवल पैसे की कीमत है।" रामस्वरूप ने धीमे स्वर मे कहा।

रामअवतार का जोश और बढ गया, उसने कहा—

"रुपये की कीमत लोभी कुत्तो के लिए होती है, मनुष्य के लिए नही।"

"ठीक है, मैं रुपयों का कुत्ता सही। बोलो क्या देते हो ?"

"मै अपना सब कुछ देता हूँ।"

रामअवतार ने जोश मे कहा।

"अपना हिस्सा लिख दो, तब मानता हूँ।"

"हा लिखे देता हूँ जाओ, मेरा हिस्सा ले लो।"

"ले लूँ ?"

रामस्वरूप ने बात पक्की करने की खातिर कहा।

"हा, हा, ले लो।" रामअवतार बोला, "अगर कहो, तो मैं केवल बाप की यह पगड़ी लेकर यहा से चला जाऊँ।"

"तू क्या कह रहा है, अवतार ?"

मा ने उसे टोका ।

"हा मा, इसका पेट भर जाने दो । बाप ने मरते समय कहा था कि मेरी पगडी तुम्हारे हाथ मे है । मै इसको जिन्दा रखूगा ।" और फिर रामस्वरूप की तरफ मुंह घुमा कर बोला, "ले लो तुम सब कुछ ।"

रामस्वरूप मन में हसा और बोला—

"तुम मर्द हो, अपनी बात पर अड़े रहना ।"

यह काले बाजार का नया तरीका था । रामस्वरूप अपने भाई की भावनाओं की कमजोरी से पूरा फायदा उठा रहा था ।

रामस्वरूप अपने भाई और घरवालो की भावनाओ से परिचित था । ये पगड़ी तो किसी सूरत मे छोड़ेगे नहीं, और वह दूकान मे किसी की हिस्सेदारी नहीं चाहता था । काले-बाजार मे बिना साझे के मनमानी करना चाहता था । अन्त मे वही हुआ । रामस्वरूप ने आधा मकान और पूरी दूकान हथिया ली । दादा की सुहागी ने दरवाजे की ओट से कह दिया—

"जो भाइयो मे तय हुआ, वही होगा, बड़े ने लिया तो क्या, और छोटे ने लिया तो क्या ।"

दादा ने कहा—

"बेटा तू छोटे बेटो के साथ अन्याय कर रही है । क्या पलोंठी के बेटे से इतना प्यार है तुझे ? यह बच्चे क्या करेंगे ?"

सुहागी ने कहा—

"जो इनकी क़िस्मत में लिखा होगा, वही करेंगे ।"

और फिर दूसरे दिन घर में दिवार चुनी जाने लगी ।

दादा दीवार उठते देख कर बार-बार लठ्ठ को हाथ में लेता, और फिर राज और मजदूरों पर बिगड़ने लगता । उसे ये लोग जहर लग रहे थे । वह उनसे कहता—

"तुम आदमी हो ? एक घर के टुकड़े किए जा रहे हो । तुम परदेसी मालूम होते हो ।"

और जब बहू उधर से निकलती, तो चुप हो जाता, आखों में आसू भर कर हुक्का पीने लगता । सुहागी ने जब देखा कि ससुर घर में झगड़ा

खडा कर रहे है, तो वह आगन में काम करने लगी। उसने गाय का गोबर इकट्ठा किया और उपले थापने लगी। अब पेडाखान से न रहा गया। वह मुँह से बडबडाता घर से बाहर निकल गया—

आज घर मे कोई नही था, केवल मॅझली बहू थी, और वह दीवार को उठते देखकर एक आह भर लेती थी। बड़ी बहू दीवार के उस तरफ थी, वह खूब खुश थी। उसका घर भर रहा था, इधर घर खाली हो रहा था। रामस्वरूप ने चारपाइया तक बाट ली थी।

सबसे ज्यादा मुश्किल बच्चो की थी। मॅझली बहू और बड़ी बहू के बच्चे दोनो दादी के पास रहते थे। आपस मे प्यार भी करते थे। वे इस दीवार को देखकर बहुत खुश हो रहे थे और दीवार के ऊपर से कभी-कभी छलाग भी लगाते थे। आगन मे फैले हुए कीचड़ मे लोटने भी लगते थे। कभी-कभी अपनी तोतली जबान मे कहते थे, "हमाला यह घल बनेगा, दादी अम्मा और हम रहेंगे।" इस बात पर झगड़े भी उठते, आखिर रामअवतार के बच्चे ने रामस्वरूप के बच्चे को पटकी दी और उसकी छाती पर चढ बैठा। दीवार के उस तरफ बडी बहू आई और अपने बच्चे को खीच कर एक चाटा मारा, और दीवार के उस तरफ गायब हो गई। दादी एक बार उठी कि उस तरफ जाकर बच्चे को छुड़ाये, लेकिन दीवार से ठोकर खा कर गिरने लगी। किराये के राज ने दीवार पर ईटे जड़ दी। इतने मे कोई रिफ्यूजी गाता हुआ गुजरा:—

"यह कैसी आजादी है,
भाई-भाई को काट रहा है॥
यह कैसी आजादी है।"

"यह कैसा युग है बहू ?" सुहागी ने आज दु:ख भरे अन्दाज से अपनी छोटी बहू से बात की।

वह बेचारी, जिसने कभी दु:ख देखा ही नही था, क्या कहती। बस सास की सूरत देखती रही। दीवार घर के आगन मे खड़ी कर दी गई।

दोनों दरवाजे भी मकान के आमने-सामने पड़ते थे। लेकिन बड़ी बहू का दरवाजा हमेशा बन्द ही दिखाई देता था, और मा के घर का दरवाजा हमेशा खुला रहता, जैसे कह रहा है—"उस दरवाजे में जानेवाले कभी इधर भी आजा। यह दरवाजा नहीं था, मा की गोद थी. जो हर बच्चे के लिए फैली रहती है।"

यह दीवार मजबूत थी, इसमें कोई छेद नही था, केवल ऊपर एक गोल झरोखा था, जिससे एक दूसरे मकान की आवाज इधर से उधर दौड़ती थी। या फिर हवा, या प्रकाश आता-जाता था, लेकिन मां की आँखे अकसर उस झरोखे पर जमी रहती थीं।

बड़ी बहू का बच्चा और मॅझली बहू का बच्चा—दोनों झरोखे पर कभी-कभी आ बैठते थे, और गाल पर हाथ धरे एक दूसरे को देखते रहते थे।

एक दिन रामअवतार के बच्चे ने अपने दरवाजे से उठकर उसके दरवाजे पर जाकर कहा—

"मैं तेरे साथ बोलता हूँ।"

रामस्वरूप के बच्चे ने कुछ कहा नहीं, फिर इधर-उधर झाँक कर किसी को न देख कर धीरे से बोला—

"मैं बोलूँगा, मा मालती (मारती) है।"

"मेरी मा तो नहीं मालती।"

" वहा दादी मां है न ।" रामस्वरूप के बच्चे ने कहा ।

दादी सामनें बैठी कुछ काम कर रही थी, वह इन बच्चो की तोतली बातें सुनकर न रह सकी, उसने दोनो बच्चो को गोद मे उठा लिया, और मुंह चूम कर अपने घर ले आई ।

बडी बहू ने देख लिया था । पहले तो जी चाहा कि बच्चे को गोद से खीच लाये, परन्तु इतनी हिम्मत नही थी, आखिर सास थी न । सास ने दोनो को बिठाकर कुछ खिलाया, पिलाया और उनकी तोतली बातें सुनती रही । शाम को बड़ी बहू के दरवाजे के बाहर उसे छोड़ आई ।

घर की परिस्थिति आर्थिक दृष्टि से काफी खराब हो चुकी थी । यदि मॅझले बेटे रामअवतार को दो चार दिनों मे काम न मिल सका, तो घर के जेवर बेचने की नौबत आ जायगी ।

सारी मुसीबत रामअवतार के सिर के ऊपर थी । उसे ही काम की तलाश करनी चाहिये । सरकार उस जमाने मे रिफ्यूजियों के लिए घर तैयार करवा रही थी । उसके ठेके बड़े-बड़े ठेकेदारो को मिल रहे थे । किसी ने रामअवतार को सलाह दी कि तुम भी ठेका ले लो ।

ठेका मिलने की बात बड़ी सीधी थी । बड़े ठेकेदार, ठेके अपने नाम पर ले लेते थे और फिर उसपर मुनाफा लेकर अन्दर ही अन्दर छोटे ठेकेदारों के नाम, अपने काम के टुकड़े करके बेच देते थे । इसी पर उन्हें काफी मुनाफा मिल जाता था । कोई झगड़ा भी नहीं पड़ता था और मेहनत भी नही करनी पड़ती थी ।

रामअवतार को भी ताराचन्द्र दलाल की मारफत ऐसा ही एक बड़ा आदमी मिल गया, सेठ हरजीमल । सेठ जी ने ठेका देते हुये मोल भाव किये, लेकिन ताराचन्द ने रामअवतार के सामने उनके खानदान की पूरी कहानी सेठ जी को सुना दी । गमअवतार को दिल में तो बहुत बुरा मालूम हो रहा था कि मेरे घर की बातें बताने से क्या फायदा, परन्तु अपनी कमजोर हालत या सज्जनता के कारण उसको रोक न सका । यह दुख की

कहानी सुनकर सेठ जी का दिल पसीज गया। उन्होने तोंद पर हाथ फेर कर देखा कि दिल के साथ कही तोंद तो नही पिघली, परन्तु तोंद अपनी जगह पर सलामत थी और तसल्ली के बाद उसने सौदा तय कर लिया।

रुपयो की अदायगी और काम पूरा करने की जिम्मेदारी के लिए घर के सारे गहने सेठ हरजीमल के पास गिरवी हो गए। जेवर जमानत के तौर पर सेठ जी के पास थे। रुपये काम के लिये वही देता था। मा और छोटी बहू के जेवर, पुराने समय के थे। तीस हजार से क्या कम होंगे, लेकिन वह बिके तो नहीं थे, गिरवी थे। सूद देते जाओ, जेवर तुम्हारा है। जब सरकार रुपये दे दे तो, जेवर ले जाना। इन्ही जेवरो के बल पर रामअवतार ठेकेदार बन गया।

ठेकेदारी शुरू करके पता चला कि यह तो जी का जंजाल है। सुबह मुँह अन्धेरे उठकर जाता तो आठ दिन तक काम पर ही रहता। काम शहर से तीस मील दूर था। रोज आना-जाना कैसे हो सकता था, फिर अगर रामअवतार मौके पर न रहेगा तो काम करेगा कौन? मजदूर यो तो आमतौर पर बडा ईमानदार होता है, लेकिन जब उसका मालिक बेईमान होगा तो वह ईमानदारी कैसे बरतेगा। जहा मालिक की आख फिरी, काम बन्द, और जहा वह सिर आया, हाथ जल्दी-जल्दी चलने लगे। फिर यह सौदा घाटे का ही होता था। जो मुनाफा था, वह तो सेठ जी पेशगी ही ले चुके थे। अब अगर छोटे ठेकेदार नियम के अनुसार मजदूरों से बेईमानी करें, तो घाटा पूरा हो सकता है, वरना सब चौपट। छोटे, बड़े सब ठेकेदार, मजदूरो से पहले यह तै कर लेते थे, कि महीने मे दो दिन का पैसा सरकारी हो जायेगा, यानी नही मिलेगा। काम तीस दिन और तनख्वाह २८ दिन, मतलब यह कि उनके लिये हर महीना फरवरी का महीना हो जाता था।

दलाल ने रामअवतार से कह दिया था कि जरा अकलमन्दी से काम करोगे, तो वारे-न्यारे हो जाओगे। परन्तु यहां तो न्यारे भी वारे जा रहे थे। मां के जेवर बीवी के जेवर, यह सब न्यारे ही तो थे—जो रोटी कमाने की धुन में वार दिये गये थे। रामअवतार मजदूरो की एक दिन

मजूरी रोक ले, क्यो ? वह यह नही समझ पाता था।

रामअवतार का जो कारिन्दा था, वह भी दलाल ने दिया था। सेठ जी का आदमी भी देखभाल के लिये आता था। सब इसकी मदद करते थे, लेकिन कारिन्दा मिट्टी और रेत तो सम्भाल कर रखता था, परन्तु रात को सीमन्ट की बोरिया गायब कर देता था। सीमन्ट परमिट पर खरीदा जाता था, और वह ब्लैक मे बिक जाता था। माल कारिन्दे के जेब मे भर जाता था और रामअवतार का गोदाम खाली हो जाता था।

धन्धा चौपट होता गया। सेठ जी के मुशी चाय-पानी का अलग इन्तजाम कर लेते थे। बात जो बिगडी तो बिगडती ही चली गई। रामअवतार सोचने लगा कि सभी जगह काले बाजारी है। जो काले-बाजार नही करते, वह भूखे नंगे रहते हैं। उसे विश्वास होने लगा कि ऊपर के लोग भी काले बाजार के व्यापारी होगे। यह पुलिसवाले, काग्रेसी, यह सरकार फिर सबके ऊपर जाकर उसकी नजर ठहर जाती। नहीं, नही, यह लोग काले बाजार का धन्धा नही कर सकते, उनको तो जिन्दगी भर जेलों से वास्ता रहा है।

काले–बाजार की बरकत तो उसके भाई रामस्वरूप से भी साबित हो रही थी। वह फैल रहा था, और फैलता क्यो न ? उसने कोई ठेका तो लिया नही था, मजदूरो के पेट काटने का भी उसके सामने प्रश्न न आता था। रामस्वरूप तो बीमारो की गर्दने काटता था। बीमार को डाक्टर ने जो नुस्खा लिखकर दिया है, वह तो उसे चाहिये ही। दो चार रुपये जिन्दगी के सामने क्या मूल्य रखते है। लेने वाला भी खुशी से देता और बेचने वाला खुशी से ले लेता। इस खुशी मे रामस्वरूप की जिन्दगी भी सुधरती गई, सिर्फ बाहर की जिन्दगी, जिसमें शान–शौकत का दिखावा ही सब कुछ होता है। रामस्वरूप की जिन्दगी मे यह झूठ खूब चढ़ गया था।

गर्मियो के दिनो मे रामस्वरूप ने मसूरी मे एक कोठी मोल ले ली थी, और एक दूकान भी खोल दी। परन्तु उस घर मे जगह की बड़ी

कमी थी। घर मे केवल दो कमरे थे, उसमें से एक रसोई मे खप गया और दूसरे मे सब सोते-बैठते थे । दादा इसीलिये बाहर चले गये थे ; भला बहुओ के कमरे मे कैसे सोते । रात को जब मझली बहू रसोई से उठकर अन्दर आती, तो रामअवतार, जो आठ दिन के बाद घर आता था, सो रहा होता । कौशल्या सब को सोते देखकर दूर से खड़ी–खड़ी उसकी तरफ देखती रहती । रामअवतार धीरे–धीरे कमजोर होता जा रहा था। वह सोचती आठ दिन के बाद आये हैं, जाने वहा रोटी भी खाते हैं या नहीं, यह सोचते–सोचते अपने बिस्तरे पर पड़ी रहती । रात को उठकर फिर देखती, रामअवतार की रजाई उसके पाव की तरफ दिखाई देती, वह धीरे से खिसका कर उसे ओढ़ाने जाती, तो रामअवतार उसकी कलाई पकड़ लेता । इस समय उसकी हालत देखने योग्य होती । वह बेसुध सी हो जाती, पर प्यार के रस का मेह बरसने लगता । वह सम्भालने की कोशिश करती, तो उसके ऊपर गिर-सी पड़ती । चूड़िया खनक उठती, वह एक कलाई की चूड़िया पकड़ती तो दूसरी कलाई खनकने लगती ।

किन्तु एक दिन दोपहर को मा किसी काम से बाहर गई थी । दादा भी घर मे नही था । कोशी आगन में उपले थाप रही थी। अपने पति को देख कर उसका दिल खुश हो गया । उसने घूंघट की आड़ से देखा। रामअवतार ने पुकारा—

मा...मा...

कौशल्या ने वहीं से धीरे से सर हिलाया कि मा घर में नहीं है । परन्तु रामअवतार ने समझ कर भी समझने से इन्कार कर दिया । और फिर चिल्लाया।

मां ........

अब कौशल्या ने हाथ का उपला दीवार की तरफ फेंकने के बजाय हाथ में ही लेकर पास आ गई और बोली—

"मां जी बाहर गईं हैं ।"

रामअवतार ने इधर-उधर देखा और पूछा—

"तुम अकेली ही घर मे हो ?"

कौशल्या ने इन्कार में सिर हिला कर कहा—

" नही "

" तो और कौन है ?" उसने धीरे से पूछा ।

" आप "

इतना कहकर कौशल्या हँस पड़ी, और उपले थापने चल दी । राम-अवतार ने उसका आचल पकड़ लिया और बोला—

" कोशी "

कोशी ने पलट कर देखा, आचल उसके हाथ में देखकर उसके हाथ-पाव फूल गए । उसकी आखो में एक अजीब प्यार उमड़ आया । वह सर झुका कर बोली—

" कोई देख लेगा ।"

" देख लेगा, तो क्या होगा ? व्याह हुआ है हम दोनो का गाजे-बाजे के साथ ।"

कौशल्या निरुत्तर हो गई ।

और आगे बढ कर उसने हाथ पकड़ना चाहा तो बहू के सर से घूघट उतर गया, आचल फर्श पर झाड़ू देने लगा । गोबर के सने हुए हाथों से उसने शर्म के मारे मुँह छिपा लिया, और भाग कर सीढ़ियों पर जा बैठी । रामअवतार ने उसे गोदी मे उठा लिया और अन्दर की तरफ ले चला । जब दोनो नजरो से ओझल हो गये तब सीढियो पर केवल पाव के निशान ही रह गये । बाहर से दरवाजा खुलने की आवाज आई । सास घर मे आ गई, उसने आवाज दी ।

"बहू"

उसकी आवाज के साथ ही, मँझली बहू भागकर बाहर आने लगी, फिर सँभली और रसोई मे जा घुसी । घड़े मे पानी ले कर हाथ धोने लगीं,

लेकिन घड़ा जमीन पर आ गिरा, और फर्श पर पानी बह गया। सास जब बड़े कमरे में पहुँची तो रामअवतार भी रसोई से बाहर निकल कर भाग गया। सास ने घडा फूटने की आवाज सुनी तो रसोई मे चली गई, और टुटा हुआ घड़ा देखकर रुक गई। बहू को देखा और बोली—

"क्या हुआ ?"

वह कुछ न बोल सकी, सास शायद समझ गई थी बोली—

"क्या रामअवतार आया था ?"

कौशल्या बिना जवाब दिये बाहर चली गई, और उपले थापने लगी।
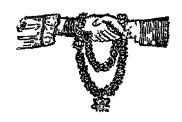
बटवारे के पश्चात बडे भाई और छोटे भाइयो में कोई बात नहीं हुई थी। सड़क पर आमना-सामना हो जाता तो रामस्वरूप मुँह घुमा लेता। लेकिन अब उसने एक 'फिटन'' रख ली थी। भाई के सामने से घोड़ा दौड कर गुजर जाता, और पीछे रह जाती धूल, जिसका एक भभौका रामअवतार के चेहरे पर भी पड जाता। बडे भाई की जिन्दगी तेजी से बढ रही थी, और छोटा भाई जिन्दगी को घसीट रहा था, और उसके साथ पूरा कुटुम्ब घसिट रहा था। दोनों की जिन्दगियो मे जितना फासला बढता जाता, उतना ही फासला दिलो के बीच भी जोर पकडता जा रहा था। इतने बडे फासले के बाद फिर मुलाकात होती तो कैसे?

रामस्वरूप के बच्चे की सालगिरह सर पर आ गई। दूसरे घर में सालगिरह की तैयारिया बडे जोर शोर से होने लगी। मा ने सोचा इस मौके पर सुलह हो जायेगी। आखिर वह मुझे बुलाने तो आयेगा ही। मैने उसे पाल पोस कर बडा किया है। वह बुलायेगा क्यो नही? और अगर नहीं बुलायेगा तो लोग क्या कहेगे? यही बाते सोच कर सुहागी मन ही मन मे खुश हो जाती, और फिर धनीराम की मौत के बाद, उस घरमे यह पहली खुशी थी। आज तक सुहागी अपने सर पर मैली चादर ओढे घूमती थी।

आज अपने पोते के जन्म-दिन की धूमधाम के दिन सुहागी का बड़ा बेटा रामस्वरूप और उसकी बड़ी बहू उसके सर से सोहाग देंगे, क्योकि बेटो को अच्छा नही लगता था कि मा काले-नीले कपड़े पहन कर सोहाग मनाती रहे। यह सब बातें सोचकर सुहागी ने अपनी पुरानी ट्रंक खोली। एक तिल्ले का जोड़ा निकाला, रेशमी दुपट्टा निकाला और अपना एक जोड़ा काटकर रामस्वरूप के बच्चे के लिए एक सूट बना दिया। जब समय पर बुलायेंगे तो बच्चे को क्या दूँगी? सब कुछ तैयार करके सुहागी बड़े चाव से बुलावे की

राह देखने लगी । उसकी नजर हमेशा दरवाजे पर लगी रहती, परन्तु राम-स्वरूप नही आया, और न बडी बहू ही आई । किन्तु मा की आस थी कि टूटती ही नही थी । वह एक टक दरवाजे की तरफ देख रही थी ।

जब जन्मोत्सव के केवल तीन दिन बाकी रह गये, तो मा की आशा घटने लगी । इसलिए आज वह आधी रात तक आगन की सीढियो की सर्दी न झेल सकी । वह उठकर, अन्दर मंझली बहू के पास रसोई मे जा बैठी । मझली बहू कौशल्या बर्तन माज रही थी । मा ने आकर कहा—

"बहू, अभी काम से निपट नहीं चुकी, ला मैं तेरा काम कर दूँ ।"

इतना कहकर मा ने बहू के हाथ से बर्तन ले लिए ।

" नहीं मा जी अभी काम हो जाता है, अब बर्तन ही तो रह गए है ।" और सास के हाथ से बर्तन छीनते हुए बोली, 'आप के हाथ इतने ठण्डे हो रहे है, बर्फ !"

"बाहर आंगन मे बैठी थी न ।"

" इतनी सर्दी मे आप क्यों बाहर बैठी थीं ?"

सास ने अपने दिल की बात छुपाई और पास रखे चूल्हे मे हाथ तापती हुई बोली—

"यों ही बेटा !"

" मैं चाय बना देती हूँ "

"नहीं बेटा, चाय की जरूरत नहीं है । एक बात बता, अपने मुन्ने की साल गिरह कब है ?"

बहू दिल मे खुश होकर बोली—

" यह तो फागुन का महीना है, चैत की पूर्णमासी को होगी ।"

" मै यह सोचती हूँ, कि अब की धूम धाम से मुन्ने की साल गिरह मनायें ।"

बहू कुछ बोली नहीं, उसकी नजर अपनी नंगी कलाइयों पर पड़ी । बिखरी हुई गृहस्थी का ध्यान करके वह एक सास छोड़ कर चुप हो गई । सास ने फिर खामोशी तोडी—

"यह अपने रामस्वरूप के यहा परसो सालगिरह है? क्या तू समझती है, वह बुलाने आयेगा।"

सास के दिल की बात बहू समझ न सकी वह बोली—

"जेठ जी को आना तो चाहिये, दादी नही होगी तो .. .."

सास ने बहू की अधूरी बात को पूरा होने ही नही दिया, और अपने दिल की बात कह डाली—

"लो, दादी होगी क्यो नही? मेरा रामस्वरूप ऐसा नही है।"

"हा, मा जी, जेठ जी तो ऐसे नही थे, पर अब तो बात ही और हो गई। इतने दिनो के बाद घरबार सब लेकर भी कभी कुशल पूछने नहीं आये।"

."अरी बहू, तू नहीं जानती! यह सब उसका दोष है। मैंने ऐसे घर की बहू लेकर अनर्थ किया। मेरा बेटा तो सचमुच राम का स्वरूप था, पर हर नारी तो तेरी ही तरह सीता नही होती। बहू ने पट्टी पढा-पढा कर उसका मन मैला कर दिया है।'

बहू ने कहा—

'लेकिन जेठानी जी तो कभी आप के सामने बोली तक नहीं, बात तो सारी जेठ जी ही करते थे।'

"हा, यह बात तो है। असल में इस देश का पानी खराब है बहू। यह वह जगह होगी, जहा श्रवण ने अपने मा-बाप की कावड रख दी थी, और किराया मागने लगा था।"

बहू सास की तरफ देख भी नही सकी, क्यों कि सास का स्वर दुख से भरा था। वह चुपचाप काम करती रही। उसने आग पर पानी चढ़ा दिया था, उसमें पत्ती भी डाल दी थी, अचानक उसे याद आया कि घर में दूध ही नहीं है। दबी जबान से उसने कहा।

मा बोली—"तो कहवा अच्छा है बेटा, सर्दी मे तो कहवा ही पीना चाहिये। हरी चाय भी कहा से आयेगी? काली चाय की पत्ती ही थोड़ी सी डाल दे।"

देगची चूल्हे पर चढी थी, पानी उबल रहा था। आग जल रही थी। आग की लपटे मा के मुख पर उसके दिल के भाव को प्रकाशित कर रही थी। उसने विचार किया—मेरा पुत्र मुझे दुखी क्यो कर रहा है। मा और पुत्र का नाता तो अटूट होता है, उसे ध्यान आया मेरे ब्याह के बाद जब रामस्वरूप ने ससार मे आने से पहले एक अनदेखा रूप धारण किया था, तब मैं बहुत दुखी हुई थी। अनजान थी, कुछ जानती नही थी, घर में समझाने वाली सास भी न थी। यह पुत्र उस समय मुझे जी का जजाल लगता था। उस समय की मेरी भावना बाहर किसी दूसरे पर प्रकट हुई हो या न हुई हो, किन्तु मेरे अन्दर जो मेरी ही कोख मे बैठा हुआ था, उस पर मेरी भावना अवश्य प्रकट हुई होगी। इसी कारण यह विद्रोही हो रहा है। यह मेरा ही द्वेष है, जो मेरे सर पर चढ़ कर बोल रहा है।

इतना सोच कर उसने एक लम्बी सास छोड़ी।

बहू ने गुड़ और चाय की पत्ती डाल कर मा को दे दी। और सास के पास बैठकर उसके चेहरे को तकने लगी। सास कहती जा रही थी—

"नही, वह जरूर आयेगा। देखना बेटा, मैं उसे खूब तमाशा दिखाऊँगी। पाव पकड़ कर माफी मागेगा, नाक रगड़ेगा, तब माफ करूँगी और फिर जाऊँगी उसके घर।"

"दादा भी जायेगे ?"

"लो! वह क्यों नहीं जायेगे, उनके बिना इस घर की बहू कैसे जा सकती है।"

"पर मा जी मुझे ऐसा लगता है, दादा जायेगे नहीं। वह माफ नहीं करेंगे। उन्होंने तो जेठ जी को दिल से निकाल दिया है। कभी उनकी बात तक नहीं की, उनके घर की तरफ कभी देखा भी नहीं।"

"हा यह तो है, पर जब मैं जिद्द करूँगी तो उन्हें जाना ही पड़ेगा।"

रात के उसी पहर में आंगन में खडी दीवार की दूसरी तरफ, राम-स्वरूप ने घर की आलमारी खोल कर देखा। वह शराब की बोतलो से भरी थी।

"इतनी शराब कौन पियेगा?'

कलावती ने पूछा।

"अरे; आज कल तो सब शराब ही पीते हैं। बड़े लोग आ रहे हैं। अगर कोई चीज कम पड़ गई, तो बदनामी नही होगी?"

"आदमी कितने आयेगे?"

"कोई तीन-चार सौ तो आयेंगे ही। मैंने लिस्ट बना ली है। कार्ड छपवा कर बाट भी दिये।"

"चार सौ कार्ड, इतने आदमी?" कलावती हैरान हो गई।

"हा, सारा मुहल्ला बुलाया है। बाजार के लोग भी आयेंगे। उनकी पत्निया और बच्चे तो गिने ही नही। मेरी रानी, तू जानती नहीं, तेरा रामस्वरूप अब बड़ा आदमी बन गया है।"

रामस्वरूप ने यह कहते-कहते उसकी ठोडी पकड़ ली।

कलावती ने ठोड़ी से हाथ हटाते हुये कहा—

"साल गिरह के दिन मेरे लिये क्या लायेंगे?"

'जो तुम कहो।"

"लो, मै क्यो कहूँ।"

"अपनी खुशी की चीज मँगवा लो।"

"ना जी, अब की तो आप की खुशी करूँगी।"

'मेरी खुशी तो तुम हो।"

इस तरह प्यार-भरी बातों में उनकी रात कट गई। उन्होंने जमाने भर की बातें कीं, लेकिन मां की चर्चा नहीं की। वह आयेगी या नहीं,

...ना चाहिये या नही, ऐसी कोई बात नही हुई. न दिल मे ही ख्याल आया कि इस दीवार के पीछे कपड़े-लत्ते तैयार करके एक औरत दरवाजे की तरफ देख रही है। सब को बुलाया तो उसको भी बुलावा भेज दो, वह पराई तो नही, है तो तुम्हारी ही मा, लेकिन उसे बुलाता कौन। उसने मेहमानो की कई श्रेणिया बना रखी थीं। पहली श्रेणी वह थी, जिसमे व्यापारी आते थे। दूसरे नम्बर पर वह लोग आते थे, जो सरकारी नौकरियो मे थे, जैसे पुलिस वाले, सी० आई० डी० वाले, फिर वकील। तीसरी श्रेणी उन लोगों की थी, जो आते-जाते रामस्वरूप को सलाम करते थे। चौथी श्रेणी मे वह लोग थे, जो रामस्वरूप की सेवा करते थे बिना किसी मतलब के, केवल इसीलिए कि वह बग्घी पर चढता है, पुलिस वालो से उसका सम्बन्ध है, अंग्रेजी कपड़े पहनता है, अंग्रेजी बोलता है।

सच बात तो यह है, कि बीसवी सदी विज्ञापन की सदी है। जितना बड़ा विज्ञापन, उतना बड़ा आदमी, और जितनी बड़ी तिजोरी, उतना बडा विज्ञापन। रामस्वरूप इस बात को खूब जानता था।

मा किसी श्रेणी मे न आती थी, क्योकि न उसके पास पैसा था, न रोजगार से उसका कोई सम्बंध था और न काम कर सकने वालों मे उसकी गिनती थी। उसके पास तो केवल ममता थी, जिसकी आज की दुनिया मे कोई हैसियत नही। आज कल मा घर के कबाड़ की तरह होती है। सोसायटी की इज्जत का डर उसे सामान की तरह बेचने की आज्ञा नहीं देता, इसीलिए पुरानी टूटी-फूटी बेकार चीजों के साथ उसे बेचा नही जाता, वरना उसे भी बेच दिया जाता।

रामस्वरूप की मा भी उसके लिए बेकार की चीज बन गई। उसे जब दुनियादारी की हविस से फुरसत मिलती या कोई एक-आध घाटा पड़ता तो उसे मा याद आती। आजकल की दुनिया में मा और भगवान केवल दुख के समय की चीजे हैं। एक सेवा करती है, और दूसरा कष्टों का निवारण करता है।

रामस्वरूप को कोई कष्ट नही था, चैन की बंसी बज रही थी। तब भला उसे मा याद आती तो कैसे ?

दूसरे दिन मुँह अन्धेरे ही मा आँगन मे बैठ कर रामस्वरूप का इन्तजार करने लगी, कि कल सालगिरह है, आज तो रामस्वरूप जरूर आयेगा । रामवतार भी अगर आज काम पर से आ जाय तो अच्छा होता।

लेकिन रामअवतार का काम झगड़े मे पड़ गया था। कन्ट्रैक्ट लेते समय सेठ हर्जी मल लिखकर दिया था, कि दो महीने के अन्दर काम खतम कर देगा। लेकिन जब तीन महीने मे भी काम समाप्त न हुआ, तो सेठजी ने वकील के द्वारा रामअवतार को नोटिस दे दी कि नुक्सान अदा करो। रामअवतार बेचारा इन झगड़ों से परिचित न था। उसने सोचा अब सलाह किससे ले। कारिन्दे नें तो साफ कह दिया—

"साहब यह केमिस्ट की दुकान नही है, सेठ हर्जीमल बड़े टेढे आदमी हैं, वह तो हरजाना वसूल करके ही छोडेगे।"

रामअवतार नोटिस लेकर सोचने लगा कि क्या करे, कोई ऐसी मशीन निकल आये, जिससे रात भर मे सारा काम खतम हो जाय, लेकिन ऐसी मशीन तो अभी तक कोई नहीं बनी। वह अलाउद्दीन का चिराग, जिसकी मदद से दर्जी के लडके ने एक रात मे महल बना दिया था, कहा से मिलेगा ? फिर उसने सोचा, मै तो पागल हो जाऊँगा, बीसवीं सदी मे, सोलहवीं सदी की कहानी याद कर रहा हूँ। मुझे क्या करना चाहिए ?

साथ के ठेकेदारो ने भी यही कहा कि हर्जीमल के चाटे हुए हरे नहीं हुये। उसने सोचा, जब मै धन्धा करने जा रहा था, तो सब कहते थे, हर्जीमल बड़े दयालु हैं, गरीबों को दान पुण्य करते रहते हैं, मगर आज सब उसके साप होने की गवाही दे रहे हैं। आखिर क्यों ? उसकी समझ में यह बात नहीं आई। वह उठकर सीधा शहर की तरफ चला। लारियों के अड्डे पर उतरकर सोचने लगा कि कहां जाये, क्या करे ?

सामने बाजार मे उसकी दूकान थी, "धनीराम एण्ड सन्स"। अब बड़ा भाई वहा बैठता है। उसने सोचा बडा भाई है, उससे सलाह करना ठीक है। इतना सोचकर वह दूकान की तरफ चला, लेकिन वहा तक पहुँचते पहुँचते उसके पैर थक गये। उसे यह बात अच्छी मालूम नहीं हुई। जिसने उस दिन बाप की पगड़ी नीलाम करके दूकान हथियाली, मकान बॉट लिया, ब्लैक मारकेट जिसका धन्धा है, वह उसके पास कैसे जायेगा। इससे तो मौत अच्छी है। दुकान के पास पहुँचकर उसके कदम रुक गये। बड़ा भाई फिटन से उतरकर दूकान के अन्दर जा रहा था। उसने अवतार को देखा और मुँह छुपा कर अन्दर चला गया।

रामअवतार शर्म और दुख के सागर मे डूब गया। भाई ने समझा होगा यह उससे कुछ मागने आ रहा है। छी., मैं इस तरफ आया ही क्यों? वह पलटा और इस दुख को मिटाने के लिए जिस तरफ मुँह उठा, निकल गया। अनजाने में वह सेठ हजीमल के घर मे जा घुसा। सेठजी ने देखकर कहा—

"आओ, आओ रामअवतार, तुम कई दिनों से दिखे नहीं।"

उसने जाकर सेठ के सामने नोटिस फेंक दिया और कहा—

"यह आज ही मिला है, और आज ही चल कर आ गया हू।"

सेठजी ने नोटिस देखकर कहा—

"अरे, तीन महीने बीत गए, हमें तो कई लाख का 'फटका' पड़ जायेगा। जरा देखना मुनीमजी, क्वार्टर कब तक तैयार करने की बात की थी।"

मुनीमजी से इतना कहकर सेठजी उठ गए और जाते-जाते कह गए—

"मैं अभी अन्दर से होकर आता हूं।"

उनके जाने के बाद, सेठजी का नौकर कुछ खाने–पीने का सामान उसके सामने रख गया, साथ ही मुनीमजी ने खाता भी ला रखा। मुनीमजी बोले—

"राम राम, सेठ हजीमल लोगों की मदद करते-करते खुद मुसीबत में फॅस जाते हैं। लो देख लो खाता, गवर्मेन्ट को लिखकर दिया है या नहीं?

इसमें तीन लाख का हरजाना देना पडेगा। इस ठेके के छः टुकड़े किये गए थे, तीन सेठजी खुद बना रहे थे, और तीन लोगो को बाट दिए थे। एक भी काम पूरा न हुआ। अपना काम एक महीने में खतम कर दिया था। अब बाकी खतम हो तो बात बने। यह नोटिस भी गवर्नमेन्ट का आ चुका है। इसलिए आपके हिस्से हरजाने का रुपया आयेगा पचास हजार। वह दे दीजिए, बाकी सेठजी की मर्जी है, चाहे तो दस लाख पल्ले से दे दे। हम कुछ नही कहते हा।"

सेठजी अन्दर से बाहर निकल रहे थे, बोले—

"पल्ले से देकर अपना पेट कहा से भरूँगा मुनीमजी। आप लोगो को अच्छी शिक्षा दिया कीजिए।"

मुनीम घबरा गया। उसने रामअवतार की ओर देखा और बोला—

"मेरा इसमे क्या दोष है सेठजी? आप, लोगो को खाता दिखाने को कहते हैं, फिर उनको रुपया देते हैं, काम देते हैं, घाटा नही पड़ेगा तो क्या नफा होगा? आप जाने और आपके यह लोग, मुझे क्या? हा।"

सेठजी ने डाटकर कहा—

"चुप रहो मुनीमजी, घर आये लोगो का निरादर करना महापाप है।" और फिर रामअवतार से बोले—

"क्षमा करना भैया, यह लोग जरा मुँह चढ़ गए हैं।"

मुनीमजी खाता लेकर गद्दी पर जा बैठे, और दिल ही दिल में हँसने लगे, फिर पास बैठे दूसरे मुनीम से बोले—

"अब साला मरेगा।"

सेठजी ने धीरे से कहा—

"भैया, मै तो तुम्हारी मदद करने गया था, खुद जंजाल में फँस गया, मुझे तो अपना घर-बार बेचना पड़ेगा। अब तुम्हीं बताओ क्या करूँ?"

रामअवतार सेठजी का हाल सुनकर अपना दुख भूल गया। वह हैरान होकर उनकी तरफ देखने लगा, कि सचमुच सेठजी तो मेरे कारण तबाह हो जायेंगे, तीन लाख का घाटा। इतने मे सेठजी के नौकर ने आकर कहा—

"खाना खा लीजिये।"

सेठजी डाट कर बोले—

"अबे देखता नही, लाखो रुपये बरबाद हुए जा रहे हैं, और तुझे खाना सूझ रहा है।"

"जी मुझे नहीं, वह माताजी।"

"जाकर कहो अपनी माताजी से, अब खाने की बात उठा रखे, घर का सब कुछ नीलाम कर लेगी सरकार।"

नौकर मुँह उठाये देखता रहा, और सेठजी ने एक लम्बी आह भरी—

"हाय री किस्मत, सेठ हर्जीमल अब चन्द दिनों में भिखारी "हर्जू" बन जायेगा।"

रामअवतार गुनहगार की तरह फर्श की तरफ देखता रहा। उसे सेठ जी की तरफ देखने की हिम्मत तक नही हुई। आखिर उसने कहा—

"सेठ जी इस दु:ख से बचने का कोई उपाय।"

"अरे भाई उपाय क्या है? सरकार के घर में क्या उपाय हो सकता है? वह तो मानेगी नही, और तुम्हारे पास भी तो पैसा होगा नहीं?"

"अजी, पैसा कहा से आयेगा। मैने तो अपने सारे खानदान के गहने आपके पास गिरवी रख कर इस ठेके पर रुपए लगाये थे। अब तो घर में फाका ही रह गया है।"

"राम, राम, अब तो तू ठेका भी पूरा नहीं कर सकता। अरे भैया, तुमने पहले ही क्यों न कहा, मै रुपए का इन्तजाम कर देता, पर अब तो हरजाने के बिना कुछ होने का नही। और अन्दर की बात यह है कि मेरी भी अब पोल ही रह गई है। हाय हाय!"

सेठजी ने माथा पकड़ लिया और एक सफल अभिनेता की तरह सर झुका लिया।

रामअवतार सेठजी के दुख में बह चुका था। उसने कहा—

"अगर मेरा सब कुछ लेकर भी आपकी इज्जत बच जाये, तो ले, लीजिये।"

सेठजी ने एक लम्बी सास ली, अन्दर से सतोष की, ऊपर से दुख की। फिर बोले—

अच्छा रामअवतार जी, मेरी बात तो किस्मत पर रही, मगर आप इस ठेके को छोड़ दीजिए। अगर सरकार राजी हो गई, और हरजाना आधा हो गया, तो ठीक है, वरना मेरी किस्मत।"

इतना कहकर सेटजी अन्दर चले गए, और जाते हुए मुनीमजी से कह गये—

"इनसे लिखा पढ़ी कर लो मुनीमजी। जो गवर्नमेन्ट को भरना होगा, भर देगे। अगर कुछ मुनाफा निकलता हो, तो इनको दे दो, घाटा खाते मे डाल दो।"

मुनीमजी खाता लेकर आ बैठे और बोले—

"भाग्यवान हो भाई जो ऐसे सेठ मिले है।"

सेठजी ने अन्दर जाकर खूब डटकर खाया। तोद पर हाथ फेरते हुए सेठानी से बोले—

"ले भाग्यवान, एक तो कट गया।"

सेठानी ने चौककर पूछा—

"कौन कट गया।"

"अरे कोई नही, झगड़ा कट गया। मेरा मतलब है, निपट गया। देने वाला भी खुश, लेने वाला भी खुश।"

सचमुच यही काले बाजार की लाठी है, जिसकी मार खाकर भी आदमी उफ तक नही करता।

जब रामअवतार हिसाब करके हजीमल के घर से नीचे उतरा, तो उसकी जेब मे पाच सौ रुपए नगद थे। मा और पत्नी के जेवर, बेच-बाच कर सिर्फ पाच सौ रुपये लेकर चला। और इसे ही मुनाफा समझ कर वह फूला नहीं समाता था। दी थी उसने खानदान के पुरखों की निशानी बीस हजार रुपये के गहने, और सेठजी ने भी उसके भाई की तरह रामअवतार

की भावनाओं से खेल कर वह सारा जेवर और ठेका, जिसके पूरा होने पर रामअवतार को आमदनी की उम्मीद थी, सब काले बाजार में बिना किसी मेहनत के हड़प लिया। अन्तर केवल इतना था, कि भाई को देते समय वह जरा उदास था, परन्तु आज वह उदासी भी नहीं थी। उसके चेहरे पर दुख के कोई निशान नहीं थे। उसे केवल यह संतोष था कि उसने सेठजी की नाव डूबने से बचा ली।

सीधे लोगो और अच्छे खानदानों का यही एक गुण है। वह अपना नुकसान तो देख नही पाते, दूसरो का दुख उनके मन का रोग बन जाता है। किसी का अगर कुछ भला कर सकते है, तो सीने पर घाव लेकर भी करते हैं और यह सोचकर खुश होते हैं, कि हमने किसी का कुछ बिगड़ने नही दिया। इसलिए तो यह धरती अभी तक बची है, नही तो रसातल को न पहुँच जाती? बापू ने अपनी जिंदगी देकर मानवता की रक्षा की थी।

जब रामअवतार घर आया, तो मा आगन मे यों ही बैठी थी, कुछ कर नहीं रही थी। साथ ही रामस्वरूप के घर मे डोमनिया नाच रही थीं। मा को डोमनिया दिखाई तो दे नही रही थी, पर उनके बोल सुनाई दे रहे थे—

"मेरे ललना के सेहरे मे किरनों के तार"

मा दीवार के पीछे बैठी डोमनियो के बोल सुनकर इस तरह खुश हो रही थी, जैसे पाकिस्तान बननें के बाद हिन्दुस्तान के लोग 'बाछाखान' की रिहाई की खबर पाकर खुश हुए थे। उसने बैठे-बैठे सुर मिला दिया—

"मेरे ललना के सेहरे मे किरनों के तार"

और वह इतने धीमे सुरों मे गा रही थी कि वह खुद ही सुन सकती थी। परन्तु इसके उस सुर मे डोमनियों की आवाज दब गई। दब कैसे न जाती, यह तो ममता की आवाज थी। वह गाती रही आखे बंद करके, जैसे लोरी दे रही हो, और मुन्ना उसकी गोद में सो रहा हो—

"मेरे ललना के सेहरे मे किरनों के तार।"

यकायक वह चौक गई, सामने रामअवता खड़ा हँसरहा था।

"माँ ! आज तो . . . . ।"

मा ने उसकी बात काट दी—

"हा बेटा, आज नहीं, कल अपने स्वरूप के बेटे का जन्म दिन है—"

रामअवतार चुप हो गया, और बोला—

"हा ।"

बस इतना कहकर वह अन्दर जाने लगा। मा ने उसके पीछे जाते हुये कहा—

"अच्छा किया जो तू आज आ गया। मै सोच ही रही थी, कि कल रामस्वरूप बुलाने आयेगा, तो तेरे बिना मुझे कुछ अच्छा नही लगेगा।"

रामअवतार की आवाज सुनकर मँझली बहू एक दम बाहर की तरफ भागी आ रही थी, सास को आते देखकर घूँघट निकाल कर रसोई मे जा घुसी। उसका दिल धड़कने लगा। मा ने रसोई के दरवाजे के आगे से गुजरते हुये देखा और कहा—

"बहू रामअवतार के लिये कुछ खाने को ले आ। वह आ गया है।"

बहू सिर हिला कर चुप हो गई। अन्दर कमरे मे रामअवतार ने पगड़ी उतार कर रखी तो मा ने कहा—

"क्यों रे, तू बोलता क्यों नही ? क्या भाई के घर की खुशी तेरी खुशी नहीं है ?"

"भाई का जब घर ही बँट गया, तो क्या खुशी नहीं बँट गयी ?"

"अरे कैसी बाते करता है मूर्ख, कभी दिल भी बँटे हैं ?"

"जब देश बँट सकता है, तो दिल को बँटते क्या देर लगती है मा ?"

"अरे पगले, देश बँट सकता है, बच्चे बँट सकते है, पर धरती माता कैसे बँट सकती है ! अब तेरे भाई ने धरती के ऊपर एक दीवार खड़ी कर दी है, तो इससे क्या हुआ ? सिर्फ मा के सीने पर एक लकीर खींची है न ? और सच कहती हूं रे, मा के माथे पर बल नहीं पड़ा। जिस दिन मा चाहेगी, उस दिन यह दीवार गिर जायेगी।"

"किस दिन चाहेगी मा ?"

रामअवतार ने लज्जायुक्त स्वर में कहा।

मा के चेहरे पर एक मुस्कान आ गई, जैसे ममता का अभिमान चेहरे पर छा गया हो—

"जिस दिन मेरा मन चाहेगा, उस दिन यह दीवार नही रहेगी। पहले दोनो को मा अपनी छाती से लगाकर सोती थी, लेकिन यह ढीठ एक-दूसरे को देखकर जलने लगे, फिर लूट-खसोट करने लगे। इन दोनो की लड़ाई को खिलवाड़ समझ कर मा हँसती रही, समझी नादान हैं, खेल रहे हैं, लेकिन वह जब सचमुच ही उलझ गये, तो मा ने बनावटी गुस्सा दिखाया और उठाकर दोनों को अलग-अलग कमरे मे बन्द कर दिया। अब मा का जिस दिन दिल चाहेगा, उन्हे खोल कर फिर सीने से लगा लेगी।"

रामअवतार यह सब बाते मा के चेहरे की तरफ देखते हुये बड़े गौर से सुन रहा था। मा के चेहरे पर जो प्यार और सच्चाई की ज्योति चमक रही थी, वह उसी को देख रहा था। फिर धीरे धीरे बड़बड़ा उठा—

"मै जाऊँगा, भैया के घर जाऊँगा।"

दरवाजे मे मँझली बहू कुछ खाने की चीजे लिये खड़ी थी। उसकी आखे भीग गई, वह घूँघट की आड़ से अपने पति को देख रही थी। देखती रही, रामअवतार अन्दर कमरे मे चला गया। मा ने अलमारी का किवाड़ खोला और लटके हुये कपड़ों को दिखा कर कहा—

"देख बेटा! मैने मुन्ने के लिये कपडे तैयार किये हैं। तेरे दादा के लिए यह जोड़ा बनाया है, और तेरे कपडे मंझली बहू के पास रखे हैं। हम सब को स्वरूप कल बुलाने आयेगा। पर सुन, बहू बिना गहने के कैसे लगेगी वहां? क्या आज तू गहने नही ला सकता सेठजी के घर से, एक दिन के लिये? परसों फिर रख आना। मेरी बडी बहू जब देखेगी, तो क्या कहेगी? लोग क्या कहेंगे, रामस्वरूप के भाई की पत्नी के पास एक भी गहना नहीं। बदनामी होगी बेटा।"

रामअवतार गहनों की बात सुनकर ठिठक गया। वह हाथ मुँह धोकर खाने पर बैठनेवाला था, कि उसका हाथ वही रुक गया, और बोला—

"मा ! गहने तो अब नही आ सकते ।"

"क्यों नही आवेगे" मा ने आश्चर्य से पूछा । "हमने बेचे थोड़े ही हैं, गिरवी रखे हैं। जिस दिन रुपए देंगे, उस दिन ले आयेंगे ।"

रामअवतार ने झिझकते हुए कहा—

"हा मा गिरवी रखे थे, पर अब .... ..."

"अब क्या रे ?"

"बेच दिये हैं ।"

"बेच दिए हैं ?"

"हा मा, ठेका पूरा नही कर सकता था । सेठ हजोमल को तीन लाख का नुकसान हो गया, मेरी वजह से। बीस हजार के गहने मैंने दे दिए हैं, और सेठजी ने मुझे फिर भी पाच सौ रुपए दिए हैं ।"

" तू लिखा-पढी कर आया है ?"

"हा ।"

"भाई से पूछा था तूने ?"

"नहीं, मै दूकान की तरफ गया था । वह फिटन से उतर रहे थे, मुझे देखकर मुँह घुमा लिया ।"

इतना कहते-कहते, उसकी आँखो में आसू आ गये । मा नें आसू देख लिये, और बनावटी हसी हँस कर बोली—

"अरे नहीं बेटा, उसने देखा नही होगा । चल जेवर ही गया न, इज्जत तो नहीं गई, कोई यह तो नही कहेगा कि धनीराम के बेटे ने हजों-मल को डुबो दिया । अच्छा किया तूने, बहुत अच्छा किया ।"

कहते-कहते, मा ने उसके सिरपर हाथ फेरा और उसकी आखे छलक आई । बाहर इतने मे दरवाजा खुलने की आवाज आई, मा ने कहा—

"वह रामस्वरूप आ गया ।"

और वह बाहर चली गई । रामअवतार की पत्नी अब पास आ गई और उसके चेहरे की तरफ ताकने लगी । रामअवतार ने कहा—

"क्या सचमुच भैया आये हैं, जरा देख तो सही ।"

कोशी ने कहा—"नही जेठ जी नहीं आये। मा जी को कई दिनो से ऐसा ध्यान आ रहा है। सारा दिन आगन मे बैठी दरवाजे की तरफ ताकती रहती हैं। बड़े बाबू जब घर मे आते है, तब उठकर अन्दर आती है और फिर मेरे साथ बाते करती है, कभी कहती हैं "जेठ जी आयेगे, और कभी कहती हैं नही, वह क्यो आयेगा। उसका कौन सा काम बन्द पडा है मेरे बिना।" अच्छा किया आप आ गये, मै तो सोचती हूँ कि अगर जेठ जी नही आये तो मा जी इस अपमान को सहन नही कर सकेगी "

"फिर क्या करना चाहिए ?"

"जेठ जी को आना चाहिए।"

"पर वह तो आयेगे नहीं।"

"फिर ?"

" अच्छा यह बताओ कोशी" उसने यकायक पूछा "क्या बड़े बाबू भी उसकी राह देख रहे है ?"

"ऐसा तो नही लगता, क्योंकि ज्यो ही जेठ जी के आगन मे गाना-बजाना होने लगता है, वह उठकर बाहर चले जाते हैं, और रात को उस समय आते हैं, जब सब सो चुके होते है। पहले खाना दोपहर को पीपल वाले मन्दिर के नीचे मँगवाते थे, लेकिन अब रात को भी वही मँगवा कर खा लेते हैं। घर की हालत तो मैने सभी कह दी है। अब आप बताइए, कि आप का मुँह क्यो उतर गया है ?"

इतना कहकर कौशल्या अपने पति के चेहरे की तरफ देखने लगी। रामअवतार ने उसकी तरफ देखकर कहा—

"कोशी ! तेरा और मा का सारा जेवर मैंने बेच दिया है।"

" वह तो सुन चुकी हूँ। इसमे उदास होने की क्या बात है ?"

रामअवतार अपनी पत्नी के चेहरे की तरफ देखने लगा। उसने देखा कि इसके दिल मे इतना भी दु ख नही हुआ जितना माँ को। और प्यार से उसके चेहरे को उसने अपने दोनों हाथो मे ले लिया।

बाहर दरवाजा खुलने की आवाज पर जो मा गई थी, रामस्वरूप तो

नहो आया, केवल गाय बाहर से चर कर लौट आई थी। मा ने उसे नाद पर बाध दिया, और घास उसके सामने लाकर डाल दी। और फिर सीढियो पर आ बैठी। पेड़ो की छाया लम्बी हो रही थी, घर के आगन की धूप वहा से सिमट कर रामस्वरूप के मकान की छत पर जा चुकी थी। मा ने आवाज दी—

"बहू" रामअवतार के हाथ अपने दादा ससुर को रोटी भिजवा देना, मैं मन्दिर जा रही हू।"

इतना कह कर मा उठ गई और घर का दरवाजा खोल कर बाहर गली में रामस्वरूप के मकान के आगे रुकी। अन्दर से कहारिन निकल रही थी, उसने हाथ जोड़कर प्रणाम करते हुए कहा—

'मा जी, क्या आप नही आयंगी ?"

मां ने चलते हुए कहा—

'आऊँगी क्यो नहीं रामी।"

"पर अब तक क्यों नही आई मां जी ?" रामी ने नाकपर अंगुली रखते हुए कहा। पोते का जन्म दिन और दादी को खबर नही, ऐसा पत्थर दिल तो कोई नहीं होता।"

रामी जरा नोक-पलक से ठीक थी, मिलकर रहती थी, आखो में काजल भी गहरा लगाती, नाक मे एक लौग चमकता था, उस पर खीची हुई चोटी और कसा हुआ लॅहगा, जो मनचले लोगो की नजरो को बाध ही तो लेता था। मा नें उसकी बाते सुनकर कहा—

"रामी क्या करूँ ? घर के काम से फुर्सत ही नही मिलती। वह बेचारा रामस्वरूप कोई पचास बार आ चुका है, पर क्या करूँ, घर में काम इतना है कि एक मिनट के लिए भी बाहर निकलना नही हो सकता।"

रामी ने अपनी हँसी रोक ली और बनते हुए कहा—

"यह तो सच है, पर अब कहा जा रही हैं ?"

सुहागी ने तो जैसे जमीन में घुसने को जगह ढूँढ रही हो, इस तरह उसने जमीन को यहा-वहा झाक डाला। चेहरे की झुर्रियों पर लाज की

कई लहरे उभरती और मिटती चली गई। रामी यह रग देखकर खुद लजा गई कि यह उसने क्या कह दिया। फिर बात को खुद ही पलटते हुए बोली—

"मन्दिर जा रही होगी ? भला काम काज मे भगवान को थोडे ही छोडा जा सकता है।"

मा ने उसका सहारा लेकर कहा—

"हा, हा, यही बात है, रामी। अब चिता के किनारे बैठी हूँ, बेटो, पोतो के मोह मे कहा तक फँसी रहूँगी। भगवान के घर एक दिन तो जाना ही होगा।"

"अच्छा, मैं जरा साबुन लेने बाजार आई थी।"

इतना कहकर रामी चली गई। मा जाती हुई देखती रही, उसकी आखों मे आसू आ गये, गली के बाहर जो मन्दिर था, वहा कोई भजन गा रहा था। मा वहा जा बैठी आखो मे आसू भरे वह गीत सुनती रही और भगवान को देखती रही।

दोनो बच्चे, जो बटवारे से पहले एक क्षण के लिए भी अलग नहीं होते थे, अब एक दूसरे की तरफ देखने भी न पाते थे। रामस्वरूप का बेटा तो दो घोडों की गाड़ी मे चढता था, और गाडी के पीछे एक नौकर वर्दी पहने खड़ा रहता और रामअवतार का बच्चा, जो पहले बदाम खाता था, अब चनों के लिए तरस गया था। खोमचे वाला जब आवाज लगाता-

"गरम चना।"

तो वह मा के पास जाता और कहता—

"दादी मा, चना लूँगा।"

दादी उसे पुचकार कर कहती—

"न बेटा, चना खाने से पेट दुखता है।"

घर में पैसा न हो तो माताएँ बच्चों को इसी तरह फुसलाया करती हैं। वह दादी मा, जो पहले बच्चों को बदाम खाने को देती थी, अब चने भी

न दे सकती थी। इसी दु:ख से उसने बच्चो को गोदी मे लेकर घूमना भी छोड़ दिया था। बच्चा दूसरे घर में यह शोर गुल सुनकर पूछा करता था।

"वहा क्या है मा ?"

"कुछ नही बेटा, भगवान के भजन हो रहे हैं।"

और कहती भी क्या। अगर उसे यह कहती कि कल मुन्ने का जन्म दिन है, तो वह भी मचल जाता, मेरा भी जन्म दिन करो।

दूसरे दिन जब मुँह अन्धेरे ही मा आगन में जाकर बैठी, तो दादा बैठा हुक्का पी रहा था। वह रामअवतार से सारी बात सुन चुका था कि सुहागी बेटे के घर जाना चाहती है। लेकिन वह बुलाने नही आया, तो कैसे जाये। दादा को इस बात का बडा दुख था। उसने सुहागी को आगन की सीढियो पर से उतरते देखा, तो उसकी खासी उठ आई। सुहागी ने नियम के अनुसार दादा के चरन छूये। दादा ने उसे आशीर्वाद देते हुये कहा—

"सुहागी बेटा! जहा इज्जत न हो, वहा जाना नही चाहिये, इसमे बेइज्जती होती है। और बेइज्जती आदमी को पसन्द नही, फिर हम तो पठान हैं, बेइज्जती पसन्द होती तो अपने देश को छोड़ कर ही क्यो आते ?"

सुहागी सुनती रही, कुछ न बोली।

"अच्छा मै नहर पर नहाने जाता हूँ, मन्दिर में ही बैठूँगा, शाम को आऊँगा।"

दादा इतना कहकर, अगौछा कन्धे पर डाल घर से बाहर निकल गया। सुहागी सीढियों पर आ बैठी। दूसरे मकानों के चिरागो की रोशनी सुहागी के चेहरे पर पड रही थी। वह बैठी सोचती रही। फिर धीरे-धीरे बत्तिया बुझ गई। सुबह हो गई, रामनारायण किताबे लेकर बाहर निकला और बोला—

"मा! मै जा रहा हूँ। इम्तिहान सर पर आ गया है। जरा बाहर पढ़ूँगा, और फिर वहीं से कालेज चला जाऊँगा।"

"तू आज भाई के घर नहीं जायेगा ?"

मा ने पूछा।

उसने कहा—"नहीं, पढाई का हर्जा होगा।"

मा ने कहा—'होता रहे, मै तुझे आज नही जाने दूँगी।"

इतना कह कर मा ने उसके हाथ से किताबे छीन ली और बेटे को अन्दर भेज दिया बेटा सीधा छत पर चला गया और एक चिट्ठी लिख कर पत्थर के साथ रायसाहब की छत पर फेक दी। रायसाहब की बेटी ने उसे पढा, जिसमे लिखा था कि आज शाम को मिलेगे, मुझे आज भाई के घर जाना होगा। नीचे मॅझली बहू घर के काम काज मे लगी हुई थी। उसने पूजा की सामग्री को ज्यों का त्यों देखकर कहा—

"मा जी, क्या आप पूजा नहीं करेगी ?"

"अरे हा, मैं तो भूल ही गई। यह ममता कैसी बुरी है। अच्छा देख, मै पूजा करने जाती हूँ, तू ध्यान रखना, रामस्वरूप आये, तो मुझे खबर देना।"

इतना सुनकर मँझली बहू को बड़ा दु:ख हुआ। मा ठाकुर की पूजा में तो बैठी थी, पर मन उसका दरवाजे में अटका था। वह खिड़की से झाक कर दरवाजे को तक रही थी।

रामअवतार का बच्चा जाग कर दादी की गोद मे आ बैठा। दादी ने पूजा बन्द कर दी और बोली—

"हाय बेटा, तू तो पूजा भी करने नही देता।"

और उठ कर बाहर आ गई। बच्चा उसकी गोद में था। बहू ठीक अपनी जगह पर बैठी तरकारी काट रही थी। सास ने कहा—

"अरे तू आज रसोई मे नहीं गई, यहा तरकारी काट रही है ?"

"आप ही ने तो कहा था कि दरवाजे पर रहना।"

"अरे हा, अच्छा जा तू। अब मैं अपने मुन्ने को लेकर बैठूँगी।"

बहू के अन्दर जाने के बाद दादी ने मुन्ने से कहा—

"मुन्ना! आज ललना का जन्म दिन है, तू नहीं जायेगा ?"

"जन्म दिन क्या मां ?"

"आज तेरा भाई पूरे सात वर्ष का हो गया है, उसको नये-नये कपड़े मिलेगे, मिठाइया मिलेगी आशीर्वाद मिलेगे।"

बच्चा भाई का नाम तो भूल गया, अपनी तोतली जबान मे बोलने लगा—

"अच्छा, मै कब सात वर्ष का होऊँगा? मुझे कब कपले मिलेगे, मिठाइया मिलेगी?"

मा ने इधर-उधर देखकर कहा—

"जा. तू अपने भाई के घर चला जा, वहा सब मिठाइया आई हैं, तुझे भी मिलेगी।"

बच्चे की आखों मे रोशनी आ गई।

"तो मै जाऊगा।"

इतना कहकर मुन्ना भाग गया। दादी मा उठ कर अन्दर आई और ललना के कपडे लेकर बाहर निकल गई।

मॅझली बहू आज बडे ध्यान से सास को ताक रही थी, क्यो कि उसकी हालत अच्छी नही दिखती थी।

उसके चेहरे पर तो केवल थकान के चिन्ह थे। लेकिन दिल तो एक तरह से बावरा जान पड़ता था। बहू सास के दिल की हालत को खूब अच्छी तरह पहचानती थी। सास-बहू का सम्बन्ध दिल का ही तो होता है, फिर भला कोशी अपनी सास के दिल की हालत को कैसे न जान लेती।

बहू ने रसोई घर से झाक कर देखा सास कहा गई हैं कपडे लेकर। जेठ जी तो नही आ गये, हैं, शायद आ गये हो। मुझे जाना चाहिये उनके चरण छूने के लिये, कई दिनो के बाद आये हैं, आखिर हैं तो जेठ ही। इतना सोच कर वह घूंघट निकाले दुपट्टे को सर पर दोहरा करके बाहर आई, लेकिन वहा जेठ जी नहीं थे। मा कपड़े बगल में दबाये, धड़कते हुये दिल के साथ दरवाजे की तरफ जा रही थी।

मुन्ना जब ताऊ जी के घर में घुसा तो आंगन आदमियों से भरा हुआ था। सामने तख्ता के ऊपर एक बडा-सा केक रखा था, उस पर मोम-बत्तिया लगी हुई थी। उसके स्कूल के बच्चे इकट्ठे थे। थाली मे मिठाइया भरी हुई थी। बड़े-बड़े लोग मेजों पर बैठे खाने-पीने की तैयारी कर रहे थे।

ललना सूट-बूट पहने, टाई बाधे मा के साथ था। बैंड बाजे वाले बैठे इन्तजार कर रहे थे, कि केक कटे और बाजा बजे। मुन्ना यह सब देखकर आश्चर्य मे पड़ गया, वह सहम गया। सब अपने-अपने रग मे मस्त थे। किसी ने उसकी तरफ आंख उठाकर भी नहीं देखा। उसके मैले और फटे हुए कपड़े देखकर किसी अनजाने आदमी ने यह समझा होगा कि मुहल्ले का कोई गरीब शरणार्थी होगा या फिर किसी नौकर का बेटा हो सकता है। इतने मे ललना की नजर पड़ी, उसने कहा—

"मुन्ना।"

इतना कहकर वह मा की गोद से अपने आपको छुड़ाकर बाहर की ओर भागा और उसका ब'जू पकड़ कर उसे खीचने लगा। कलावती ने देखा तो शर्म के मारे जमीन मे गड गई, यह मैले कपडो वाला उसके देवर का बेटा है। क्या उसकी इज्जत न चली जायेगी? वह इज्जत जो रामस्वरूप ने ब्लैक मारकेट के धन्धे से बनाई थी। वह झट बोली—

"छी, पगला, गन्दे लड़को के साथ नही खेलते।"

और उसको पकड़ना चाहा, पर ललना ने कहा—

"नहीं मा, मुन्ना गन्दा नही, मेरा भाई है।"

कलावती ने सब की तरफ देखा, कोई पहिचान वाला देख तो नहीं रहा और फिर धड़ से एक चाटा मुन्ने के मुँह पर जमा कर कहा—

"खबरदार, जो मेरे घर आया।"

चाटे के साथ ही दादी मा कपड़े बगल मे लेकर पहुँच गई । चाटा लग चुका था । । सहमा हुआ चाची की तरफ देख रहा था। दादी मा को देखकर रोने लगा। दादी मा ने उसे गोद मे उठा लिया, कपड़े उसकी बगल से गिर गये ।

सभी ने कहा—"मा जी!"

बड़ी बहू चाटा लगाकर अपने ललना को उठा वापस जा रही थी। रामी की आवाज सुन कर पलट कर देखा, और बोली—

"क्यो आई है?"

मां ने कहा—'मेरे बेटे का घर है, सौ बार आऊंगी।"

इतने मे रामस्वरूप आगे बढ आया।

"मेरे लिये मा उस दिन मर गई थी, जिस दिन मुझे घर से अलग कर दिया था।

मा ने आसू भरी आखों से कहा—

"मा मर गई, पर ममता तो जिन्दा है। वह मर जाती, तो मैं न आती।"

रामस्वरूप ने कहा—"मै इन झूठे नातो को नही मानता। अब पैसे खतम हो गये, तो मेरे पास आई है। क्या मुझे सुखी नही देख सकती?" "यह मां है" उसने लोगों की तरफ इशारा करके कहा 'सब कुछ लेकर मुझे निकाल दिया। एक दुकान दी, वह भी खाली। बाप की पगड़ी मैंने याद-गार के तौर पर मांगी तो वह भी नहीं दी। मैंने मेहनत करके रुपया कमाया, तो आज मा की ममता जाग गई। तुम चली जाओ यहां से और फिर कभी यहा न आना। अगर तुम कहती हो, तो मैं यह घर छोड़कर चला जाता हूँ।"

मा अपना अपमान सहन न कर सकी, बोली—

"रामस्वरूप! यह धन सदा किसी के पास नहीं रहा। पर भगवान करे तेरे पास सदा रहे। मुझे कोई दुःख नही, लेकिन तेरी घरवाली ने जो मुन्ने को चाटा मारा है। उसका फल............"

रामनारायण छत पर खडा था। शोर-गुल सुनकर भागा हुआ बाहर आया। उसने गोबर इक्ट्ठा करने वाला फावड़ा उठाया और भाग कर भाई के घर चला गया। उसने जाते ही मा को एक तरफ हटाया, और बोला––

"आज मैं तेरा खून करके ही रहूँगा। सारी जायदाद दूकान और रुपया हडप कर आज तू मा का भी अपमान करता है।"

मा रामस्वरूप के आगे खडी हो गई, और बोली–

"अरे, तुझे क्या हुआ नारायण, मुझे तो स्वरूप ने कुछ भी नहीं कहा, मै तो यह कपड़े देने आई थी, मैंने ही उसे बुरा-भला कहा है। चल घर, नही तो तुझे मै दूध नही बख्सूँगी।"

रामअवतार भी पहुंच गया। उसने रामनारायण के हाथ से फावडा लेकर कहा––

"पगले, जैसे हम बेटे हैं, वैसे भैया भी मा का ही बेटा है। मा-बेटे की बातों मे तू फावड़ा लेकर क्यों आ गया?"

मा और भाई को लेकर रामअवतार बाहर निकल आया। पीछे बहू ने रामी के हाथ से कपड़े छीन कर बाहर फेंक दिए और कहा––

"दादी पोते की बदशुगनी करनें आई थी, डायन।"

कपड़े नाली मे गिर गये। रामअवतार ने मा से यह भी नहीं पूछा, मा तू वहा क्यों गई थी। और मा वहा से सीधी निकल कर अपने मन्दिर वाले कमरे में आ बैठी। यह उसके जीवन का पहला अपमान था, और वह भी अपने बेटे के हाथो। वह कुछ न कह सकी और कुछ न कर सकी।

रामस्वरूप के यहां रात को खास महफिल जमी, मुजरा हुआ, शराब की बोतलें खुलीं। मुजरा देखने के लिये सारा शहर उमड़ा हुआ था। देहरादून मे वाह-वाह हो गई। देहरादून वाले कहते थे, लो जी यह शरणार्थी है ? मालूम होता है पाकिस्तान वालो का भी रुपया लेकर यहा भाग आया है। पंजाब के रहने वाले कहते थे कि वाह ! यह सरहद के लोग खाने - पीने के बडे शौकीन होते हैं। पेशावर के लोग कहते थे, पेड़ाखान के पोते ने पेशावरियों की नाक लम्बी कर दी। सन्तान हो तो ऐसी हो।

परन्तु रायसाहब रात को घर में जाकर जहा खाने की प्रशसा कर रहे थे, वहा इन पंजाब वालों को गालियां भी दे रहे थे।

उनका कहना था, "साहब ! लोग घर मे आये हुये दुश्मन की भी बेइज्जती नहीं करते, और वह तो रामस्वरूप की मा थी। भरी पंचायत मे उसे निकाल बाहर किया। इन पंजाबियों मे तो नाम मात्र की सभ्यता नही होती।"

रायसाहब की बेटी पास ही मे बैठी थी, बोली—

"आखिर इसमे सभ्यता की क्या बात है। क्या पजाबियो के अलावा कोई दूसरा आदमी ऐसा काम नहीं कर सकता ?"

"क्यों नहीं, जरूर कर सकता है, लेकिन मा के साथ नहीं। यह केवल पंजाबी कर सकते हैं।"

राय साहब की बेटी को अन्दर से तो बहुत बुरा लगा, मगर इसका जवाब कुछ न दे सकती थी। सच्ची बात का जवाब क्या हो सकता है ?

रायसाहब कहते रहे—

"और साहब, वह छोटा लड़का तो बिलकुल ही गुण्डा है। फावड़ा उठा कर चढ आया। अगर उसका बडा भाई आकर बीच बचाव न कर देता, तो हमें आज श्मशान भूमि भी जाना पड़ता अर्थी के साथ।"

गार्गी यह सुन कर सन्न हो गई। उसका रामनारायण गुण्डा है। नही, नही। उसके दिल मे चोट सी लगी और वह बात कुरेदने की खातिर बोली—

"फावडा क्यो लेकर आया था वह ?"

"मा की बेइज्जती सह न सका।"

"यह तो गैरत का मामला है। मा का अपमान कौन सहन कर सकता है ? कोई बेगैरत ही ऐसा होगा।"

"पर यह भी जानती हो, मा का अपमान हुआ क्यो ?"

"नही।"

"वह रुपये मागती है रामस्वरूप से, क्यों कि आज-कल वह पैसे वाला हो गया है।"

"तो क्या बेटे को रुपये नही देने चाहिये ?"

"क्यो देने चाहिये ? जिस मा ने बेटे को खाली दूकान देकर घर से निकाल दिया हो, वह कैसे दे देगा ? यह बडी सेन्टीमेन्टल बात है, गार्गी तुम नहीं समझ सकोगी।"

इस बात को सचमुच रायसाहब ही समझ सकते है जिनके हिस्सेदार ने उनका सब कुछ हथिया कर चार साल हुये निकाल बाहर किया था। और आज चार साल से वे अपनी जमा पूँजी खा रहे थे। रायसाहब की पदवी मे बट्टा कैसे लगने देते ?

अंग्रेज तो हिन्दुस्तान से चले गये थे, लेकिन उनके यहा अभी तक रात को 'डिनर' और दिन को 'लन्च' खाया जाता है। साथ ही वह अपने अंग्रेज दोस्तो को बहुत याद करते थे।

मगर इस मामले मे वह जितने अंग्रेज थे, व्याह-शादी के मामले में उतने ही हिन्दुस्तानी। उनका विचार था कि नौजवान भावना के वश होकर अकसर गलती कर बैठते हैं। इसीलिए चुनाव (सिलेक्सन) की ताकत माँ-बाप के पास ही होती है। बस, यह एक हिन्दुस्तानी सिद्धान्त था, जिस पर रायसाहब कठोरता से दृढ़ थे।

परन्तु गार्गी इस सिद्धान्त को मानने वाली नहीं थी। अगर पुरानी जंजीरो मे बाध कर रखना है, तो बच्चो को पढाने से क्या फायदा ? ब्याह का मामला कोई दो दिन की बात तो है नहीं ? गुडिया-गुड्डे का खेल नही है, कि जब चाहा जोड लिया और जब चाहा तोड दिया। आखिर दोनों की पहिचान तो होनी ही चाहिए। अगर एक-दूसरे के स्वभाव से परिचित न होगे, तो बात क्या बनेगी ? बात तो शायद बन भी जाये, परन्तु घर नहीं बनेगा, सुख-शान्ति नही होगी। मा बाप देखते हैं, केवल, घर-बार मकान दौलत, बैंक बैलेंस।

यह बाते गार्गी इसीलिए सोच रही थी कि उसे गरीबी से दो-चार होना नही पडा था। गरीबी की मुसीबत से वे गरीब ही परिचित हैं, जो इस दु ख को सह लेते हैं। अमीरो को तो, जो गरीबो की जिन्दगी को सिर्फ किताबो मे पढ़ते हैं, उसमें एक वर्णन मिलता है, एक रोमास का एहसास होता है। बड़ी रोमान्टिक नजर आती है गरीबो की दुनिया। परन्तु जो उस गरीबी के बोझ को लाद कर जिन्दगी की मजिल तै करते हैं, उनकी कमर दोहरी हो जाती है। उनकी नजर केवल जमीन पर होती है, जो धूल के सिवा कुछ नही देख सकती। और अमीर के सामने पूरी दुनिया होती है, फूलो से भरी हुई, हरियाली से लदी और रुपहरी रोशनी से भरपूर।

गार्गी के सामने भी वही दुनिया थी, और उसकी नजरे इधर-उधर की चीजो पर से घूमती हुई रामनारायण पर आकर ठहर गई थीं। अब उसे कुछ और देखने की इच्छा नही थी। वह किताबे पढ़ती और राम-नारायण के चेहरे को देखती। यही उसका धर्म बन गया था।

रायसाहब इस बात से परिचित न थे। वह यू० पी० के रहने वाले बड़े सभ्य होने के साथ-साथ, यू० पी० के बडे प्रेमी थे। उनका कहना था कि "यू० पी० मे गंगा है, यमुना है, मथुरा, बृन्दावन लाखो तीर्थ हैं, और पंजाब तो साहब म्लेच्छों का देश है।" हालाकि उन्होने तीर्थ यात्रा को जाने की कोशिश कभी नही की थी, लेकिन अभिमान के योग्य उसे वे जरूर समझते थे।

वे यह भी कहते थे कि इन पंजाबडों ने तो आकर हमारी भाषा भी खराब कर दी है। कमबख्त हिन्दुस्तानी क्या बोलते हैं, बस टाग तोड़ते हैं, "हमने तुमको बोला था" "तुम हमारे को क्या कन्हेदास" कितना जुल्म है साहब।

रात को जब रायसाहब यह बाते कर रहे थे, तो पडित उमाशंकर जी आ गये। उमाशकर भी इसी मुहल्ले मे रहते थे। आजादी से पहले घर की खिड़किया बन्द करके रखते थे, और कहते थे—

"कमबख्त अफगान, प्याज भून-भून कर बदबू फैला देते हैं, नाक मे दम आ जाता है।"

परन्तु जब वे जाने लगे, तो पंडित जी मन मे बहुत दु खी हुए।

"राम, राम, बरसों से यहा रहते चले आये हैं, अब बेचारे कहा जायेंगे ? लेकिन विधाता के लेख को कौन मिटा सकता है।"

उन्हे जाना था, वे चले गये। अब पडित जी ने अपने मन को यो समझा लिया कि कमबख्त सारा दिन मास और प्याज भूनते थे, हमारे ठाकुर जी को कष्ट होता था, इसीलिए यह कोप हुआ है उनका।"

ठाकुर जी हम पर दयालु हैं, अब इनके घरों मे हिन्दू बसेगे आकर, फिर हमारी पूजा मे कोई विघ्न नहीं होगा। लेकिन इन कमबख्तों ने और भी गजब ढाह दिया है। आज रायसाहब के घर उन्हे भी मौका मिला तो बोले—

"अजी ये लोग तो जी के जंजाल हैं, कमबख्त ! अपने आप को हिन्दू कहते हैं। जरा देखो तो, वे जाने वाले मुसलमान तो घर मे ही मास मछली खाते थे, लेकिन ये ससुरे तो बाजार मे भी खूमचे सजाकर घूमते हैं। भला ऐसा भी कभी देहरादून मे हुआ था ?"

"पंडित जी, वह तो खैर ठीक है, पर इनके आने से चोरिया भी होने लगी हैं, खून होने लगे हैं।

"अजी हा, पहले तो हम घर के दरवाजे खोल कर चैन से सोते थे, और अब तो ताले बन्द करके भी नीद नही आती। मुसलमान गये तो राक्षस आ गये, राम-राम।"

गार्गी इतना सुनकर तड़प गई, बोली—

"आखिर मनुष्य का अपमान करना कहा का न्याय है ? पंडित जी आप तो पहले घर की खिडकिया कभी नही खोलते थे, और अब तो बन्द नही करते।"

"पहले तो यू नही खोलता था, कि सामने अब्दुल गफूर रहते थे, उनके यहा जरा पर्दा था। मुहल्लेदारी के नाते, पडोसी का ध्यान करना ही पड़ता है।"

"पहले वे पडोसी थे, अब आप इन्हे पडोसी क्यो नही समझते हैं ?"

"कैसे समझते ?"

रायसाहब पडित जी की तरफ से बोले—

"इनके साथ हमारा क्या मिलता है ? न खाना, न पीना, न बोली, न ठोली। एक धर्म मिलता है बस।"

पंडित जी ने कहा—

"धर्म ? राम-राम रायसाहब जी, ये तो महा अधर्मी हैं, पापी हैं।"

गार्गी ने चिढ कर कहा—

"क्यो ? क्या अधर्म की बात करते है ये लोग ?"

पडितजी ने जरा जोर देते हुए कहा—

'मास खाते हैं, शराब पीते हैं।"

"मास खाने से होता है क्या ?"

वह जाने क्या कहने जा रही थी, परंतु रायसाहब ने समझा शायद यह कहने जा रही है, कि मास तो हम भी खाते हैं, इसलिए डरकर उन्होने डाट दिया—

"चुप रहो जी, पडितजी सच कहते हैं ?"

"सच क्या कहते हैं डैडी, उन लोगो को आप बुरा कहते हैं, जिन्होंने आजादी मे अपना सब कुछ लुटा दिया।"

"आजादी काहे की, तबाही कहो बेटा। अँग्रेजों के राज मे हम तो सुखी थे। क्यो रायसाहब?" पंडित जी ने कहा।

रायसाहब ने स्वीकार करते हुए कहा—

"हां जी, लाखो रुपए का काम किया है, ठेके लिए है, सीमेन्ट की जगह रेत सफ्लाई की, घी की जगह नारियल का तेल देते रहे, लेकिन क्या मजाल कोई चूं भी कर जाय। अँग्रेज अफसर होते थे। डाली लेकर चले जॉय, साहब घर पर न हो, तो मेम साहब डाली लेकर खुश होती, बाते करतीं, चाय पिलाती, और फिर कोई मामूली सी फरमाइश कर देतीं। बस हमारा ठेका मजूर हो जाता। अब जब से यह हिन्दुस्तानी आए हैं, ठेके गाधी टोपी वालों को ही मिलते हैं। जो काम करने वाले हैं, उन्हें कोई पूछता ही नही।"

गार्गी सुनकर बोली—

"एक तरह से तो अच्छा ही हुआ। पहले विदेशी आकर लूटते थे, अब अपने ही लूटते हैं।"

पडित जी बोले—

"डाकू तो यह भी हुए न? और सच तो यह है कि जबसे ये राक्षस वृत्ति के लोग आकर बसे हैं, हमारी सरकार की वृत्ति भी तामसिक हो गई है। मेरा बस चले, तो मै इनको निकाल बाहर कर दूं।"

"यह भी सोचा है कि इनका बस चले, तो यह क्या करे?"

"क्या करेंगे जी यह भगोड़े?"

पडित जी ने क्रोध मे आकर कहा।

"वही करेंगे, जो परशुराम ने क्षत्रियों के साथ किया था।"

रायसाहब इस बात पर बिगड़ गए। कहने लगे—

"तू बड़ी बढ-बढ कर बाते करने लगी है। चल हट यहा से, बड़ों की बातो में तुझे बोलने का अधिकार नही।"

"क्यों अधिकार नहीं? यह नई रोशनी का जमाना है। बहस में दिल खोलकर आदमी को बोलना चाहिये।"

"हमें शिक्षा देने चली है?" रायसाहब गुस्से मे आकर बोले–"मै कहता हूँ तू चली जा यहा से। मेरे लाड ने तुझे सर चढा दिया है।"

गार्गी आसू भरी आखों से उठकर ऊपर चली गई। रायसाहब बोलने लगे–

"कैसा जमाना आ गया है। छोटे बडे का आदर करना जानते ही नही।"

पडित जी ने कहा– 'यह वही राक्षसी वक्त का असर है, रायसाहब जी। पहले मुसलमान बसते थे। उनमे हमारा मिलना दूर-दूर का था। इनसे धर्म एक मानकर करीब से मिलने लगे हैं, तो इसका यह असर पडा है।"

"नहीं जी यह गार्गा किससे मिलती है।"

पडित जी ने मौका ताक कर कहा––

"रायसाहब जी आप बडे आदमी हैं, पर बात बड़ी, मुँह छोटा है।"

'क्या बात है ऐसी?"

रायसाहब के माथे पर बल पड गये। पंडित जी ने पानदान जरा पास खीचकर उसे खोला, लेकिन जवाब कुछ न दिया। रायसाहब इसी मुद्रा मे उनकी तरफ देखते रहे। पानदान खीचने से एक रगड़ की सी आवाज पैदा हुई और गायब हो गई, लेकिन रायसाहब के चेहरे पर सुनने वाली बात का कोई असर कम न हुआ। उन्होने फिर कहा—

"हा, तो बात क्या है पडित जी?"

पडित जी अब अपनी जेब मे तम्बाकू की डिबिया तलाश करने लगे। रायसाहब ने अपनी खास तम्बाकू की शीशी, जिसकी तम्बाकू सिर्फ वही खाते थे, दूसरे किसी को नहीं देते थे, उनकी तरफ बढा दी, गोया रिश्वत देते हैं। पंडित जी ने इतमीनान से तम्बाकू खायी और बोले—

"बात तो खास नही है।"

"फिर भी कोई आम बात तो होगी। आप कहते क्यो नही?"

रायसाहब का उतावलापन देखकर पंडित जी ने कहा—

"देखिए रायसाहब, मुझे डर लगता है, अगर बात झूठ हुई तो मै पाप का भागी बनूँगा, और अगर सच हुई, और आप को गुस्सा आ गया,

तो भी बुरा होगा। मै आंख मैली करना नही चाहता, पर... ....."

पर, कहकर पडित जी फिर चुप हो गये।

अब तो रायसाहब एक दम झुझला-सा गये, क्योकि इतनी बात तो समझ ही गये कि इसमे कुछ इज्जत का मामला है। और हमारी इज्जत की बात हमी से छुपा रहे हैं। उन्होने झुँझलाहट को दबा कर कहा—

"नहीं जी, मुझे बिल्कुल गुस्सा नहीं आयेगा, जरा सा भी नहीं, आप निश्चिंत होकर कहिए।"

पडित जी ने रायसाहब की तरफ देखा। उनके चेहरे से ऐसा ही लग रहा था, फिर बोले—

"हमारी घर वाली एक दिन सबेरे हमे पूजा से खीचकर ऊपर छत पर ले गई और कहा, "लो देखो यह जो कुछ हो रहा है" राम–राम, वह देखकर मै तो सन्नाटे मे आ गया। रायसाहब जी, मै आप की इज्जत मे और अपनी इज्जत में कोई फर्क नही समझता, लेकिन इन लुच्चे शरणार्थियों का खून पी जाने को जी चाहता है, और फिर हमारी लड़किया बेचारी भोली–भाली होती हैं। यह बदमाश लोफर हैं......।"

इतना कहकर पंडित जी चुप हो गये। रायसाहब खामोश रहे, फिर बोले—

"जब यहा तक बात कही है, तो आगे भी कह डालिए।"

"आगे क्या कहूँ महाराज, लौण्डा पत्थर मारता है, और लड़की... पत्थर के साथ बँधी हुई चिट्ठिया पढ़ती है।"

रायसाहब सुन कर सुन्न हो गये। चुपचाप पान चबाते बैठे रहे, कुछ बोले नहीं। पंडित जी "जयरामजी" कहकर उठ गये। कमरे मे बिलकुल शान्ति थी। दीवार पर लगी हुई घड़ी टिक्-टिक् करती रही, और रायसाहब की सासे उस टिक्–टिक् में लुप्त होती रहीं। जमाना चल रहा है, चलता रहेगा उसे मनुष्य की भावनाओं से क्या मतलब। कभी थमा तो नहीं, जो अब थमेगा।

रायसाहब को कुछ सूझता ही नहीं था। टन-टन-टन, घडी ने बारह बजा दिये। वह उठकर अन्दर सोने के कमरे मे गये। गार्गी की मा सो रही थी। रायसाहब ने चारपाई पर बैठते ही उसे आवाज दी, वह जग गई। रायसाहब ने न जाने उससे क्या कहा कि उसके पेट मे दर्द होने लगा, और उसकी चीख-पुकार सुनकर, घरके नौकर-चाकर सब जाग गये, छत पर से गार्गी उठकर मा के पास आ बैठी और उसकी देखभाल करने लगी। जब चार बज गये, तो गार्गी की मा ने रायसाहब से कहा—

"अब मुझे आराम है, आप जाकर सो जाइये, कही दमे का दौरा फिर न उठ खड़ा हो आप को।"

रायसाहब ने कहा—' हा, मै थोड़ी देर लेटना चाहता हूँ तुम बेटा इनके पास बैठो।"

इतना कहकर रायसाहब बाहर निकल गये। थोडी देर बाद मा ने गार्गी को अपने पास ही लिटा लिया और बोली—

' बेटा, तू जब से बडी हो गई, मेरी ममता तुझे सीने से लगाने को तरस गई है।"

गार्गी ने कहा—"अब दर्द का क्या हाल है?"

"ठीक है, तुम आराम से सो जाओ।"

"फिर मै ऊपर चलती हूँ।"

' क्या मेरे पास बैठना तुझे अच्छा नहीं लगता?'

"वाह! सारा दिन तो आप के पास ही बैठी रहती हूँ।"

"नहीं, आज मेरे पास ही बैठी रह, शायद रात को फिर जी खराब हो जाय।"

गार्गी वही पलँग पर सो गई। मां उसके भोले-भाले चेहरे की तरफ देखती रही। इस भोली लड़की पर पंडित उमाशंकर कैसा लांछन लगा गये हैं और मुझे भी कैसा नाटक खेलना पड़ा। "हाय री बेटी, तू क्या

ऐसी हो सकती है। नहीं, नही, सब झूठ है" इतना सोचकर गार्गी की मा ने गार्गी को सीने से लगा लिया।

गार्गी सोती रही, परन्तु मा ने सारी रात आखो मे काट दी। वह रायसाहब के ख्यालो से खूब परिचित थी। उनकी आदत भी जानती थी कि कभी-कभी तूफान की तरह फट पड़ते हैं, और जो जी मे आता है कर बैठते हैं। अब जाने क्या करने वाले है। और आजकल तो रुपया-पैसा खतम हो जाने से, उनका स्वभाव और भी चिड़चिड़ा हो गया है। इसी सोच में सुबह हो गई।
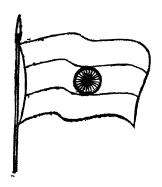
रामनारायण ठीक रोज की तरह छत पर आया और उसने देखा, गार्गी मजे से चादर ओढे सो रही है। वह टहलता रहा। अभी तो सूर्य भी नही निकला। कल मुलाकात नही हुई, इसीलिए वह नाराज होगी। आज उसे जगाना अच्छा होगा या नही, उसने एक क्षण के लिए सोचा। आज न जगाना ही अच्छा है। रेस्टॉरेन्ट मे शाम को मिलूँगा, तो मनोती होगी। आज जरा उसके रूठने का मजा भी देखना चाहिये। रामनारायण को सुन्दरता का रूठना बहुत अच्छा लगता था। जब गार्गी माथे पर बल डाल कर कहती—

"जाओ जी हम नहीं बोलते।"

तो वह उसके चेहरे को एकटक देखता रहता। उसकी आंखे उसके माथे पर पड़ी लट को चूम-चूम लेतीं। और गर्दन मोड़ लेने से जो उसमे तिरछापन आ जाता, तो वह उसे देखता रहता। उसके इस तरह देखने से गार्गी यकायक बोल पड़ती—

"इस तरह क्या देखते हो तुम?"

"सुन्दरता।"

और वह हँस पड़ती। फिर उन दोनोमे अपने पहले मिलन की स्मृति जाग जाती।

सर्दियो के दिन थे। शायद जनवरी के आखिरी हफ्ते की बात है। देहरादून में सर्दी जोरों पर थी। स्कूल और कालेज एक महीने के लिए बन्द हो चुके थे। सामने मंसूरी की पहाड़िया धीरे-धीरे सफेद होने लगी थीं। हिम वर्षा शुरू हो चुकी थी। "स्नोफाल" देखने के शौकीन मंसूरी जाने का प्रोग्राम बनाने लगे। इस मौसम में मंसूरी बच्चे की तरह मासूम

नही रहती, बल्कि जवानी से भरपूर युवती की तरह बोझिल हो जाती है। बडी गम्भीर नजर आने लगती है और उस वातावरण मे एक शान्ति पैदा हो जाती है। प्रकृति बिलकुल खामोश नजर आती है। चारो तरफ सफेदी भर जाती है। जैसे प्रकृति ने हरियाली भरने के लिए सफेदी का एक पट जमा दिया है, सफेदी इसलिए ताकि नीचे के सब रंग मिट जाये और बहार की हरियाली खिल सके। मंसूरी मे इन दिनो लोग प्रकृति का निखार और ठण्ढी सासो का अनुभव करने जाते है।

इस ऋतु में एक बार रामनारायण भी राजपुर की तरफ से मसूरी चल दिया। जब 'झरी पानी' के करीब पहुँचा तो हिम वर्षा होने लगी। कडाके की सर्दी थी। किन्तु रामनारायण उस प्रात का रहने वाला था, जहा कड़ाके की सर्दी और भयंकर गर्मी पड़ती है।

कुछ दूसरे लोग भी जा रहे थे। उनमे अंग्रेज थे, और हिन्दुस्तानी भी। सब लोग गर्म कपड़ो से लदे थे। लम्बे कोट और मोटी-मोटी लोइया ओढ़े चले जा रहे थे। रामनारायण के पास तो गर्म कपड़े भी ज्यादा नही थे। केवल स्वेटर था और एक कोट। जब वे गर्माये हुये लोग उनके पास से गुजरते, तो उसे भी सर्दी मालूम होती थी।

झरी–पानी से गुजरा, तो एक आदमी चेस्टर से लदा और दस्ताने पहने रहने पर भी ठंड का अनुभव करता हुआ उसके आगे-आगे जा रहा था। उसे देखकर वह भी सचमुच सर्दी से कापने लगा। अब वर्फ के गोले तो गिरने बन्द हो गये थे, लेकिन कॅपकॅपी पैदा कर देने-वाली हवा चलने लगी। बारलू-गज की चढ़ाई से नीचे ही उसे एक रेस्टोरेन्ट खुला मिल गया। वह उस रेस्टोरेन्ट मे इसलिये घुस गया कि यह गर्म कपडों में गरमाया हुआ आदमी थोड़ा आगे निकल जाये, तो फिर आगे चलूँगा। उस रेस्टोरेन्ट में घुसते ही उसने अपने जूते झाड़े, अपना कोट झटकाया, और अन्दर जा बैठा।

"एक काफी।"

बॉय को आर्डर देकर उसने खिडकी में लटकते पर्दे को सरका दिया, जो बाहर के दृश्यों को छुपाये हुए था।

पर्दा सरकाते ही हवा का एक झोका जोर से आया और रेस्टोरेन्ट मे गरमाये हुये लोगो मे सर्दी की लहर दौड गई। सबने उधर झाका। मगर रामनारायण खिड़की की तरफ मुँह किये बैठा था। बाहर पहाडो की देवी मॅसूरी चम्पई लिबास पहने मुस्करा रही थी। वह यह दृश्य देखने लगा।

उसके पीछे जो लोग मेज पर बैठे थे, वह सर्दी से अकड़ने लगे। दून कालेज की कुछ लडकिया भी हिम वर्षा देखने आई थी, और वे भी इसी रेस्टोरेन्ट मे बैठी चाय पी रही थी। उनमे से एक लडकी उठकर आगे बढी और उसने खिड़की बन्द कर दी। रामनारायण चौका "हैं? खिड़की क्यो बन्द करती हैं आप?"

लडकी ने घूमते हुये कहा—

"जी, सर्दी लगती है।"

उन दोनो ने एक दूसरे को देखा। गार्गी, रायसाहब की लड़की, रामनारायण के सामने खड़ी थी। 'आप!' गार्गी के मुँह से अपने आप निकल गया। उसका मुँह लाल हो गया।

'जी मसूरी देखने आया हूँ।" नारायण के कान भी लाल हो गये।

"अच्छा नमस्ते।"

गार्गी इतना कहकर अपनी सहेलियो में जा बैठी। खिड़की के बन्द होते ही दिल की खिडकी खुल गई। यह दोनो आज प्रथम बार आपस मे बातचीत कर सके। इससे पहिले वे दोनो एक दूसरे को देखते भर थे। ज्यादातर उन दोनो की मुलाकात कालेज की सड़क पर होती थी। गार्गी को यह लडका भला मालूम होता था और रामनारायण को गार्गी अच्छी लगती थी। दोनो की नजरे कुछ कह कर झुक जाती और पैर निर्धारित रास्तों की तरफ बढ जाते। अब गार्गी कहने को तो सहेलियो के बीच बैठी थी, परन्तु उसका दिल खिड़की के पास ही अटक गया था। उसके पैरो में ताकत न थी, और जबान भी लड़खड़ाने लगी थी। लेकिन राम-

नारायण को ऐसा लगा, जैसे यह सारी मसूरी उसकी है। वह स्वच्छन्दता पूर्वक काफी पीता रहा और चोर नजरो से गार्गी की तरफ देखता रहा। गार्गी की आखे मेज से ऊपर न उठी। वह प्याला उठाने लगी, तो उसका हाथ काप गया। चाय छलक कर मेज पर जा गिरी। साथ बैठी एक लड़की ने कहा—

"क्या हो गया है तुझे ? कौन है यह लडका ?"

"हमारा पडोसी है।"

पास बैठी दूसरी लड़की ने मेज बजाती हुई कहा—

"समझ गई।"

पहली लड़की ने छेड़ते हुए कहा—

"क्या समझ ग॰ तू ?"

"क्या तू नही समझी ?" इसने उसपर सवाल जड दिया।

"जरा इसके चेहरे की तरफ तो देखो। पसीने के मारे बिचारी का बुरा हाल हो गया है।"

"चुप रह नहीं तो...... ......"

"नही तो क्या करेगी ?"

यह बाते वह धीरे-धीरे कर रही थीं। रामनारायण इतना तो समझ गया कि यह बाते उसी के बारे में की जा रही हैं, परन्तु वह अधिक देरतक वहा ठहर नही सका। काफी के पैसे मेज पर रखकर वह बाहर निकल गया। उसके जाने के बाद सब लड़कियों ने गार्गी को घेर लिया।

"अरी अभी तक इस दर्द को छिपाये रही तू।"

गार्गी कुछ न बोली। वह शर्म के मारे पानी होती जा रही थी। लज्जा से छुईमुई बन गई। जब उनकी बातों का मुकाबला वह न कर सकी, तो उठ कर बाहर निकल गई। बाहर हवा के ठण्ढे झोंके, जो कुछ देर पहले बदन में कॅपकॅपी पैदा करते थे, अब ताजगी पैदा करने लगे। सहेलिया भी आ गई। थोड़ी देर के बाद लड़किया तो इस को भूल गई, परन्तु गार्गी की जिन्दगी मे वह एक क्राति पैदा कर गया।

इसके बाद कुछ दिनो तक तो यो ही हल्की- फुल्की बात होती रही, मगर बाद में लम्बे-लम्बे प्रोग्राम बनने लगे।

स्केटिंग रिंग मे वह एक साथ जाने लगे। कभी कभी मॅसूरी के बाल रूम मे भी अक्सर मिलते रहे। और धीरे-धीरे गहरे साथी बन गये। घर भी पास-पास, कालेज भी साथ-साथ और अब तो दिल भी साथ ही धड़कते थे।

हिमवर्षा के कई अवसर ऐसे भी आये, जब गार्गी और रामनारायण छिप कर मंसूरी का चक्कर काट आते थे। केवल एक दिन की ही तो बात होती थी। गार्गी घर वालों के ध्यान मे सहेली के घर रहती, और रामनारायण लडका था, उसे रोक टोक थी ही नही। वह दोनो शारली-विल की तरफ सबसे ऊँची पहाड़ी की तरफ बढते चले जाते। जहा बंगले खतम होते, वहीं जिन्दगी शुरू हो जाती। चारो ओर सफेदी ही सफेदी मिलती। और यह दोनो सफेदी मे घूमते और बर्फ के गोले बना-बना कर एक दूसरे को मारते हुये करीब बढते चले जाते। ठीक उस समय जब गार्गी बर्फ का गोला बना रही होती, रामनारायण जाकर उसके हाथ से बर्फ छीनने की कोशिश करता और वह अपनी सारी ताकत लगा देती कि मुट्ठी न खुले। परन्तु औरत कहा तक पुरुष का सामना कर सकती है? आखिर इस खीचातानी में दोनों पहाडी पर से फिसल पड़ते, अपने-अपने बदन ढीले छोड़ कर फिसलते चले जाते और ढलाव खतम होते ही एक दूसरे के ऊपर गिर पड़ते। इस सर्दी मे उनके कान लाल हो जाते। एक दूसरे को सामने पाकर भी गुम-सुम हो जाते। यह सफेदी उनकी नजरो में नाचकर कई रंग बदल लेती, आसमानी, बादली, सुनहरी और बहुत से रंग। लेकिन उन रंगों मे स्याही नहीं थी। और अब पंडित उमाशंकर ने इस रंगीली दुनिया मे घृणा की स्याही फैला दी।

रामनारायण ने सोचा आज जरा झगड़ा ही करना चाहिए। फिर उसे ध्यान आया, आखिर उसको इतना परेशान करने से फायदा। गलती तो मेरी है, जो मै उससे मिलने नहीं जा सका। परन्तु गलती भी कैसी?

कल स्वरूप भैया ने ऐसी बात की, और बस, अपना मूड ही अच्छा नहीं था। इतना सोचकर उसने फिर पत्थर उठाया। चारो तरफ देखा, कोई देख तो नहीं रहा, फिर उसमे एक चिट्ठी बाध दी और धड़ से गार्गी के दरवाजे पर दे मारा। एक तडाक सी आवाज हुई और रामनारायण चेहरे पर मुस्कुराहट भर कर खड़ा हो गया।

गार्गी के बिस्तरे की चादर हटी, दो पाव नीचे उतरे और पलक झपकते ही रायसाहब सामने आ खड़े हुए। रामनारायण उनकी सूरत देख-कर किताब की तरफ देखने लगा, रायसाहब ने एक गुस्से की नजर उसपर डाली, और चिल्ला कर कहा—

"हरामजादा"

बात कठोर थी, लेकिन रामनारायण इसका जवाब न दे सका। राय-साहब ने वह पत्थर उठा लिया और चिट्ठी खोलकर पढ डाली। पत्थर उठाकर रामनारायण को मारने की कोशिश की, परन्तु वह मुण्डेर के नीचे बैठ गया, और कपी आवाज से किताब पढ़ने लगा। उसका दिल धक-धक कर रहा था।

रायसाहब अपने मकान की छत पर खड़े होकर गालियां देते रहे थे—

"बदमाश, कुत्ता, लुच्चा, साला। मै इसे कैद करा दूँगा।"

"सुबह सुबह ये गालिया किसे दे रहे हैं रायसाहब।"

पडोसियो के कान खड़े हो गये, वे भी ऊपर से आकर झाकने लगे।

रामस्वरूप भी निकल आया। उसने पूछा—

"क्या बात है रायसाहब?"

"यह तुम्हारा बेशर्म भाई हमारे घर पर पत्थर मार रहा है।"

"मेरा भाई कोई नहीं है, वह हैं ही ऐसे इसीलिए तो मैं अलग हो गया हूँ। अगर इसमे शराफत होती, तो मै छोड़ता ही क्यों।"

पडोस के मकान से पंडित जी ने कहा—

"अजी यह कुत्ता, रोज पत्थर मारता है, रायसाहब की लड़की को देखकर। मै तो कई दिनों से यह तमाशा देख रहा हूँ।"

यह टूटी-फूटी बातें गार्गी के कानो में भी पडी। उसका दिल धक-धक करने लगा। वह जाग कर भी बिस्तर से न उठ सकी। मुँह पर कपड़ा ओढ़े पडी रही। रायसाहब की पत्नी भागकर छत पर आ गई. और बोली—

"क्या करते हैं आप, बदनामी तो हमारी लडकी की होगी।"

और वह उन्हे छत से नीचे उतार कर ले गई। ऊपर छत पर पडित जी, और उसकी घरवाली, रामस्वरूप और उसकी बीबी रह गये। रामस्वरूप की पत्नी ने कहा—

"शरीफ घर की लड़कियों को छेड़ता है, कैसा लडका है। मा समझाती क्यो नही?"

रामनारायण को रायसाहब की गालियों पर तो गुस्सा नही आया, पर भाभी की बातो को सहन न कर सका। बोला—

"तू कौन है? तेरे मकान पर तो मैने पत्थर नहीं मारा।"

"निर्लज्ज, बेशर्म, भगवान करे तुझे मौत आ जाये। मुआ, मेरे मकान पर पत्थर फेंकनेवाले के हाथ न तोड़ दूँ।"

सुहागी पूजा मे बैठी थी। मँझली बहू ने आकर खबर दी कि बड़ी बहू रामनारायण को गालिया दे रही है और रामनारायण उसपर बिगड़ रहा है। पूजा तो ज्यो की त्यो रह गई और मा भागकर छत पर चली गई।

"क्या हुआ रे नारायण?" मा ने पूछा।

रामनारायण तो बोला नही, कलावती बोली—

"अब आई है। क्या हुआ रे नारायण, मुहल्ले की लड़कियो को ताक-झाक करता है, पत्थर मारता है। किसी दिन कोई ठिकाने लगा देगा, तब पता चलेगा।"

मा उसे कोई जवाब न देकर रामनारायण से बोली—

"क्यो रे, मै यह सब क्या सुन रही हूँ? क्या मुझे चैन से मरने भी न दोगे तुम सब? ऐसी बुरी सन्तान से तो औरत बाँझ भली।"

और वह कहते-कहते रोने लगी। रामनारायण भी छत से चुपचाप उतर आया। वह वह जुर्म करते पकडा गया था बोलता क्या? और निचली

छत की खिडकी मे खडे होकर रायसाहब अभी तक गालिया दे रहे थे। सब चुपचाप सुन रहे थे। रामस्वरूप और कलावती खुश हो रहे थे। रामनारायण का दादा पेडाखान गली मे पीपल पर पानी चढाने नहर की तरफ से आया। पानी चढा कर परिक्रमा करते हुए उसकी नजर रायसाहब पर पडी, जो उन्हीं के घर की तरफ हाथ हिला हिलाकर कोस रहे थे। पेडाखान ने कहा—

"तुम गाली किसको देता है ओये ?"

रायसाहब ने गर्दन लम्बी करके गुस्से में कहा—

"तुमको. तमीज से बात करो। ओये क्या होता है ?"

"हम अभी तुमको बतायेगा, तो पता चलेगा ओये टोढी को बोलते हैं। तुम्हारे जैसे रायसाहब को, अंग्रेज का पिट्ठू।"

बिना बात जाने-बूझे ही पेडाखान रायसाहब से उलझ गया, वह दौड़-दौड़कर रायसाहब के घर की तरफ भागता था, लेकिन उसे आदमी पकड़ लेते थे।

"जाने दे लाला, छोड़ बाबा, उसका दिमाग खराब है।"

मुहल्ले में बसने वाले शरणार्थी बूढे को पकड कर समझा रहे थे। लेकिन पेड़ाखान का गुस्सा आसमान पर जा रहा था। रामस्वरूप ने खिड़की से झाका। उसने उसे भी दो चार गालिया सुना दी।

"बेगैरत ! मा की बेज्जती करके घर से निकाल दिया और अब लोगों को समझा-समझा कर सारे खानदान की बेइज्जती करवाना चाहता है ? मै तेरी टाग पर टाग रख कर चीर दूगा हराम ........।"

वह ज्यादा भी न कहने पाया था, कि गली मे, रामस्वरूप की मा घूँघट निकाले आ गई। पेड़ाखान की गाली गले में ही अटक कर रह गई। वह पकड़ने वालों से बोला—

"छोड़ दो बाबा, छोड़ दो, मैं किसी को कुछ नहीं कहता।"

और घर के अन्दर चला गया। उधर रायसाहब को खिड़की मे से

फिर उनकी पत्नी घसीट कर ले गई। रायसाहब आपे से बाहर हो रहे थे, बोले—

"यह, यह तुम्हारी लड़की की करतूत है।"

रायसाहब की पत्नी ने कुछ नहीं कहा, केवल इतना बोली—

"गुस्सा करने से तो कुछ होगा नही, जरा शान्त हो जाइए।"

"शान्त? इसने मेरी इज्जत मे आग लगा दी, मेरे मुँहपर कालिख पोत दी, मै तो मै तो बस. . ।"

रायसाहब सचमुच ही बस हो गये। आगे कुछ नही बोल सके, और बैठ गये माथे पर हाथ रखकर। थोड़ी देर गार्गी की मा उनके चेहरे की तरफ देखती रही, फिर उठकर पानी का गिलास भर लाई और बोली—

"थोड़ा जल पीजिए, मन शान्त हो जायेगा।"

रायसाहब ने गिलास लेकर दो घूँट पानी पिया और बोले—

"जरा मेरे कपड़े निकाल देना।"

"कपड़ों का क्या होगा? कहा जायेगे?"

"जरा पुलीस स्टेशन तक जाऊगा।"

वह घबरा गई। उसने कहा—

"पुलीस चौकी मे कहीं बेटीवाले भी जाते हैं?"

"क्यो नही जाते?"

"बेटीवालो की इज्जत काच की तरह होती है। एक बार टूट गई तो फिर जुड़ेगी नही।"

"अब भी इज्जत बाकी रहगई है?" रायसाहब बोले 'जो स्याही लगनी थी लग चुकी।'

"जब लग चुकी, तो फिर इस स्याही के ऊपर राख उड़ाकर सर में डालने से फायदा?"

"जरा दुश्मनों को भी तो दिखा दूं कि राय साहब अपनी इज्जत उतारने वाला हाथ काट भी सकता है।"

इतना कहकर रायसाहब खुद ही उठकर अलमारी में कपड़े तलाश करने

लगे। रायसाहब की पत्नी पहले तो देखती रही, फिर उठकर उनके पैर छू कर बोली—

'आप को मेरी सौगन्ध, अगर कही गये तो।"

"चुप रहो तुम।" रायसाहब बिलकुल ही बिगड गये।

"मै अपनी इज्जत औरतो के हाथ मे देने को तैयार नही हूँ।"

अब जब पानी सर से गुजरते देखा तो उनकी पत्नी आलमारी के आगे खडी हो गई और कहा—

'नही, मै नही जाने दूँगी।"

"मै तो पुलिस मे जाकर ही रहूँगा।"

रायसाहब ने उसे धक्का दे दिया। वह दूर जा गिरी और फटी फटी आखो से अपने पति के इस बिगड़े हुए रूप को देखती रही। आखिर उठकर बाहर चली गई। रायसाहब कपड़े पहन कर छडी उठाकर घर से निकलने के लिए सीढिया उतर कर जब बाहर के दरवाजे के पास पहुँचे, तो वहा सदर दरवाजे पर ताला झूमता नजर आया।

"यह ताला किसने लगाया है? राधू, कृष्णा, सरयू . . . .।"

रायसाहब ने एक ही सास मे सब नौकरों को पुकार डाला, और पीछे घूमकर देखा तो उनकी पत्नी खड़ी थी।

"मैने ताला लगाया है, मै आप को जाने नही दूँगी, भले आप मेरा खून कर डालिए।"

"मै ताला तोड़ दूंगा।"

इतना कहकर रायसाहब ने अपनी छड़ी उठाई और ताले पर टूट पड़े। उनकी धर्मपत्नी ने दोनों हाथो से ताले को पकड़ लिया, और रायसाहब की छड़ी ठीक उसके हाथो पर आ लगी। बेचारी की चीख निकल गई। गार्गी, जो सुबह से सब बाते सुन रही थी और बिस्तर पर ही पडी थी, मा की चीख सुनकर उठ बैठी और सीधी दरवाजे के पास जा पहुँची। रायसाहब अपनी पत्नी को खीच कर दरवाजे से अलग कर रहे थे। गार्गी को आती देखकर उनकी आखों मे खून उतर आया। बोले—

"कलंकिनी, तू किस मुँह से मेरे सामने आई है? क्यो आई है?"

वह उसकी ओर बढ़े ।

गार्गी ने कहा—

केवल यह पूछने आई हूँ कि आप ने मुझे पढ़ाया क्यो है?"

रायसाहब गरजे—

"क्या इसीलिए पढ़ाया था कि तू मेरी नाक काट डाले?"

गार्गी ने कहा—

"आप नई रोशनी के आदमी है । हमेशा अंग्रेजो का पक्ष लेते रहे हैं। उनकी विशेषताये सुनाते रहे। मैने तो आप के कहने पर अमल किया है।"

"यह अंग्रेजों की खूबी है? तू तो उनकी जूती की बराबरी भी नही कर सकती कुल्टा।"

"और भले ही किसी बात मे न कर सकती हूँ, पर शादी-ब्याह के मामले मे मैने उन्हीं की बराबरी की है। शादी के मामले में लड़की को आजादी होनी चाहिये। मै इस बात को सोलह आने मानती हूँ और मैंने यही किया।"

अब रायसाहब भौचक्के रह गये।

"तू एक रिफ्यूजी से शादी करेगी?"

"हा।"

इतना कहकर गार्गी सिर झुकाये अन्दर चली गई । रायसाहब जाती हुई लड़की को देखते के देखते ही रह गये।

पेड़ाखान घर के अन्दर जाकर सोचने लगा यह कैसे लोग हैं, पड़ोसियो को गालिया देते हैं, इसलिये कि यह रायसाहब हैं । अगर आज अपना देश होता तो मै इसे दिखा देता। हाय रे, मेरा पेशोर! और एक आह भर चुप हो गया। रामअवतार ने आकर दादा से कहा—

"क्या सोचते हो बड़े बाबू ?"

"इस रामस्वरूप की बात सोच रहा हूँ। ऊपर से झाक रहा था कि रायसाहब मेरे दादा को गालिया किस ढग से दे रहे हैं।"

रामअवतार ने कहा—

"नही, मेरा ख्याल है, उन्होंने झाककर देखा होगा कि मेरा दादा किसको गालियां दे रहा है।"

"वह तो मै बता देता, लेकिन इस बहू ने मेरी नाक में नकेल डाल रखी है। मैं कुछ बोल ही नहीं सकता। उसी के कारण सारा घर चौपट हो गया है, वरना यह रामस्वरूप ऐसी हरकत करता ?"

रामअवतार ने कहा—

"लेकिन आज की बात मे तो कसूर अपना ही है।"

"अपना क्या कसूर है ?" पेड़ाखान चौक पड़े।

"आप नहीं जानते ?"

"नहीं, बात क्या है ?"

रामअवतार ने इधर-उधर झाक कर कहा—

"रामनारायण ने रायसाहब की छत पर पत्थर मारा है। वह रोज पत्थर मारता है।"

"हैं !"

पेड़ाखान हक्का-बक्का रह गया, बोला—

"क्या कहते हो तुम ?"

"इसी बात पर तो रायसाहब को गुस्सा आ गया था।"

"क्या वह हरामजादा !"

पेड़ाखान को भी यह सुनकर गुस्सा आ गया।

"मैं ऐसे लड़के को गोली मार दूँगा।"

रामअवतार ने कहा—

"लेकिन बात यह है, कि दोनों आपस मे प्यार... .....।"

"चुप रहो ओय। यह क्या नई पौद निकाली है। अपने भाई को

बचाने के लिए पराये घर की इज्जत पर धूल उड़ाते हो ? शर्म से डूब मरो। बुलाओ सुहागी को।"

दादा ने आज पहली बार गुस्से मे बहू को बुलाने को कहा। इतने मे सुहागी बाहर आती हुई नजर आई। पेड़ाखान मुट्ठिया भीच कर खड़ा हो गया। और बोला

"अगर हमारी बेटी को कोई इस तरह देखता या पत्थर मारता तो जानती हो मै क्या करता ? गोली मार देता, खड़े-खड़े गोली मार देता। और अब तेरे लडके ने ऐसा किया है। बता, क्या करूं उसके साथ। बता सुहागी, वरना मैं इस घर का पानी भी नहीं पीऊँगा।"

सुहागी ने रामअवतार से कहा—

"कहो, मां कहतीं है, तुम जानो और तुम्हारा पोता, मैं कुछ नहीं जानती।"

इतना कहकर सुहागी अन्दर चली गई।

पेड़ाखान ने कहा—

"बाहर भेजो उसको" वह लट्ठ लेकर बैठ गया। "आज तो मैं जान से मार दूँगा उसको।"

लेकिन रामनारायण उस झगड़े से पहले ही बिना नाश्ता किये, किताबे बगल मे दाब कर घर से निकल चुका था।

रामअवतार ने कहा—

"वह कालेज चला गया है।"

"आठ बजे उसके बाप का कौन सा कालेज लगता है, ओये ?"

"कभी-कभी उसे सुबह ही जाना पडता है।"

"तुम सब गधे हो" दादा ने कहा। "सुबह जाने का फल आज सामने आया है।"

रामअवतार ने कहा—

"नहीं जी, वह किताबे लेकर जाता है।"

पेड़ाखान बिगड़ पड़ा।

"अपने दिल मे किताबो को रखकर अगर वह ऐसे काम कर सकती है, तो क्या किताबे बगल मे दबाकर झूठ नहीं बोल सकता? कालेज जाता है।"

रामअवतार यह सुनकर चुप हो गया।

रामनारायण ने घर से निकलकर सोचा कि रामअवतार भैया सुनेंगे, तो क्या समझेंगे? बडे भाई रामस्वरूप ने घर बाट लिया और रामनारायण ने मुहल्ले मे रहने योग्य नही छोडा। फिर वह सोचने लगा "प्रेम ऐसा ही होता है", रामनारायण सोचता गया, और चलता गया। सामने दूर कालेज की बिल्डिग नज़र आने लगी, सामने वाला रेस्टोरेन्ट अभी बन्द था। कालेज भी सुनसान था, किन्तु निस्तब्धता मे उसे एक ही आवाज़ सुनाई देती "ऐसी सन्तान से तो औरत बाझ भली" इन्ही बातो को सोचता हुआ वह सारा दिन घूमता रहा। लेकिन रात के पहले-पहले पहर में ही जब सर्दी बढ़ गई और उसे भूख ने सताया तो प्यार का भूत कही सर छिपा कर दुबक गया। नारायण चुपके से घर मे घुसा, अन्दर रसोईघर मे रोशनी थी, सदर दरवाज़ा खुला था। आगन मे दादा की आग शान्त थी, सुहागी की तरह। मंझली बहू रसोईघर में देवर की राह देखते-देखते ऊँघ गई थी। रामनारायण जब धीरे धीरे दबे पाव सीढ़ियो पर चढ़ने लगा, तो आवाज़ आई—

"कौन है, ओए?"

रामनारायण का दिल धड़का, और पैर वहीं जम गये। यह दादा की आवाज़ थी, जो पिस्तौल चारपाई पर रखे बैठा था। अन्दर रसोईघर में मॅझली बहू की ऊँघ टूट गई, वह दरवाजे की ओर बढ़ी, मा बरामदे के अन्धेरे मे खभे के साथ टेक लगाए चुपचाप खड़ी थी, बहू बेचारी भी

वहीं रुक गई। उसके घूंघट में हैरानी और डर छिपा था, "जाने अब क्या होने वाला है ?" पेडाखान ने चीखकर पूछा—

"क्यो, ओए तू किस खानदान का है ?"

रामनारायण कुछ नही बोला। पेड़ाखान ने गरजकर कहा—

"बोलता क्यों नहीं ?

रामनारायण ने कहा—मैं क्या बोलूं ?

"जो मै पूछता हूँ।"

'आप खानदान की बात पूछते हैं, यह कोई आपसे छुपी तो है नहीं, सब जानते हैं, मै धनीराम का बेटा और पेड़ाखान का पोता हूँ। अब इस सवाल से आपका मतलब क्या है ?"

"बी० एस० सी० मे पढ़ता है तू ! उल्लू के पठे, और मेरे सवाल का मतलब नहीं समझता ?"

गाली सुनकर रामनारायण के कान लाल हो गये, पर कुछ बोला नहीं, चुपचाप उसके चेहरे की तरफ देखता रहा। अन्धेरे मे पेडाखान का चेहरा गुस्से से दमक रहा था।

"यो आंखे फाड़-फाड़ कर क्या देखता है ? मेरा जी चाहता है, तुझे गोली मार दूँ। हम परदेस मे बैठे हैं, जहा अपना कोई नहीं है। इन लोगों ने हमे आसरा दिया और तूने उन्हीं की इज्जत मिट्टी कर डाली है।"

"यह देश पराया नही, अपना है। आसरा देने की बात जो आप कहते हैं, उसे तो मैं किसी तरह ठीक नहीं समझता। मनुष्य जहा भी जाता है, मनुष्यता के नाते सब उसके साथ होते हैं, और धरती सबकी मा है। अनाज पैदा करते हुए वह यह कभी नही कहती कि इसे यू० पी० वाले खाये और इसे पजाबी खायें। भूखे का पेट भरना चाहिए। केवल भूखो के लिए ही वह अपने सीने से अन्न उगाती है। अपने बच्चों का पेट भरने के लिए।"

दादा का गुस्सा नारायण का लेक्चर सुनकर और भी बढ़ गया। वह बोला—

"बद्दस करता है हरामजादे !"

गाली सुनकर रामनारायण के मुँह से निकल गया—

"आप खामुखा गाली देगे तो .    ।"

सुहागी यह सुनकर बरामदे मे खड़ी तडप उठी। किसी ने बरामदे की लाइट जला दी। रामनारायण मा को देखकर चुप होकर बैठ गया।

दादा ने कहा—

"चल मेरे साथ. मै तुझे दुश्मन के हवाले करता हूँ। तूने उसका गुनाह किया है; अब वह तुझे मारे या जिन्दा रखे, यह उसी का काम है। मेरा काम यह है कि तूने जिसकी इज्जत पर हाथ डाला है, उसी के सुपुर्द कर दूँ।"

इतना कहकर दादा ने उसे बाजू से पकड कर घसीटना शुरू कर दिया। सुहागी एक कदम उनके पीछे गई कि दादा का बाजू पकड़ ले, लेकिन वह न पकड़ सकी। रामअवतार दादा और मा के बीच आ गया, पर देखता रहा, कुछ बोला नही। पेड़ाखान कहता जा रहा था—

"इस धरती के पानी ने तुम्हारी आख का पानी मिट्टी कर दिया है। तुम्हारी पठान वली, जाने कहा चली गई है। तुम कमीने हो गये हो, बेगैरत।"

और न जाने क्या-क्या कहता हुआ रामनारायण को ले जाकर राय-साहब के दरवाजे पर ला पटका और फिर जोर से चीखा—

"रायसाहब ओ रायसाहब !"

रायसाहब बालकनी पर आ गये और बोले—

"कौन है ?"

"मैं हूँ, पेड़ाखान, तुम्हारा पड़ोसी।"

"क्या बलवा करने आये हो ! बुलाता हूँ पुलिस को।"

रायसाहब ने सबेरे वाले अन्दाज में कहा।

"नहीं, मुजरिम को लेकर आया हूँ। इसने तेरी पगडी को हाथ नहीं डाला, बल्कि मेरी पगड़ी को पैर के नीचे रौद डाला है। मै पठान आदमी

हूँ, पड़ोसी की इज्जत अपनी इज्जत है। तू जो चाहे इसे सजा दे, कोई नही बोलेगा। बेशक इसे जान से मार दे, यह पिस्तौल भी लेकर आया हूं। मै पुलिस को कह दूंगा कि खून मैने किया है। हमारे देश की यही रीति है खूनी को मृतक के घर वालो के हवाले कर देते है।"

रायसाहब की पत्नी भी बालकनी मे आ गई। रायसाहब की समझ मे कुछ नही आता था कि वह क्या करे। उन्होने पत्नी की तरफ देखा। पत्नी ने कुछ कहा जिसे शायद रायसाहब भी अच्छी तरह नही सुन सके। वह जल्दी से आगन मे उतर आये।

इधर कुछ लोग रात के समय शोर सुनकर गली मे निकल आये, तमाशा देखने के लिए। इधर रायसाहब, पेड़ाखान के सामने जा खड़े हुए। किसी ने बढ़कर दरवाजा खट से बन्द कर दिया। रायसाहब भी पेड़ाखान को देखते रहे, फिर बोले—

"मैने अपराधी को माफ कर दिया।"

पेड़ाखान भावनावेश गदगद हो गया।

"तुम, तुम दयालु हो, देवता हो, भगवान हो तुम।" उसकी आंखों मे पानी आ गये।

"चरन छू ओए भगवान के।"

उसने अपने पोते से कहा।

और रामनारायण ने बढ़कर रायसाहब के चरन छू लिये। उसकी आंखें डबडबा आई।

बाहर गली मे जो लोग खड़े थे, कुछ शरणार्थी और कुछ यू० पी० वाले, दोनो लठ सम्भाले हुए थे। रायसाहब ने कुछ कहा तो हम टुकड़े कर डालेगे उसके और यू० पी० वाले कहते थे, कि बस रायसाहब के इशारे की देर है, किसी शरणार्थी का पता तक नहीं चलने देगे। कोई मन चला भागकर पुलिस को भी बुला लाया। पुलिस के आते ही लोग एक तरफ हट गये। सब-इन्सपेक्टर ने आकर पूछा—

"क्यो इकट्ठा हो तुम यहा?"

"यहा अन्दर झगडा हो रहा है सरकार !"

किसी ने कहा ।

"लेकिन मकान के अन्दर से तो कोई झगडे की आवाज नही आ रही है ।"

एक शरणार्थी बोला--

"मुमकिन है, कट मर गये हो अन्दर ही ।"

इन्सपेक्टर उस तरफ बढा ।

ठीक उसी समय छलाग कर आने वाली कुछ पड़ोसिनों ने जो इस झगड़े का निपटारा देख चुकी थी, सुहाग के गीत छेड़ दिए ।

रायसाहब ने उसी रात गार्गी की सगाई पेड़ाखन के पोते से कर दी ।

पेड़ाखान ने शकुन ला कर सुहागी को बधाई देते हुए कहा—

"ले बेटा ! तेरी एक बहू और आ रही है, अब तो अपने सर से सौग उतार दे ।"

इतना कहते-कहते पेड़ाखान की आखे भर गई । अपने ही बेटे की मौत का सौग उतारने के लिए बहू को कह रहा है । जो काम बेटों को करना चाहिए था, वह दादा कर रहा था । यह कितने दु:ख की बात थी, लेकिन बड़ा पोता जो कपूत निकल गया, तो क्या करे ?

बहू ने आगन मे बैठी सास के सरपर रेशमी दुपट्टा डालकर वह मैला-कुचैला दुपट्टा खींच लिया । सास और बहू दोनों की चीखें निकल गई । पेड़ाखान भी वहा खड़ा न रह सका । रामअवतार खड़ा था । मा ने बेटे की तरफ देखा और कहा—

"जरा उसको तो बुलाओ, अपने बड़े भइया को ।"

"वह अपने आप आ जायेगा ।"

इतना कहकर रामअवतार अन्दर चला गया । मा कुछ कह न सकी । केवल एक आह भरकर चुप हो गई, जैसे कह रही हो, "वह नहीं आयेगा, पर अच्छा तुम्हारी खुशी ।"

सगाई का शोर गुल समाप्त हो गया। रामनारायण के घर खुशी के गीत गाने मुहल्ले की सब औरतें आईं, लेकिन बड़ी बहू नहीं आई। बधाई देने सब आये, परन्तु रामस्वरूप नही आया। मा एक दिन घर वालो की आख बचा कर रामस्वरूप के घर हो आई थी, लेकिन बड़ी बहू ने कहा—

"अपनी बिरादरी की लडकी लाते तो हम आते, पराई बिरादरी मे गये हो, तो हमारा उनसे क्या वास्ता ?"

असल मे बडी बहू बिरादरी के चौधरी की बेटी थी और इसी बात पर उसे घमण्ड था। वह नाक पर मक्खी न बैठने देना चाहती थी।

"अपनी बिरादरी मे कौन से सुरखाब के पर लगे हैं बहू, जो इनके नही हैं।"

बहू बोली, "आखिर अपनी बिरादरी की लड़की मिलती भी कैसे ? घर मे तो भाग भुनती है।"

मा ने कहा—

"हा यह बात तो सच्च है। हलुवा बनाने की सामग्री तो तुम इकट्ठी करके ले आई. अब तो हमारे पास रहा ही क्या ?"

'मैं क्या लेकर आई हूँ ?"

सच बात सुनकर बहू को गुस्सा आ गया।

"खाली दुकान देकर मुझे घर से निकाल दिया और आज झूठा दोष लगाती हो ?"

यह कहते-कहते बहू ने आखों मे आसू भर लिए और चीखना शुरू कर दिया।

"इस दो ईंट की दीवार में भी मुझे आराम से नहीं रहने देती हो। देखो लोगो, यह सास है। डायन है डायन, मुझे खा ले तू।"

"बहू, मैं तो तुझे बुलावा देने आई थी, तूने तो तमाशा बना दिया। रामस्वरूप घर में होता तो इतनी बात नहीं बढ़ती, पर मेरी किस्मत में यही लिखा है, अच्छाई के बदले बुराई।"

इतना कहकर सास उठ गई और फिर रामस्वरूप के दिल में ऐसी चिढ हुई कि उसे मा की सूरत देखने की भी इच्छा न थी।

रात को जो गीत गाये जाते थे, उनको सुनकर रामस्वरूप को अन्दर ही अन्दर जलन होने लगती थी, क्योंकि उसकी पत्नी ने यह कहा था—

"मा कह गई हैं, कि मैने चौधरी की बेटी के सरपर जूता मारने के लिए यह रायसाहब की बेटी ली है। बड़ा बेटा कुपुत्र निकल गया तो क्या हुआ, बाकी तो सब सुपुत्र हैं।"

उसके ससुर को मा ने बुरा कहा है, यह बात उसे चुभ रही थी। वह इन गीतों को सहन न कर सका और अपनी बीबी को लेकर मसूरी चला गया। मंसूरी मे इन दिनो कोई जगह खाली नहीं थी; रामस्वरूप ने एक कोठी खरीद ली। बीस हजार रुपये की जायदाद चालीस हजार रुपये में ले ली। एक तो खानदान से जला हुआ था और दूसरे काला बाजार का पैसा।

हराम की कमाई खर्च करते हुए दुःख नहीं होता। वह रोज सवेरे मंसूरी से देहरादून आता और शाम को मंसूरी लौट जाता था। दुकान खूब चलती थी। फिटन की जगह मोटर हो गई थी।

इस घर मे रामी और रामी का घर वाला आ गया था, रामी रात को गाने में जरूर शामिल होती थी, रामी कहती—

"मा जी, मै तो आपके बेटे की नौकरानी हूँ. आपकी बदौलत ही हमे रोटी मिलती है।" मा खुश हो जाती और कहती—

"नहीं बेटा, तू तो अपनी मेहनत की कमाई खा रही है। जहां काम करेगी, वहीं खाएगी।"

••••••••••

मुहल्ले वाले सब जानते थे रामस्वरूप धनवान है और रामअवतार रामस्वरूप का भाई है । लेकिन छोटे की हालत क्या है, यह कोई नहीं जानता था। रामअवतार ही जानता था कि सेठ हर्जीमल के पास से ५००) रुपये आए थे, वह रामनारायण की सगाई मे सब उठ गए। अब क्या होगा, यही सवाल उसके सामने था। परेशानी बढती गई, आखिर परेशानी सोचने से कम थोड़े ही हो सकती है ।

घर में गाय थी, उसके लिये घास भी थी, लेकिन खली और बिनौले जो उसे खाने को दिये जाते थे वह खतम हो गए । मां ने एक दिन रामअवतार से कहा—

'बेटा गाय का भूसा तो बढ गया है और बिनौले भी गाय ने खा लिए हैं और तो जो होगा सो होगा. परन्तु इसका तो इन्तजाम होना ही चाहिए, नहीं तो बच्चे को दूध नहीं मिलेगा और बड़े बाबू को भी तकलीफ होगी । बासी रोटी, मक्खन और मलाई, उनकी पुरानी आदत है । अब अगर यह आदत छूट गई तो वह और भी कमजोर हो जायेंगे । बुढ़ौती की उमर है, इस उमर मे तो आदमी सिर्फ खूराक पर ही चलता है ।"

रामअवतार बोला—

'दूध कोई बिनौले से थोड़े ही बनता है । यह इतनी बड़ी धरती फैली हुई है, घास उगी हुई है जितना चाहेगी गाय खा लेगी ।"

"अरे ! तुझे क्या हो गया है । घास खायेगी तो दूध कैसा देगी और कितना देगी ?",

रामअवतार चुप हो गया । मा ने सच बात कही थी । वह कई दिनों से यह भी देख रहा था कि घर मे मा रूखी रोटी खा कर पड़ी रहती है । चूंकि घी खरीदने के लिये पैसे नही, इसलिए दूध मुन्ना और दादा को छोड़कर किसी को नहीं मिलता । रामनारायण, जो कालेज मे पढता है, उसका भी दूध बन्द हो गया है । दही बिलोने पर जो मक्खन निकलता है, वह रत्तीभर

दादा को मिलता है, बाकी रसोई में खप जाता है। अब अगर बिनौले न मिले, तो रसोई का घी भी गायब हो जायेगा। वह सोच कर चुप हो गया। आखिर करता क्या ?

काम धन्धा तो कोई था नहीं, पढ़ा लिखा होता तो नौकरी कर लेता। उसने सोचा तो दो बाते समझ मे आई, या तो वह दफ्तर मे चपरासी की नौकरी करले या किसी केमिस्ट कै यहा नौकर हो जाए। यह सोचकर उसने तय किया किसी केमिस्ट के यहा नौकरी करेगा। नौकरी ढूंढने के लिये साफ-सुथरे कपडे चाहियें। एक ही जोडा है, और वह भी मैला। अभी धुलवाये लेता हूँ, आज तो जाना होगा नही, कल जाऊँगा। यह सोचकर उसने पत्नी की तरफ देखा, वह काम मे लगी थी। मै खुद नहर पर जाकर क्यों न धो लाऊँ ? यही अच्छा है। वह उठा और गाय की रस्सी खोलने लगा। मा ने पूछा—

"गाय को कहा ले चला?"

उसने कहा—ग्वाला तो कई दिनो से आया नहीं, जरा मै ही इसे घुमा लाऊँ। बेचारी सारा दिन थान पर बंधी रभाती रहती है।"

गाय ने एक बार मुहँ उठाकर देखा और उसका हाथ चाटने लगी, शायद समझ रही थी कि रामअवतार उसे घुमाने को लिए जा रहा है। उसका बछड़ा भी पूँछ उठाकर पीछे भागने के लिए लपका, लेकिन रस्सी न टूट सकी।

सुहागी बच्चे के उत्साह को देखकर सोचने लगी, "हे राम, यह ममता कैसी बुरी है।"

फिर उसको ध्यान आया कि उसका बच्चा रामस्वरूप का भी बचपन ऐसा ही था। एक मिनट के लिये भी मा से अलग नहीं होता था। पर अब तो कई दिनों से देखने मे भी नहीं आया। यह सोचकर उसके मुँह से एक आह निकल गई। बछड़े ने उसी समय फिर मा को पुकारा। उसे बिलकुल ऐसा लगा जैसे उसने मा कहा हो।

गाय नहर के किनारे घास चरने लगी और रामअवतार कपड़े धोने लगा। कपड़े धोकर जब धूप मे सूखने के लिए डाल चुका तो उसने देखा कि गाय नही है। "कहा गई ?"

सामने की कोठी मे हरी हरी घास लहरा रही थी। गाय का मन ललचाया और वह बे-खटके जा घुसी। रामअवतार ने देखा तो उसकी तरफ भागा और बोला—

"अरे, कोई मारेगा तुझे, यह कोठी और किसी की है, मेरी नहीं।"

लेकिन गाय नही मानी। उसका ख्याल था, घास तो धरती की है, जो सब की मा हैं, प्राणीमात्र की मां! फिर मेरा तेरा क्या। रामअवतार कपडो को छोड कर उसके पीछे चला गया। कोठी खाली थी, घास अच्छी थी, मौका ठीक था। गाय घास चरती रही और रामअवतार उसके पीछे पीछे घूमता रहा। वह यह भी भूल गया कि उसका भी बदन नङ्गा है, अगोछा बाधे घूम रहा है। गाय बड़े मजे से घास खा रही थी। वह यही देखकर खुश हो रहा था।

जब गाय का पेट भर गया तो वह उसकी रस्सी पकडकर लौट पडा। नहर के किनारे आकर देखा तो सूखने वाले कपड़े गायब थे—"कहा गये कपड़े ?"

हवा के जोर से उड़ कर नहर में गिरे और पानी के बहाव में बह गये। रामअवतार कपड़ों को गायब देखकर धक रह गया। गाय झूमती झामती पानी पीने लगी और रामअवतार धड़कते हुए दिल से किनारे पर कपड़े खोजने लगा। नहर के किनारे जो आदमी थे, वह उसे गौर से देखने लगे कि यह बेचारा परेशान हालत में नहर के पानी मे कभी नीचे जाता और कभी ऊपर आता, कभी दुकानों के नीचे ढूंढ़ने लगता। एक दूकानदार ने पूछा—

"क्या ढूंढ़ते हो भाई ?"

रामअवतार ने कहा—

"यहा कपड़े धो कर सूखने के लिए डाले थे।"

"तो किमी शरणार्थी ने बिलकुल सुखा दिये होगे"। इतना कहकर दुकानदार हँसने लगा। "बुरा मत मानना, इस देहरादून मे पहले चोरी-चकारी नही होती थी। मगर अब तो किसी पर विश्वास नही रहा। सच मानो, अब तो कभी कभी मेरा जी चाहता है कि यह दुकान वुकान छोडकर बस यही धन्धा शुरू कर दूं, चोरी।'

रामअवतार ने कहा—

"तुम्हे मजाक सूझता है, और यहा जान पर बनी है।"

"अरे भैया. दो कपड़े खो जाने से क्या प्रलय आगई।"

रामअवतार बोला—

"यही दो कपड़े तो थे अपने पास। कल नौकरी ढूढने जाना था, अब तो घर से बाहर निकलने की भी सूरत नहीं रही।"

परेशानी मे सच बात अपने आप उसके मुँह से फिसल पड़ी। इस पर दुकानदार अफसोस कर कहने लगा—

"हरे राम, राम, यह तो बहुत बुरा हुआ, पर किस्मत की बात है, हो क्या सकता है? तुम रहते कहा हो?"

"यह पीछे गली मे, "रहमत मंजिल।" रामअवताार ने कहा।

"अच्छा, वह हाजी साहबवाले मकान में! ढेरों रूपये लगाकर हाजी साहब ने मकान बनवाया था, पर उनके भाग्य मे रहना लिखा ही नही था, छोड़ कर पाकिस्तान चले गये, तुम्हारे नाम अलाट हो गया होगा मकान। क्या किराया देते हो?"

रामअवतार ने कहा—

"खरीदा था, हाजीसाहब से।"

"अच्छा, तब तो भले आदमी मालूम होते हो, बैठ जाओ न।"

रामअवतार बैठ गया। दूकानदार ने कहा—

"मेरा कुरता ले जाओ, कल आकर वापस कर देना।"

"नहीं जी, ऐसी क्या जरूरत है, घर ही तो जाना है। जरा अन्धेरा हो जाय तो चल दूंगा।"

लेकिन गाय अब घर चलने के लिए उछल कूद रही थी। दुकानदार बातें करता रहा और गाय ने दाल की बोरी में मुँह डाल दिया। वह दाल खाती रही, यह बातें करते रहे। दुकानदार उठकर अन्दर गया। रामअवतार ने देखा तो गाय बोरी साफ कर चुकी थी।

"अरे तू ने यह क्या किया ?" यह कहकर वह उसको अलग हटाने लगा, पर बोरी गाय के मुह के साथ चली गई। दुकानदार अन्दर से कुरता लेकर आया और बोला—

"लो जी, इसे पहन लो।"

इतना कहते-कहते उसने जो बोरी देखी, तो बस तड़प गया–

"यह क्या ?"

रामअवतार शर्म के मारे जमीन में गड़ गया और खिसियानी हँसी हँस कर बोला—

"हम तो बातों में लगे रहे और हमारी माता जी ने बोरी साफ कर दी।"

"तुम्हारी माँ होगी, मेरी मा थोड़ी नहीं है। दुकानदार बिगड़ा और फिर हाथ बढ़ाते हुए बोला, लो कुरता।"

"मुझे कुरता नहीं चाहिए।"

"कल लौटा देना, और साथ ही पाँच सेर दाल के पाँच रुपये लेते आना।"

"अच्छा ! रुपये तो कभी आकर लौटा जाऊँगा, लेकिन कुरता नहीं लूँगा।"

"कोरा है, पहना हुआ नहीं है।"

"वह ठीक है, पर मैं कुरता पहनता ही नहीं।

"तो मत पहनो।"

इतना कहकर उसने कुरता अन्दर फेंक दिया और बोला—

"पाँच रुपये ?"

"जल्दी ही ला दूँगा।"

रामअवतार गाय की रस्सी पकडे घर की ओर चल दिया । सड़क की बत्तिया जल चुकी थीं । रामअवतार अगौछा लपेटे और रस्सी पकड़े गाय खीचे ला रहा था । गली में घुसते शर्म नहीं लगी क्योंकि उसका ध्यान कपड़ों की ओर था ही नही, उसे तो पाच रुपयों की चिन्ता थी । गली के मोड़ पर रामस्वरूप उसे मिला जो मोटर मे बैठ रहा था । उस समय उसे ध्यान आया कि वह नंगा है ! वह एक तरफ हट गया, मोटर स्टार्ट हुई और जब नजर से ओझल हो गई तो उसने गली के अन्दर प्रवेश किया । घर मे घुसा तो सामने कोई नही था । दादा छप्पर के नीचे दीवार की तरफ मुँह किये बैठा हुक्का पी रहा था । रामअवतार ने गाय को थान पर बाध दिया । गाय घर मे घुसते ही बच्चे को देख कर रम्भाने लगी । मा आवाज सुनकर बाहर निकली । एक नगे आदमी को देख कर बोली—

"कौन है ?" गाय तो रामअवतार लेकर गया था । क्या ग्वाला है, तुझे वह कहा मिल गई और तू इतने दिनों से आया क्यों नहीं ?"

मा कहते कहते पास आ गई । रामअवतार ने पलट कर देखा, तो मा ताज्जुब से बोली—

"अरे तेरे कपड़े कहां गये ?"

"नहर के किनारे खो गये ।"

"तू तो गाय लेकर गया था ।"

रामअवतार ने कपड़े धोने की बात छुपाते हुए कहा—

"नहर में नहाने घुसा था, डुबकी लगाई तो कपड़े गायब हो गये ।"

दादा यह सुनकर चौका । रामनारायण ने कहा--

"वाह भैया ! मुझे पुकारा होता तो मै कपड़े ले कर आ जाता ।"

मां ने कहा—

"तेरी किस्मत में दुख ही लिखा है अभागे । मैं पूछती हूँ, तुझे नहाने की क्या जरूरत थी, इस सर्दी में ?"

मंझली बहू अन्दर से पुरानी लोई ले आई और रामअवतार ने लेकर ओढ़ ली और फिर बोला—

"ला बर्तन ले आ, दूध दुह दूं।"

मझली बहू चली गई तो मा ने फिर कहा—

"अब कपड़े कहा से आयेंगे ? तुझे होश नहीं, काम न काज, निठल्ला बैठा है और ऊपर से यह नई मार।"

दादा ने कहा—

"सुहागी, बेटा पर काहे को बिगड़ रही हो ? कपड़ों की चोरी होना था, भगवान की दया थी कि इसने पहन नहीं रखे थे, वरना इसे भी साथ ले जाता।"

दादा ने छेड़ की। सुहागी घूँघट काढ़ कर अन्दर चली गई और रामअवतार दूध दुहने लगा। वापस आते हुए जो हरी हरी घास लाया था, वह उसने बछड़े को डाल दी।

मझली बहू रसोई से निपट कर आई तो देखा कि मां बिस्तरे की चादर काट रही है। बहू ने पूछा—

"यह क्या बनाने लगी मा जी ?"

मा बोली—

"रामअवतार के कपड़े न बनाऊँ तो कल पहनेगा क्या ?"

बहू भी पास बैठ गई और हाथ बटाने लगी। फिर बोली—

"चादर से तो सलवार नहीं बनेगी। हा, मा जी, एक बात याद आई, उनके कपड़ों का एक जोड़ा तो रखा है।"

"कहा ?"

"वह कपड़े, जो नन्हा की सालगिरह पर आपने उनके लिये बनाये थे।"

माँ की बूढ़ी आखों में रोशनी आ गई। बोली—

"अरे हा, जा, जरा निकाल ला।"

मंझली बहू उठकर चली गई और एक पल में ही कपड़े लाकर रख दिये। मा ने कहा –

"यह तो कोरे हैं।" और वह उलटने-पलटने लगी । "जरा इन्हें, धोकर डाल दे तो सुबह पहनने के काम आयेंगे।"

बहू उठकर जाने लगी, तो मा ने कहा—

"अब रहने दे, सर्दी जोर की है, सुबह धो लेना।"

"नहीं, ऐसी भी क्या सर्दी है, अभी धो लेती हूं।"

"नहीं बेटा, इस समय कपड़ों मे साबुन जम जायेगा और फिर राम-अवतार को कौन दफ्तर जाना है।"

बहू ने कपड़े वापस रख दिये। दफ्तर की बात सुनकर उसे एक धक्का सा लगा। अगर उसका घरवाला पढ़ा-लिखा होता तो आज सास यह बात न कहती। लेकिन पढ़ाया-लिखाया किसी ने नही। अब उसे सास के पास बैठना अच्छा न लगा, उठकर अपने बिस्तरे पर चली गई।

रामअवतार अभी तक जाग रहा था और सास-बहू की बाते भी सुन रहा था। कपड़ो का प्रश्न हल हो गया है, यह सुनकर उसे कोई खुशी नहीं हुई, क्योकि चिन्ता तो पाच रुपयों की थी। वह दुकानदार कितना अच्छा आदमी है, वह इन्ही पाच रुपयों की फिक्र मे करवट बदलता रहा, उसे नींद किसी तरह नही आ रही थी। आधी रात बीत गई और घर वाले सो गये। आखिर वह उठा और लोई लपेटकर बाहर बरामदे मे आ गया। बाहर चादनी खिली थी। उसने सोचा बड़े बाबू से पूछना चाहिए, शायद उनके पास पाच रुपये हो। बचपन मे जब छोटे बाबू पैसे नहीं देते थे तो बड़े बाबू दे देते थे। यह सोचकर वह उनकी तरफ बढ़ा, लेकिन पीछे से किसी ने लोई का पल्लू पकड़ कर खींचा। वह रुक गया। पीछे पलट कर देखा तो कौशल्या खड़ी थी। उसकी बगल में एक कपड़ों की पोटली थी।

"कहीं जा रहे हैं आप?"

"कहीं नहीं, जरा बड़े बाबू के पास जा रहा था।"

"आधी रात गये उनसे क्या काम आ पड़ा आपको? जरा यहां आइये।"

इतना कह कर वह गुसलखाने की दीवार के पीछे चली गई, वहा दो चार बेले मुर्झाई सी खडी थी और सामने अलीची के पेड भी लहर रहे थे, चादनी छनकर जमीन पर बिखर रही थी। वहा पर लटके हुये झूले पर कपडो की पोटली रखकर खड़ी हो गई। चादनी ठीक उसके चेहरे पर पड रही थी। रामअवतार ने पास आकर कहा—

"क्या है कोशी ?"

उसने कहा—

"आप कोई काम क्यो नही करते ?"

"क्या काम करू, बता ?"

"कुछ कीजिए" इतना कहते-कहते उसने रामअवतार को झूले पर बिठा लिया "क्योकि बिना काम के घर मे इज्जत नहीं होती।"

रामअवतार ने कहा—"अरे, मै क्या ससुराल मे रहता हूॅ, जहा बेकार जमाई, घर का नौकर समझा जाता है ?"

कौशल्या ने कहा—मै तो ससुराल मे रहती हूॅ, बेकार लड़के की बहू घर की क्या होती है ? मेरे दिल से पूछो ?

"क्या मा जी ने कुछ कहा है तुझे ?"

"नही, मा जी ने मुझे तो कुछ नही कहा, लेकिन आपके बारे मे कह रही थी कि उसे कौनसा दफ्तर जाना है।"

रामअवतार को बात याद आ गई, क्षण भर के लिये उसने उसकी तरफ देखा और फिर उसका हाथ पकड़कर झूले पर बैठा कर बोला—

"मा ने ताना नहीं मारा पगली, उसने तो सीधे ढंग से एक बात कही है इसमें बुरा मानना नही चाहिये।"

"मैं बुरा नही मानती, लेकिन आप काम जब तक नही करेंगे, मुझे ऐसी बाते जरूर बुरी लगेगी और फिर रामनारायण का ब्याह भी तो करना है. इसके लिये भी तो पैसे चाहिये। आखिर इस घर का क्या होगा ? घर मे आप ही बड़े हैं, लेकिन काम काज का आपको कोई ध्यान ही नही।"

"कोशी, इसी ध्यान में तो आज कपड़े खो दिये।"

"वह कैसे ? आपकी बात मेरी समझ मे नही आई ?"

"मैने सोचा, तुम्हे कपड़े धोने मे तकलीफ होगी, इसीलिये खुद नहर पर कपडे धोने चला गया। सोचा था, कल पहन कर जाऊंगा और काम तलाश करूंगा। किसी केमिस्ट की दुकान पर या फिर चपरासी की नौकरी कर लूंगा। थोड़े दिनो की बात है।"

कौशल्या बोली—

"हाय मैं मर जाऊँ। आप चपरासी की नौकरी करेंगे ?"

"क्यो इसमें क्या है ? रामनारायण जरा परीक्षा दे ले तो कहीं अच्छी जगह नौकरी करवा दूंगा। वह रायबहादुर खन्ना देहली मे मंत्री बन गये हैं। पिताजी के बड़े अच्छे दोस्त है। मै उनके पास जाऊँगा तो नौकरी देनी ही पड़ेगी उन्हें।"

कौशल्या ने कहा—

"कपड़े तो मै अभी धोये देती हूँ।"

"इस वक्त इतनी सर्दी मे ?"

"आप बाहर घूम रहे हैं, आप को सर्दी नहीं लगती ?"

"तेरे भरपूर प्यार नें मुझसे दुःख का एहसास छीन लिया है कौशी!"

इतना कहते-कहते रामअवतार ने उसे सीने से लगा लिया। थोड़ी देर तो वह चुप रही, फिर बोली—

"तो कल आप काम पर जायेंगे न ?"

"काम पर तो नही, पर हा, काम ढूंढने जरूर जाऊँगा।"

"मेरा भी वही मतलब है। अच्छा यह तो बताइये, आप बड़े बाबू के पास क्यों जा रहे थे ?"

"कोई खास बात नहीं।"

"फिर भी.........।"

"आज हुआ यह कि गाय को लेकर बाहर गया था तो उसने एक बनिए की दाल खा ली।"

! वह क्यो ?"

' उमकी मौज .....।"

"फिर ?"

"अब बनिये के पांच रुपये देने हैं । उमकी चिन्ता मे था। शायद बड़े बाबू जी के पास पैसे हों तो उनमे माग लूॅ।'

"उनके पास कहा से आये ?'

' अरे तू नहीं जानती । जब मै छोटा सा था और बाबू जी पैसे नहीं देते थे तो बडे बाबू दे देते थे ।"

इसपर कोशी हॅस पडी, "आप तो सचमुच बच्चे हैं । उस वक्त तो बड़े बाबू जी के बाग थे, जायदाद थी, सब था । अब क्या रह गया है ?"

"हा, यह तो मै भूल ही गया था । फिर अब क्या होगा ?"

"इसकी चिन्ता आप न करे । मैंने नन्हें के कुछ पैसे जमा किए हैं । कल सुबह उसकी बुग्गी तोड़ कर निकाल लूॅगी ।"

"वह क्या पाच रुपये हो जायेंगे ?"

"उससे भी ज्यादा होंगे ।"

"अब क्या बच्चे के पैसे हम खायेंगे ?"

"बच्चा भी हमारा ही है । फिर जब आप काम करेंगे तो लाकर उसमें डाल देंगे ।"

"मां को पता चलेगा तो क्या कहेगी ।"

"मा जी को पता चलेगा कैसे ? उन्हे तो जमा करने का भी पता नहीं ।"

"तू बड़ी अच्छी है कोशी !"

उसने उसको और करीब खींच कर कहा ।

कोशी ने उसके होठो पर हाथ रख दिया और बोली—

"नहीं, अच्छी नहीं, चोट्टी हूॅ ।"

रामअवतार ने उसे अपने सीने से लगा लिया । वह देर तक इसी तरह बैठे रहे । आखिर कोशी झटपटा कर उठ खडी हुई और बोली—"हाय राम मुझे तो अभी कपड़े धोने हैं ।" यह कहकर वह भाग खड़ी हुई।

रामअवतार वही बैठा रहा। उसकी आखो से दो आसू गिर पडे जब उसने कपड़े धोने की आवाज सुनी।

दूसरे दिन सवेरे ही रामअवतार कपडे बदल कर घर से निकल गया। सारा दिन केमिस्टो और डाक्टरों के यहा घूमता रहा, लेकिन उसे कही नौकरी न मिली। कई जगह तो उसे नौकरी मागने की हिम्मत ही नही हुई, इसलिए कि लोग सोचेगे, अपनी दुकान रखते हुये, नौकरी मागता है। और कई लोग जो उसे नही जानते थे, उसकी हालत देखकर टरका देते थे। एक-दो जगह पर ऐसा भी हुआ कि लोग "कम्पाउण्डर बनना चाहता है, परन्तु अनपढ़ है" कहकर हॅस देते।

रामअवतार यह सब अपमान सहकर भूखा-प्यासा घर को लौट रहा था। उसने अपनी कोट की जेब में हाथ डाला। निराश मानव सहारा चाहता है, अब किसको पकड़े। अनिच्छा से हाथ जेब मे जाते ही, जेब कुछ भारी मालूम हुई। उसमे इकन्निया-दुवन्निया भरी हुई थी। उसने जल्दी से सब पैसे निकाल कर गिन डाले, पाच रुपए छ आने थे। जिस बाजार मे वह पैसे गिन रहा था, वहा हलवाइयो की दुकाने थी। उसने सोचा कुछ खाना चाहिए। लेकिन खाये क्या? छ. आने मे वह अपने बच्चे के लिए कुछ खरीद कर भी ले जाना चाहता है। फिर उसने सोचा, अभी थोड़ी देर मे घर पहुँच जाऊँगा, छः आने में गाय के लिए खली खरीद कर ही लेता जाऊँ। यह सोचते-सोचते वह सेठ हर्जीमल के मकान के नीचे से गुजरा, सोचा जरा सेठ जी के यहा जाऊँ, शायद उधार दस-बीस मिल जायें, या उनके मारफत कहीं नौकरी मिल जाये। इतना सोच कर वह सेठ जी की सीढ़ियों पर चढने लगा। नीचे कोई आदमी उतर रहा था। सीढियो मे अन्धेरा था। वह एक तरफ हट कर खड़ा हो गया। आदमी नीचे उतरा तो मालूम हुआ कि डाक्टर था। पीछे-पीछे मुनीम जी चले आ रहे थे, बैग उठाये। उसे देखकर मुनीम जी बोले—

"आज सेठ जी नहीं मिलेंगे, उनका बच्चा बहुत बीमार है।"

"क्यों, क्या हुआ बच्चे को ?"

"कह तो दिया बहुत बीमार है।"

इतना कहकर मुनीम जी आगे बढ गये। वह खड़ा सोचता रहा कि अब ऊपर जाने से क्या फायदा, वह सीधा बनिए के यहा पहुँचा और पाच रुपये गिन दिए।

बनिया बड़ा खुश हो गया। बोला—

"बड़े शरीफ आदमी मालूम होते हो। कल सौदा ले गये और आज रुपये अदा कर दिए।"

उसने कहा—

"घर मे रखे थे, ले आया।"

बनिए ने साश्चर्य कहा—

"कपड़े भी नये, कल तो नगे घूम रहे थे। क्या आज कहीं काम मिल गया ?"

"नहीं, काम तो नहीं मिला, लेकिन कपड़े भी घर मे ही रखे थे।"

"हा भैया, बड़े घरो की खुरचन भी बहुत होती है। दस-बीस रुपये का सौदा उधार चाहिए तो मेरे यहां से ले जाओ।"

"ले तो जाऊँ, पर रुपये कहा से दूँगा ?"

"ऐसी क्या बात है, जवान आदमी हो, एक न एक दिन कमाओगे ही, मेरा कर्ज चुका देना।"

"न भैया, मै कर्ज नही लेता। कहीं से उधार मिलने की भी उम्मीद नही और किस्मत भी ऐसी पाई है कि सेठ हर्जीमल के यहां कर्जा लेने के लिए गया तो उसका बच्चा बीमार है, मुलाकात ही नहीं हो सकी। सोचा था, एक दिन उनके दरवाजे मे तीस हजार के गहने देकर आया था, आज शायद उधार दस-बीस रुपये मिल जायें, गाय के लियें खली और बिनौले तो ले ही जाऊँगा।"

"अरे भाई, तो वह यहा से लेकर जाओ।"

इतना कहकर उसने जबरदस्ती खली और बिनौले एक बोरी में डालकर लदवा दिए और खाते मे हिसाब लिख लिया।

'कुछ घी-शक्कर चाहिए तो वह भी ले जाओ।"

रामअवतार इन्कार करता ही रहा, फिर भी बनिये ने सब कुछ उठवा दिया।

रामनारायण की परीक्षा सर पर आ गयी है। यूनिवर्सिटी की फीस भरनी है। यह नया खर्च तो पुराना ही था, परन्तु अभी तक जल्दी नहीं थी। अब तो हफ्ते के अन्दर ही अन्दर दाखिला भेजना ही होगा। उसी शाम को देहली से एक मेहमान आ गया, चरनदास। वह सुहागी की बहन का बेटा था, पाकिस्तान बनने से पहले यह *मरदान मे लकडी के बहुत बड़े व्यापारी थे पर अब तो घर मे जलाने को भी लकडी नही थी।

रामअवतार के साथ उसका भाई के अलावा एक और नाता था, और वह दोस्ती का था। यह दोनो बचपन मे बड़े हँसोड थे। यह लड़का अधिकतर पेशावर में ही रहता था। धनीराम के घर मे रहकर वही पढता था। इस गरीबी मे भी उसने अपनी मुस्कुराहटो को सम्भाल कर रख छोड़ा था। लेकिन रामअवतार की हँसी तो घर के बटवारे और आगन मे उठी हुई दीवार की नींव में खप गई थी और जो थोड़ी-सी बाकी थी, उसे गरीबी की दीमक चाट रही थी। लेकिन चरनदास के चेहरे की सुर्खी मिट जाने पर भी हँसी उसी तरह स्थिर थी। वह हर दुःख में भी कोई न कोई हँसी की राह पैदा कर लेता था। घर मे आते ही उसने एक खुशी की लहर दौड़ा दी। आते ही उसने अपनी मौसी को उठाकर एक चक्कर दिया और कहने लगा—

"अरे मौसी! तू तो बिलकुल नानी बन गई है। क्या हुआ तुझे? देख यह बुढ़ापा अच्छा नहीं। अभी तो मै अमेरिका भी नही गया, शादी

---

*एक शहर का नाम

भी नहीं की और तू बूढ़ी हो गई। तब मेरा अमेरिका जाना कैसे होगा ? वहा से मेम लाकर किसे दिखाऊँगा ?"

पेड़ाखान के हुक्के को एक तरह सरका कर वह बोला--

"यह क्या पुराना हुक्का पीते हैं आप ? यह लीजिये।"

और पाइप भरकर उसने सामने रख दिया। नन्हे को उठाकर उसने दो-तीन बार ऐसा उछाला कि जैसे आसमान ही छू लेगा। बच्चे को यह उछल-कूद पसन्द आई और वह उसका यार बन गया।

"अरे, तेरा बाप कहा है ? भाभी ! कहा गयी तेरी वह प्रतिमा जिसकी तू पुजारिन है।"

वह हिन्दुस्थानी पतियो को प्रतिमा और पत्नियों को पुजारिन कहा करता था।

इतने मे रामअवतार लदा-फदा घर मे पहुँचा। उसे देखकर उसके होठो मे जरा देर के लिए मुस्कुराहट आई और चरनदास भागकर उससे लिपट गया। चरनदास बोला—

"ओये, तू तो बिलकुल हिन्दुस्थानी बाप बन गया। एक बच्चे के बाद तेरी यह हालत ? बोरिया उठाता है ? देख मुझे कहता था न ? ब्याह न कर, वरना कमर दोहरी हो जायगी।"

रामअवतार ने कहा—

"चल नकली साहब। घर का बोझ ढोने से कमर दोहरी नही होती, विदेशी माल से दोहरी होती है।"

"अबे हट, तुझे विदेशी माल की क्या पहिचान ? बन्दर क्या जाने अदरक का स्वाद ?"

"वह तो तू है, जिसने बिलायती-देशी कोई भी अदरक नही चखी। बस उम्मीद मे ही जी रहा है।"

कोशी ने आकर बोरी उठा ली और प्यार की नजरो से पति की तरफ देखा। उसने एक शाति की सास ली। वह समझ रही थी कि उसे कहीं काम मिल गया और आज ही पैसे भी मिल गये हैं। यह सोच कर वह

मन ही मन मे खुश हो गई । कौशी को देख कर चरनदास ने कहा—

"अरे तेरी अदरक क्यो सूख गई अवतार ?"

कौशल्या ने दादा की वजह से घूँघट निकाल रखा था, कुछ बोली नहीं। वह अन्दर चली गई । यह दोनों झूलेपर जा बैठे । बहू ने सास के सामने आ कर बोरी रख दी और बोली—

"इस सामान को आप सम्भाल ले, मै ज़रा चरनदास के लिए चाय बना दूँ ।"

सास भी खुश हो गई कि मेरा बेटा काम पर लग गया है; और सबमें अधिक खुशी उसे इस बात की हुई कि कल ही उसने बिनौलों के लिए कहा था; और आज वह सब कुछ ले आया । जब वह रसोई घर मे शक्कर और घी रखने गई, तो बहू से बोली—

"यह तो बिलकुल अपने बाप पर गया है बहू, बात मुँह से निकलने की देरी होती थी, तेरे ससुर सौदा ला कर ढेर कर देते थे ।"

यह सुन कर बहू की आँखो में खुशी के मारे आसू आ गये । वह उन्हे छुपाने के लिये लकडियों को फूँकने लगी । सास ने कहा—

"अरे ! काहे को फूकती है, अच्छी खासी जल रही है आग ।"

बाहर झूले पर बैठ कर रामअवतार ने चरनदास से सारी बाते कह डालीं । अपनी बदकिस्मती का सारा रोना उसने रो दिया । हर्जीमल की बात सुन कर चरनदास तड़प गया और बोला—

"बनिये ने तुझे उल्लू बना दिया और तू एसा बुद्धू है कि अभी तक उसके गुन गा रहा है ।"

रात को जब सब खाना खाने बैठे तो दादा ने चरनदास से पूछा—

"कहो, पेशावर की क्या खबर है ।"

चरनदास बोला—

बिलकुल उसी तरह है । कहीं आग नहीं लगी । सब मुहल्ले सुरक्षित हैं, लोग उसी तरह घूमते फिरते हैं, केवल [1]आसामाई वाले मंदिर में

[1]पेशावर का एक मंदिर

आरती नही होती, इसलिए कि धर्मशाला पर पुलिस का पहरा है, और आपके बागो के आलूचे बंदर नही खाते, आदमी ही खाते हैं। बडे बंगले की नहर के पानी से अब भी चावल और शलगमो की खेती होती है। सब उसी तरह बस रहा है। चिन्ता की कोई बात नही। हा, बाछा खा और डाक्टर खा साहब को आजादी के बाद भी बाहर की हवा माफक नही आई, इसीलिए बेचारे जेल मे हैं।"

दादा ने कहा—

"अरे नामर्द, बुजुर्गों का भी मजाक उड़ाता है, तुझे शर्म नहीं आती?"

"जेल मे रखने और रहने वालों को शर्म नही आती, तो मुझे यहा कोसो दूर बैठे क्यों शर्म आने लगी?"

"अच्छा छोड़ो इन बातो को" दादा नें दुखी हो कर कहा—

"यह बता हिन्दुस्थान की गवर्नमेट ने हमारे भेजने का भी कोई इन्त-जाम किया है या नही?"

"सब तैयार है।" चरनदास बोला, "वहा के लोगो ने भी हमारे लिए स्वर्ग का प्रबन्ध कर रखा है, सिर्फ वहा पहुॅचने की शर्ते है?"

"मै यह बात नही मानता" बूढे दादा ने कहा—"तुम्हारा ख्याल है कि मेरे खेत का रखवाला पीरखा मुझे मार देगा?"

" क्यों नहीं मारेगा? वह पहले खेत का रखवाला था, अब बाग का मालिक है। अपनी मिलकियत खतम होते देखकर क्या रक्षा करेगा आपकी?"

"लेकिन मेरे बाग तो सुना है, अखतरहुसैन नाम के किसी आदमी को पाकिस्तान गर्वमेन्ट ने अलाट किये हैं। अगर पीरखॉ को मिल जाते तो मुझे कोई दु.ख नहीं था। कमबख्त को आते हुये भी मै कहता रहा वसीयत लिखवा ले मुझसे कि तू मालिक है, परन्तु वह माना ही नहीं। कहता था, अपने मालिक की जायदाद को मै कैसे ले सकता हूँ, कितना अच्छा आदमी है वह। उसका बाप भी हमारे बाग का रखवाला था, एक-एक पेड़ को अपने बच्चों की तरह प्यार करता था।"

'तब तो अख्तर हुसैन ने उसे अलग कर दिया होगा।"

'क्यो ?"

"अकलमन्द लोग पुराने मालिक के वफादार नौकर को नही रखते, क्योंकि नया मालिक उसकी नजरो मे अन्यायी होता है और यू० पी० के लोग हम पठानों से अकलमन्द होते हैं।"

दादा को यह बात सुनकर बड़ा दुख हुआ, वह सोचने लगा कि मीरखॉ विचारा क्या करता होगा ? उससे खाना भी न खाया जा सका और दो-चार कौर खाकर उठ गया। रामअवतार ने कहा—

"अरे चरन, ऐसी बाते दादा से मत किया कर, उन्हे दुख होता है।"

"तो और क्या झूठ बोलूं ? सच्ची बात सुनने के लिये लोहे का कलेजा चाहिए लोहे का। मै तो पठान आदमी हू, खरी बात कहता हूं।"

"तू पठान कहा से है ? दिल तेरा नास्तिक है, दिमाग अमेरिकन और जन्म······।"

चरनदास ने बात काटी—

"हिन्दुस्तानी। जो कुछ भी है, लेकिन जबान .. ।"

"कड़वी है।" मौसी बोल पड़ी।

"पर मुह तो मीठा है मौसी।"

इतने में रामनारायण आ गया। रामनारायण को देखकर चरन बोला—

"आ मेरे यार······। अरे! सुना है तेरे लिए भी मौसी ने कोई नई बँदरिया ढूढी है ?"

रामअवतार ने कहा—"मौसी ने क्यों ? इसने खुद ढूंढी है।"

"हैं" चरनदास खड़ा हो गया।

"क्या सिविल मैरेज कर रहा है।"

रामअवतार ने कहा— "हां।"

"वाह पठे, खुश कर दिया तूने।" कहते हुएँ चरनदास ने उसे गले लगा लिया।

औरतें घर में कभी भी सोये, लेकिन उनके जागने का समय कभी नहीं टलता। ठीक समय पर सब काम करने को वे जाग जाती हैं। सुहागी मन्दिर से लौट आई थी, मझली बहू दही बिलो रही थी और बड़े बाबू नन्हे को कन्धे पर बैठाकर घर से निकल रहे थे, इतने मे रायसाहब और उनकी पत्नी ने मिठाई की थालों और फलों के टोकरों के साथ प्रवेश किया।

बड़े बाबू ने आज उनकी आवभगत की। कमरे में ले जाकर बिठाया और बोले—

"आज तो चींटी के घर में नारायण आ गये।"

"नहीं जी, ऐसी बात न किया कीजिये। हम तो बेटी वाले हैं। आप हमारे राजा हैं। बात यू है कि लड़की की परीक्षा सर पर आ गई है। मै चाहता हूँ, इस परीक्षा के खत्म होते ही इस कर्तव्य से छुटकारा पा जाऊं।"

चरनदास भी आंखे मलते हुए उठ बैठा। रामअवतारने परिचय कराते हुये कहा—

"यह हमारे मौसेरे भाई हैं, और ये रायसाहब हैं।"

चरनदास की नजरें टोकरियों पर पड़ी। वह बोला —

"और यह कौन है?"

रायसाहब कुछ बोले नहीं, पेड़ाखान की तरफ देखने लगे। चरनदास ने कहा—

"आप बताने की तकलीफ न करें, मैं खुद इनसे निपट लूंगा।"

यह कह कर उसने कपड़ा सरका दिया। बड़े बडे मोतीचूर के लड्डू बर्फी, नालूशाही और रंग-बिरंगे फलो को देख कर बोला—

"अच्छा। तो आप हैं। बहुत खुशी हुई आप से मिल कर। आज नाश्ते से पहिले ही मुलाकात हो गई आप से। आइये आप से ही निपट लेते हैं।"

और वह लड्डू तथा फल लेकर जाने लगा।

सुहागी ने कहा--

"बेटा! तेरी आदत बिलकुल नही बदली। क्या सचमुच भूखा है?"

"भूखा कैसे मौसी?" मै कोई माँगने थोडा ही गया था। अब ये ले आये हैं तो सोचा कि जरा इनको खुश कर दूँ। सबधियो का माल सबंधियो के सामने ही खाना चाहिये, उन्हे खुशी होती है।"

पेड़ाखान ने कहा—

"अब यहाँ से भाग जा ओए, बात करने दे।"

चरनदास ने इधर-उधर देखा और बोला —

"अरे नन्हा कहा गया? यह रहा।"

उसने उसे भी गोद में उठाया और रामनारायण के बिस्तर पर जा बैठा। दोनो खाने लगे।

रामनारायण लड्डू और फल देखकर उठ बैठा और बोला—

"अच्छा, चरन भैया, यह माल लेकर आये हैं दिल्ली से। हमे रात को बताया ही नहीं।

चरनदास बोला—

"हलवाई को आर्डर दे आया था। कमबख्त ने अब भेजा है।"

तीनों खाने लगे। उधर सुहागी शादी की बात सुनकर चिन्ता में डूब गई। शादी कैसे होगी, घर मे तो कुछ भी नहीं है। वह बोली--

"इतनी......जल्दी?"

रायसाहब ने कहा—

`लड़की पराया धन है। मैं अब कब तक इसे अपनी गिरह में बाध कर रखूंगा। और फिर मेरी तबियत भी ठीक नहीं रहती। इकलौती बेटी है,

खुली आंखो इसका घर बसते देख लूं तो मरना आसान हो जायगा। मैंने मार्च के महीने का मुहूरत भी निकलवा लिया है।

पेड़ाखान ने कहा—

"लेकिन लड़के का अभी इम्तहान जो नहीं हुआ।"

रायसाहब बोले—

"हो जायेगा जी, हमारा रामनारायण तो फेल होनेवाला नहीं, यह मै खूब जानता हूँ।"

"और अगर फेल हो गया?"

"तो भी क्या है, गौना दस दिन ठहर कर हो जायेगा। अच्छा, तो अब बात पक्की है ना?"

सुहागी ने घूँघट की ओट से रायसाहब की पत्नी से कहा—

"सोच कर बतायेंगे।"

"इसमें सोचने की क्या बात है समधिन।" रायसाहब की पत्नी बोली, "क्या तुम अपने बेटे का ब्याह अपने साथ रचाओगी?"

समधियाने का मजाक ऐसा ही होता है।

पेडाखान ने कहा—

"लो अब तो यह समधिन सिठनिया देने लगी हैं। रायसाहब मेरा जी भी चाहता है कि कुछ कहूँ आप को।"

"कहिए ना।" रायसाहब बोले।

"मेरा बेटा होता तो कहता।" पेड़ाखान ने एक आह भरी "पर धनी-राम की किस्मत में यह खुशी देखनी ही न लिखी थी। इतने बड़े घर की बेटी उसके घर में आ रही है। अगर आज वह होता तो खुशी के मारे...... ..।"

इसके आगे वह कुछ न कह सका, उसकी आखों में आँसू आ गये। सुहागी भी घूंघट की आड़ मे रो पड़ी। रायसाहब और उनकी पत्नी भी चुप-से हो गये। क्षण भर कमरे मे बिलकुल सन्नाटा रहा। चरनदास रामअवतार के साथ फिर कमरे में आ गया और बोला—

"क्या बात है, इतनी खामोशी क्यों है ? अगर कोई बात नहीं है मौसी तो समधिन का गाना ही सुनवा दो।" भाभी की तरफ देखकर बोला—

"हमारी इस भाभी की मा ने तो नाच करके भी दिखाया था।"

सब हँसने लगे। भाभी शर्मा कर उसे घूरने लगी। रायसाहब बोले—

"यह लड़का तो बहुत ही अच्छा है। क्या करता है यह ?"

किसी के बोलने के पहले चरनदास ही बोल उठा, "अमेरिका जा रहा हूँ।"

"अमेरिका ?..... ...क्यो ?" रायसाहब ने पूछा।

"हिन्दुस्तान पसन्द नहीं। यहा लोग आपस मे लड़ते हैं और धर्म के नाम पर आदमियों को मारते हैं। आप को कोई आपत्ति है ?"

"नही, मुझे आपत्ति क्यों होगी। मै तो खुद अंग्रजों को बहुत पसन्द करता हूँ।,,

"बहुत अच्छा।"

चरन ने अपना हाथ मिलाने के लिए आगे बढ़ा दिया और बोला--

"तो पासपोर्ट बनवाइए। मैं भी किसी ऐसे आदमी की तलाश मे हूँ, जो मुझे अपना सेक्रेटरी बनाकर ले जाये।"

रायसाहब हँस कर बोले—

"तो बात अभी तक जाने के इरादे तक पहुँची है ?"

"नहीं जी, पासपोर्ट भी बनवा लिया है। मौसी ने रुपये देने का वादा किया था। यह पेशावर की बात है, अब अगर इसने इरादा बदल दिया हो तो हम कोई और घर ढूंढ लेगे, लेकिन प्रोग्राम पक्का है।

" कब तक ?" रायसाहब ने पूछा।

"बस थोड़े दिनों में।"

शादीपर आप यहा नहीं होंगे ?"

"रामनारायण की शादी ? वह तो देखकर ही जाऊगा, आप घबराइए नहीं। मौसी भी यही कह रही थी कि नारायण की सगाई बड़े घर मे हुई

है. वहा से जो दहेज आयेगा, उसका आधा हिस्सा जो ननिहाल वाले ले जाते हैं, वही हमे मिलेगा और हम अमेरिका का टिकट कटवा लेगे।"

मौसी ने पास आकर उसका हाथ झटक दिया और धीरे से बोली—

"शर्म कर, क्या कहता है तू ?"

"अच्छा, अच्छा, यह बात इनको कहने की नही थी।" और फिर रायसाहब से बोला—

"हा, यह तो बताइये कि शादी कब तक कर रहे हैं। मैं अपना अमेरिका जाना ज्यादा देर तक पोस्टपोन नही कर सकता।"

रायसाहब बोले—

"मैं तो इसीलिए आया हूँ; पर यह कुछ टालमटोल कर रहे हैं।"

"आप इनकी बात मत सुनिए। ठहरिये मै अभी लड़के से पूछ कर बताता हूँ। रामनारायण ....ओ रामनारायण!"

उसने पुकारा। बाहर से कोई जवाब नहीं आया तो वह खुद बाहर चला गया और थोड़ी देर में आ कर बोला—

"लीजिए..वह.."

सुहागी ने उसके मुँह पर हाथ रख दिया। पेडाखान ने कहा—

"कहने दे उसे बेटा, बच्चों के मुँह कहीं पकड़ने से बन्द होते हैं?"

रायसाहब बोले—

"भाई हमें इसकी आदत पसन्द आई, चाहे झूठ ही बोलता हो, लेकिन बात से हँसा देता है।"

झूठ की बात सुन कर चरनदास बोला—

"अच्छा तो अब तक हमे झूठा ही समझ रहे थे आप। अब तो आप जानिये और ये। मैं नहीं बोलूँगा।"

यह कह कर वह बाहर जाने लगा, मगर फिर लौट कर बोला—

"हा मौसी! रामनारायण ने कहा है, मेरी शादी जल्दी कर दो नही तो मैं भाग जाऊँगा।"

पेड़ाखान ने माथे पर बल डाल कर चरनदास की तरफ देखा। सुहागी ने घूँघट की आड़ से ससुर के दिल की बात पहचान ली। रामअवतार से बोली—

"चरनदास की बात पर ध्यान मत दो, वह आदत से मजबूर है।"

रायसाहब बोले—

"बच्चा है न!"

पेड़ाखान ने कहा—

"हां, यह तो है ही।"

रायसाहब उठते हुए बोले—

"अच्छा तो अब हम चलते हैं। आप तैयारी कीजिए।"

समधिन ने कहा—

"तैयारी कैसी? बस, हमे खबर भेज दीजिएगा जिससे हम अपने रिस्तेदारो को चिट्ठिया लिख दें।" सुहागी की समझ मे नही आता था कि क्या कहे। रायसाहब चले गए। पेड़ाखान भी उठ कर सोचता हुआ कहीं चला गया। रामअवतार बिचारा सोच मे खो गया, क्या करे?

अभी यूनीवर्सिटी की फीस का भूत भी नहीं उतरा था कि यह शादी का भूत आ सवार हुआ। उसका उतार तो उसकी समझ से बाहर था। मँझली बहू को एक खुशी जरूर हुई कि घर मे नारायण की बहू आयेगी और फिर वह भी बड़े घर की बेटी, रामनारायण जिसको चाहता है। मगर इसकी खुशी मे कोई भी शामिल नही हो सकता था। सारे घर की चिन्ता थी, ब्याह होगा तो कैसे? कुछ न हो तो चार जोड़े कपड़े के तो होने चाहिये ही। नाते रिश्तेदारों की दावत होगी ही और अगर ऐसा न कर सके तो सम्बन्धी की इज्जत क्या रहेगी? आखिर वह रायसाहब हैं, उनके भी जाति वाले हैं, वह क्या कहेंगे "कैसे लोगों में लड़की दी है।"

मां हेर-फेर करके सोचती तो नजर के सामने वही रामस्वरूप आ खड़ा होता। आखिर वह बेटा है, मैंने उसे कोख से जन्म दिया है, उसके सामने जाकर झोली फैलाकर खड़ी हो जाऊंगी तो क्या वह अपने नन्हें

से भाई के लिए यह भी न कर सकेगा ? जरूर करेगा, आखिर खून तो एक ही है। परन्तु उसके साथ ही कलावती भी आ खडी होती, तनी हुई भौवो के साथ। और मा की सारी कल्पनाएं मिट्टी मे मिल जातीं, आकाश तक उठाये हुये महल ढेर बन जाते और वह उस धूल मे अपनी आशा को ऊंचा चढाने के लिए कोई सोने की ईंट ढूँढ़ती नजर आती।

पेड़ाखान सोचता था, पेशावर मे किसी दोस्त को खत लिख कर पैसा मँगवाया जा सकता है। मैंने वहा दोस्तों की काफी मदद की थी और उनके बच्चों की शादी पर दिल खोल कर नेग दिये थे। क्या वह आज मदद नहीं करेंगे ? लेकिन पेशावर तो पाकिस्तान मे है। वागा की सीमा के उस पार जहा जाने के लिये परमिट की आवश्यकता होती है, पासपोर्ट बनवाना पड़ता है और फिर वहा के रुपयो की कीमत भी हमारे देश मे क्या है ? एक मिट्टी के ढेले के बराबर भी नहीं। अच्छा, भगवान ही मालिक है।

रामअवतार सोचता था, हर्जीमल का बच्चा अगर अच्छा होता तो वह जरूर मदद करते, परन्तु अब तो शायद मुलाकात भी न हो सके। रायसाहब क्या आये, सारे घर को गहरी सोच दे गये। रामनारायण ने कालेज जाते हुये रामअवतार से कहा—

"भैया, मुझे यूनिवर्सिटी की फीस भेजनी है, पचास रुपये चाहिये।"

रामअवतार बोला-

"परसों मा ने कहा था कि अभी हफ्ता बाकी है।"

"हा, पर अब तो चार दिन ही रह गये हैं।"

चरनदास ने कहा-

"तो मिल जायेंगे, ऐसी क्या बात है। पचास रुपये भी कोई रकम होती है। अब जाओ कालेज, सुबह-सुबह हमने घर में शादी का मूड पैदा किया था, तुम उसे चिन्ता के मूड मे बदलने लगे हो।"

रामअवतार ने कहा-

"हा, मिल जायेंगे।"

"कब ?" रामनारायण ने फिर सवाल किया।

"कल"

रामअवतार के मुह से अपने आप निकल गया।

"अच्छा भैया।"

वह खुश होकर चला गया। कौशल्या ने कहा—

"कल ही आप को काम मिला है, कल ही आप पेशगी रुपये ले आये और घर बिनौलो से भर दिया, उसकी फीस क्यो न चुका दो? बिचारे के एक साल का सवाल था।"

रामअवतार हतप्रभ-सा पत्नी की तरफ देखता रहा, कुछ बोला नहीं।

चरनदास ने कहा—

"अरे भाभी, तुम्हारी इस प्रतिमा ने बनिये के यहा नौकरी की है, इसलिये वहा से सौदा ही मिल सकता है, नगदी नहीं।"

भाभी बोली—

"ऐसे बनिये के यहाँ तुम नौकरी करोगे, हम नहीं।"

और इतना कह कर अन्दर चली गई। रामअवतार ने चरनदास को अकेले में कहा—

"ऐसी बातें तू भाभी से मत किया कर, वह किसी दिन बुरा मान जायेगी।"

"तू बुद्धू है, तेरी बात बुरा मान सकती है, मेरी बात का नहीं। इसलिए कि तुझे वह बुद्धू समझती है।"

"समझने से क्या होता है भैया। असल मैं होना चाहिये तेरी तरह एकदम बुद्धू जो पत्नी और माँ का जेवर हर्जीमल को दे आया और समझ रहा है कि उसने एहसान किया है। आज अगर वह होता तो परेशानी काहे को होती ?"

रामअवतार ने एक ठण्डी साँस भरी और कहा—

"हाँ, भैया। अगर वह गहने होते तो तकलीफ काहे को होती। लेकिन अब तो घर की इज्जत टूटती दिखाई देती है, रायसाहब को कल जवाब देना है, उन्हें शादी की तारीख पक्की करनी है।"

चरनदास बोला—

"तो कर लो न।"

"कैसे कर लूँ? तुम तो हमेशा ऐसी बातें करते हो। अगर कोई तुम्हारे मिजाज से परिचित न हो, तो तुम्हारा मुँह नोच डाले।"

"अच्छा! इस बात का तो हमें पता नहीं था, लेकिन सुनो, तुम शादी की तारीख पक्की करो और रुपया हर्जीमल के यहा से मागो। जरा जोर देने से वह तुम्हें उधार तो दे ही देगा।"

"मागने तो गया था, लेकिन उसका बच्चा बहुत बीमार है। उससे तो मुलाकात ही नहीं हो सकी।"

"बच्चा बीमार है? झूठ बकता होगा।"

"अरे नहीं, डाक्टर मेरे सामने निकला था।"

"अच्छा, अगर उसका बच्चा बीमार है तो फौरन रुपये दे देगा।"

"क्यों देगा?" रामअवतार बोला—

"अरे यह अमीर लोग बड़े वहमी होते हैं। उन्हें धन की चिन्ता लगी रहती है, इसीलिए पूजा पाठ में भी लगे रहते हैं कि कहीं लक्ष्मी न रूठ जाये। अब हर्जीमल को यह ध्यान होगा कि रामअवतार अगर रूठ गया और उसने बददुआ दे दी तो कहीं भगवान न रूठ जाये, धन बचाते-बचाते कहीं औलाद से ही हाथ न धोने पड़े।"

"नहीं, नहीं!" रामअवतार बोला। "भगवान न करे ऐसा हो। अब तो मैं उनके यहां बिलकुल मागने ही न जाऊँगा।"

"तो मत जाओ।" चरनदास बोला—"हम तो तम्बाकू पीते हैं। तुमने हमारा दिमाग गन्दा कर दिया। इन हिन्दुस्तानियों से बात करना ही गलती है। सीधी बात समझते ही नहीं।"

इतना कहकर वह पाइप लेकर बैठ गया।

रात को दादा के पास सब बैठ कर सोचने लगे कि अब क्या करना चाहिए, लेकिन किसी की समझ मे कुछ न आया । दादा ने एक हल बताया कि मकान बेच डालना चाहिए ।

सुहागी ने कहा —

"उन्होने अपने हाथ से खरीदा था । यह तो उनकी निशानी है ! मै किसी तरह न बेचनें दूँगी ।"

रामअवतार क्या कहता । इसके जवाब मे दादा भी कुछ नही बोल सका । बात इसी तरह अधूरी रह गई । सुबह रायसाहब को क्या जवाब देगे ? यह अधूरी बात छोड़ने वालो ने बिलकुल नही सोचा । गरीबी मे हर आदमी अपनी जिम्मेदारी दूसरो के कन्धों पर डाल देने का आदी हो जाता है ।

पेडाखान ने सोचा, सुहागी जो ठीक समझेगी, कहला देगी और सुहागी का ख्याल था, बड़े बाबू अपने आप जवाब भेजते रहेगे । राम-अवतार तो घर में यूँ भी छोटा था । मगर चरनदास यह सोच कर रात भर न सो सका ।

सुबह उठ कर चरनदास ने नये कपडे बदले। हाथ की अगूठी उतार कर एक सुनार के यहाँ से पालिश करवाई । हलवाई के यहाँ से मिठाई ली और रायसाहब के घर जाकर कहा—

"लीजिये मार्च का ब्याह पक्का है ।"

रायसाहब खुश हो गये और बोले—

"यह क्या लाये हैं ?"

"यह लड़की के लिये उन्होने भेजा है, मै नही लाया ।"

रायसाहब की पत्नी ने कहा—

"यह अँगूठी तो मरदानी है ।"

चरनदास कुछ घबराया, लेकिन कहकहा लगाकर बोला—

"हमारे यहा मरदाने-जनाने जेवरों मे अन्तर कम ही होता है । आप जानते हैं हमारे देश को, जहा से हम निकाले गये हैं । तो लाइये यह

अँगूठी वापस कर दीजिए। मै मौसी को कह दूँगा, वह जनानी अँगूठी भिजवा देगी।"

रायसाहब उठकर अँगूठी देने ही वाले थे कि उनकी पत्नी ने उनका हाथ पकड़ लिया और बोली—

"अरे .....अरे, कही कोई शकुन की चीज वापिस करता है, क्या हो गया है आप को?"

चरनदास का फैला हुआ हाथ वहीं रुक गया। बोला—

"आप तो पुराने जमाने की बातें करती हैं। ऐसी भी क्या बात है, आप शकुन किसे कहते हैं और क्या होता है? जरा अँगूठी वापस कीजिए फिर देख लेते हैं हम।"

रायसाहब की पत्नी ने कहा—

"ना जी ना, मैं इस आजमाने के चक्कर में नहीं पड़ती। जो संबन्धियों ने भेज दिया है, वही मेरे लिए कुबेर का खजाना है।"

इतना कहकर वह अन्दर चली गई। चरनदास का हाथ अपनी जगह पर खाली लौट आया। वह अँगुली मे पड़े हुए अँगूठी के निशान को मलने लगा।

थोड़ी देर के बाद रायसाहब की पत्नी लाल दुपट्टा ओढ कर आ गई। एक लोटे मे लाल रंग भर कर लाई थी। आते ही चरनदास के कपड़े उन्होंने रंग डाले। नौकरों ने आकर बधाई देनी शुरू की।

रायसाहब के घर से निकलकर चरनदास जाने कहां चला गया और राय-साहब के नौकर नेग लेने लड़के वालों के घर आ घुसे। सुहागी के बदन में काटो तो लहू नही। बिना बात पक्की किये कैसे पक्की हो गई, उसकी समझ में कुछ नही आता था। हमारे घर से आदमी मिठाई और जेवर देकर आया है। यह सुनकर वह हैरान हो गई। रामअवतार नहा रहा था, स्नानघर से बाहर निकल कर आया तो उसे भी आश्चर्य हुआ कि आखिर यह सब कौन कर सकता है? चरनदास होगा, उसके दिल ने कहा। लेकिन जेवर देकर आया है, चरनदास को ऐसी क्या पड़ी थी?

सुहागी ने कहा—

"चलो, जो भगवान की इच्छा। रामस्वरूप होगा, अब अपने आप सब कुछ करेगा।" सुहागी इतना कहकर अन्दर चली गई और बहू से बोली—

"सुना तुमने, रामस्वरूप ने लगन की मुहूरत पक्की कर ली है। कुछ भी हो, आखिर है तो मेरा ही बेटा न, नारायण उसका छोटा भाई है, उसी ने तो उसे गोदी मे खिलाया है।"

मझली बहू बोली—

"अगर जेठ जी जाते, तो आप को मिल कर ही जाते।"

"लो– वाह! मिलने की क्या जरूरत थी उसे? जरा सोच कर देखो एक तरह से अब वही उस घर का बडा है। जो वह कर सकता है, दूसरा कौन कर सकता है? और हक भी उसी को पहुंचता है।"

मझली बहू बिना सोचे ही बात समझ गई, पर कुछ बोली नहीं। उठकर सामान सभालने लगी। रामअवतार की समझ मे यह बात किसी तरह नहीं आई कि रामस्वरूप रायसाहब के घर जाकर शादी की तारीख भी पक्की कर आया है। अगर ऐसा हो गया है तो बहुत अच्छा है। विश्वास न आने पर भी उसने विश्वास कर लिया।

हर्जीमल के मकान पर एक ज्योतिषी ने आकर कहा—कल्याण हो, सदा दुखी रहो ताकि भगवान को याद करते रहो।

मुनीम जी ने खाते पर से सिर उठा कर कहा—"पंडित जी, आज सेठ जी नहीं मिलेंगे।"

चरनदास ने कहा—

"क्यों नहीं मिलेंगे? हम सेठ जी से मिल कर ही जायेंगे। हम ज्योतिषी हैं। उनका बच्चा बीमार है, हमने सपना देखा है कि सेठ हर्जीमल का बच्चा बीमार है और तुम जाकर उससे मिलो और सेठ जी का कल्याण करो, नहीं तो बच्चा परलोक सिधार जायेगा।"

मुनीम जी यह सुनकर भौचक्के रह गये। उन्होने सोचा सेठ जी को खबर करनी चाहिये। वह उठ कर चलने ही वाले थे, कि चरनदास ने अँग्रेजी में कहा।

"I will see your Palm also. ( मै तुम्हारा हाथ भी देखूँगा ) तुम बड़े-बडे पत्रों पर रेखा खीचते हो। क्यो सत्य है न ?

"हा महराज ! मुनीम हूं।"

अंग्रेजी का वाक्य सुन कर मुनीम जी और भी प्रभावित हो गये, सोचने लगे कि यह पडित कोई महा ज्योतिषी है, जो अंग्रेजी भी जानता है। मुनीम जी भागे-भागे अन्दर गये। अन्दर बच्चा तड़प रहा था।

डाक्टर दो घटे पहिले कह गया था, कि अब उसके बचने की कोई उमीद नही है। बच्चे की मा तो सचमुच पागल ही हो रही थी, इकलौता बेटा दस वर्ष की मनौती के बाद मिला था और पाच वर्ष की उमर मे ही परलोक जाने की तैयारी कर रहा है। मा के भाग फूट गये, क्या करे कहा जाये। और सेठ जी उसकी चारपाई के पास ही बैठे आसू बहा रहे थे। इतना धन, इतनी जायदाद इन सबकी मालकीयत यह छोड़कर जा रहा है, सोने की जंजीरें भी इसे नहीं बाध सकती। इस समय अगर कोई मेरी सारी जायदाद लेकर भी मेरे बच्चे को लौटा दे तो यह सौदा भी घाटे का नही। बाप का दिल ऐसे समय मे ऐसी ही बातें सोचता है चाहे वह दौलतमंद हो चाहे गरीब हो। इतने मे मुनीम जी ने आकर कहा—

"सेठजी, चमत्कार।"

"कैसा चमत्कार ?"

यह पूछ कर सेठजी ने प्रश्न भरी दृष्टि से मुनीमजी को देखा। मुनीमजी ने कहा—

"एक पडितजी आये है, अंग्रेजी भी बोलते है और कहते हैं कि उन्होंनें सपना देखा है कि सेठ हर्जीमल का बेटा बीमार है।

वह कहते हैं, मेरे गुरु ने कल्याण करने को भेजा है।" सेठजी इतना

ही सुनकर उठ खड़े हुये, मां को भी एक उम्मीद की झलक नजर आने लगी। सेठजी ने कहा–

"उन्हे, आदर-सम्मान से अन्दर ले आओ।" मुनीम जी फिर भागे और पंडित जी को ले आये।

पंडित जी अन्दर तकिये के सहारे बैठ गये। उन्होने कमरे मे एक नजर डाली और फिर बीमार बच्चे पर वह नजर आकर अटक गई। वे बोले—

"राम . .. राम"

"पंडितजी, मेरे जीवन की सारी पूंजी यही है, इसकी रक्षा का उपाय बताइये।"

पंडितजी मुह में कुछ पढते जा रहे थे। उन्होंने बस्ता खोला, एक कापी पर कुछ लिखना शुरू किया और कुण्डली बना कर बैठ गये। उन्होने बच्चे को देखा, उसकी मा को देखा, फिर सेठजी को देखा और बोले—

"असम्भव, नामुमकिन, Impossible"

"क्या असम्भव? बच्चे के बचने की बात?" मुनीम जी ने पूछा।

पडितजी ने कहा "रोगियों को कष्ट होता है। पूर्व जन्म के कर्मों से ऐसा ज्ञानी लोग कहते हैं। लेकिन हमारे गुरुजी श्री १००८ स्वामी गवानन्द जी परिव्राजक ऐसा बताते हैं कि कलियुग में पूर्व जन्म के संस्कार का कोई प्रभाव नहीं, बल्कि इसी जन्म के गुण-अवगुण और उनका फल सुख रूप और दुख रूप में मिलता है।"

सेठ जी ने विह्वल होते हुये पूछा–

"यह हमारे किस कर्म का फल है पंडित जी?"

"कर्म नहीं, कुकर्म कहिए।"

पडित जी ने उसकी नम्रता को देखकर बड़ी-बड़ी आखे निकालकर कहा।

सेठ जी सहम गयें। पंडित तो उन्होंने बहुत देखे थे, लेकिन पठान पंडित नहीं देखा था, और वह भी ऐसी मुसीबत के समय। सेठ जी चुप हो गये। उनकी घरवाली ने पडित जी के चरन छू कर कहा—

"मेरी ममता पर दया कीजिए पडित जी।"

पंडित जी ने कहा—

"हम इतनी दूर से सपना देखकर आ रहे हैं, हमने गुरु जी की आज्ञा पाई है, बिना उपाय बताये हम जायेंगे नही और निश्चय ही तुम्हारा यह अति सुन्दर बालक अच्छा हो जायेगा।"

फिर मा-बाप को तसल्ली हुई। मुनीम जी बीच मे बोलते जा रहे थे—

"सेठ जी बड़े देवता हैं, धर्मात्मा हैं। इनपर दया कीजिये महाराज।"

पंडित जी एक दम बिगड़ कर बोले—

"बुड्ढे! क्यो झूठ बोलकर अपने पापो की गठरी भारी कर रहे हो। सेठ जी सूद का धन्धा करते हैं और उसमें भो बेईमानी से काम लेते हैं और तुम उनका साथ देते हो। क्यो सत्य है ना?"

"पर महाराज, वह तो धन्धा है।" सेठ जी बोले।

"तो यह भी उस धन्धे का फल है। क्यों सत्य है ना?"

पंडित जी ने चिढ़ कर कहा। सेठ जी चुप हो गये। पडित जी भी चुप हो गये। मा का दिल धड़क रहा था। पंडित जी बच्चे की तरफ देख रहे थे। वे बोले—

"राम-राम, बाप के कर्मो का फल कैसा भोग रहा है, बेचारा, क्यो सत्य है ना?"

"आप उपाय बताइये न महाराज। तरस खाइये मेरे हाल पर, मैं झोली फैलाती हूँ।" मा ने तड़प कर कहा।

पंडित जी ने फिर कुछ सोचा, जेब से एक पुड़िया निकाली और गगा जल मागा। नौकर गंगा जल लेकर भागा आया। पडित जी ने चमचे में दवा घोलकर सफेद-सा चूर्ण बच्चे के गले मे डाल दिया। बाप-मां ने आखों ही आंखों में एक-दूसरे को देखा। मुनीम जी बोले—

"देखा सेठ जी, बिना किसी हिचकिचाहट के दवा पी ली है बच्चे ने।"

पंडित जी ने कहा—

"यह दवा नहीं, गुरु जी की दी हुई अमृतजड़ी है। किन्तु इससे ठीक न होगा, इसके साथ एक मा के टूटे हुए दिल को जोड़ना पड़ेगा।"

"कौन सी मा?" सेठ जी की पत्नी ने पूछा।

पंडित जी ने रामअवतार का हुलिया बताते हुए कहा—

"वह कोई लम्बा-सा आदमी जिसके गाल पर एक तिल है। उसकी मा।"

"कौन, क्या नाम है उसका?"

"ज्योतिषी नाम नहीं बताता, राशि बताता है।" और कुंडली को देखकर बोले—

"उसकी राशी होगी—कर्क। नाम के पहले अक्षर है 'र' 'री' 'रा', उसका रुपया जो सम्पत्ति के रूप मे था, वह आप ने धोखे से छीन लिया है। उसकी मा का श्राप लगा है। उसको खोज कर यदि चार दिन के अन्दर ही अन्दर उसका धन उसको देकर उसकी मा का आशीर्वाद ले लो, तो यह बच्चा आप का है, नही तो भगवान का। जय राम जी की।"

यह कह कर पंडित जी उठ खड़े हुए। मुनीम जी ने कहा—

"दक्षिणा तो लेते जाइये।

"राम-राम, हम दक्षिणा नही लेते।"

यह कह कर पंडित जी बाहर निकलने लगे। सेठ जी ने कहा—

"ब्राह्मण घर से खाली हाथ लौट जाये, यह महा पाप है पंडित जी।"

"हम फिर आयेंगे, गुरु की आज्ञा पाकर आयेंगे। तुम्हारे घर का धन हम छू नहीं सकते। यह पाप के द्वारा कमाया गया है। उस आदमी को ढूँढो, यह पहला कार्य है।

मुनीम जी ने कहा—

"वह आदमी शरणार्थी होगा सेठ जी, तीस हजार के जेवर वाला। उसका पता खाते मे लिखा है। उस दिन इधर आया था, मैंने बाहर से टरका दिया था।"

सेठ जी घबरा कर बोले—

"यह सब तुम्हारे कारण हो रहा है, अभी उसके घर जाओ।"

पडित जी आड मे खडे यह सुन रहे थे। तीस हजार जेवर की बाते सुनकर फौरन खिसक गये, एक मिनट नहीं रुके।

सेठ जी की घरवाली ने सेठ जी से कहा—

"आप खुद क्यो नहीं रुपया लेकर जाते हैं जी?"

"हा, मै खुद जाऊँगा।" सेठ जी बोले।

"रामअवतार यहा रहता है?"

"जी हा।" पेड़ाखान ने कहा। "क्या बात है?"

"मुझे उससे मिलना है।"

सेठ हर्जीमल रामअवतार के दरवाजे पर खड़ा पूछ रहा था।

"वह तो घर पर है नहीं।" पेड़ाखान ने कहा।

"कहा गये हैं? कब आयेंगे? हम तो तबाह हो जायेंगे, मेरा क्या होगा?" एक ही सास मे सेठ हर्जीमल ने जाने कितनी बाते कह डाली। पेड़ाखान उसकी बाते सुनकर और परेशानी देखकर घबडा गया कि यह नई मुसीबत आई है। पेड़ाखान सेठ जी को अन्दर ले आया और बिठाकर पूछा—

"आप पानी-वानी पीजिये, वह अभी आता होगा। कहिये क्या है? क्या उसने कुछ किया है? वह आदमी तो ऐसा नहीं है।"

हर्जीमल ने कहा—

"वह बेचारा क्या करेगा, सज्जन आदमी है। बात यह है, कि उसने मुझसे एक ठेका लिया था, वह पूरा नही कर सका था ।"

पेड़ाखान ने समझा कि यह अब और रुपया माँगने आया है, इसलिए बीच मे ही बोल उठा —

"तो क्या और रुपया चहिए ? वैसे, सेठ जी, आज-कल तो अपने पास कुछ है नही, घर मे भाग भुन रही है। जो कुछ था, वह उसने आप को नजर कर दिया, और अब बेकार है। काम ढूँढ रहा है। अपनी परेशानियाँ मुझ से कहता तो नही, पर मुझे चेहरे से पता चल जाता है। आखिर मेरा ही खून है न ?"

सेठ जी ने कहा—

"लेकिन मै रुपये लेने नही आया।"

"तो ... ?"

"वह देखिए, मैंने कहा था न, हरजाने के लिए। गवर्नमेंट ने हरजाना माफ कर दिया है।"

पेड़ाखान खुश हो गया।

"अच्छा, तो आप को नुकसान नही हुआ। बड़ी खुशी की बात है। वह बेचारा इसी वजह से परेशान था कि सेठ जी को मेरी वजह से इतना ज्यादा नुकसान हो गया।"

पेड़ाखान ने अन्दर आवाज दी—

"कोई पानी तो लाओ, यह सेठ जी आये हैं।"

"नही जी, पनी की आवश्यकता नहीं, कृपा है आपकी।" अन्दर मा ने सुना कि सेठ जी आये हैं तो वह भी सोच मे पड गयी। माँ बोली—

"बहू, यह सेठ कौन हैं?"

बहू सास की मुँह की तरफ ताकने लगी। फिर बोली—

"क्या कहे ? पहले तो कभी कोई सेठ नहीं आया। वह होगा शायद, जिनके यहा उन्होंने नौकरी की है।"

"नौकरी की है, किसने ?"

"उन्होंने ।"

"अब ?"

"कल ही तो काम मिला है, जो सामान खरीदकर लाये हैं।"

सुहागी की आखो मे आसू आ गये।

"अच्छा, हमारी किस्मत ?"

"क्यो किस्मत की क्या बात है इसमे ?" बहू सास की बात न समझ कर बोली।

"किस्मत ही कहो, जिसने जिन्दगी भर कभी किसी की नौकरी नहीं की, अपने आगे दो-दो नौकर रखे थे, वह पराये घर की नौकरी करने लगा है।"

यह सुनकर बहू को भी दुख हुआ। वह घडे से पानी उडेल रही थी, आसुओ को छिपाने के लिये उसने घूघट खीच लिया। वह गिलास लेकर बाहर चली गई। इतने मे दरवाजा खुला और रामअवतार ने घर में प्रवेश किया। उसका कलेजा सेठ जी को देखकर धक् से रह गया। लो यह बिचारा और जुर्माना भर कर अब मुझसे वसूल करने आया है, यह सोच कर उसका मुँह लटक गया। जी तो चाहा कि फिर भाग जाये मगर सेठ हर्जीमल ने उसे देख लिया था और स्वागत के लिये उठ खड़ा हुआ था। पेड़ाखान कह रहा था—

"यह तुझसे मिलने आये हैं। कहां चला गया था तू।"

रामअवतार को कुछ सुनाई नहीं देता था। सिर्फ आखों में हर्जीमल का चेहरा था, और वह भी घूम रहा था। उसकी नजर उसके चेहरे पर न टिक सकी, हर्जीमल के पेट पर जाकर टिक गई और बोला—

"आइये-आइये सेठ जी, गवर्नमेंट ने जुर्माना बढ़ा दिया है क्या ?"

सेठ हर्जीमल ने कहा—

"हा भाई, हमारी गवर्नमेंट तो है ही ऐसी। क्या किया जाये, झगड़ा-टंटा चल रहा है, अभी फैसला नही हुआ है. हो जायेगा।"

"तो फिर आप...?"

"भई हमने सुना था कि तुम एक दिन घर आये थे ?"

"जी हां, आप के दर्शन करने गया था, लेकिन मुनीमजी ने कहा कि बच्चा बीमार है। हां ! अब क्या हाल है बच्चे का ?"

सेठजी ने जेब में हाथ डालकर बण्डल पकड़ा। हरे-हरे नोट उनकी उंगलियो से टकराये और असर तोंद तक पहुँचा। उनकी हिम्मत नही हुई कि नोटो को निकाले। इतने सारे नोट पलक झपकते ही इसके हाथ मे चले जायेंगे। एक मिनट के लिये बच्चे का गम भी भूल गये। वह तो था नहीं, इसलिये भावना की जगह बुद्धि ने ले ली। बुद्धि जिसके दौड़ने से चालाकी पैदा होती है, जिसमें सिवाय स्वार्थ के कोई गुण नही होता। स्वार्थ बढते-बढते नजर की सीमा सकुचित कर देता है। सेठ जी भी संकुचित हो गए। हाथो के नोट जेब मे ही रह गए और नोटो का प्यार बच्चे के प्यार पर जीत गया। एक क्षण के लिये वह सोचने लगे मान लो नोट दे दिये और बच्चा भी अच्छा न हुआ तो दुहरा घाटा होगा और मुफ्त मे रकम खोऊंगा। इतना सोच कर नोट जेब मे ही रहने दिये और बोले—

"बच्चे का हाल तो वैसा ही है।"

"तकलीफ क्या है ?" रामअवतार ने फिर पूछा।

"डाक्टरों को तो पता ही नही चलता, अभी तक पता नहीं लगा सके, बस तडपता है, न खाता है न पीता है, डाक्टर तो कह गया अब उम्मीद नहीं।"

"तो आपने इलाज बन्द कर दिया है ?"

"नहीं भैया, जब तक सांस तब तक आस, दवा कैसे छोड़ सकता हूं। ज्योतिषी कहता है, यह बच्चा बच जायेगा।"

"ज्योतिष विद्या तो सच्ची है।"

रामअवतार ने ढाढ़स बंधाने के लिए कहा।

सेठ जी बोले—"है तो सच्ची, पर बहुत मँहगी है। तीस - तीस हजार के उपाय बताते हैं। न कोई कर सके और न कोई बच सके।"

इतने मे चरनदास ने घर मे प्रवेश किया। सेठ जी को मौजूद पाकर चरनदास चौकड़ी भूल गया। "नीचे खाई ऊपर पहाड़" जाये तो कहा जाये। उसे देहरादून में अमेरिका नजर आ गया। वह बाहर निकल जाना चाहता था, लेकिन पॉव जवाब दे रहे थे, और रामअवतार उसका परिचय भी करा रहा था "यह दिल्ली से आया है, अमेरिका जा रहा है।" मतलब यह कि हम भी मामूली आदमी नही है। चरनदास की घबड़ाहट तारीफ के साथ ही साथ बढती जा रही थी। खैरियत सिर्फ इतनी थी कि उसका मुँह दूसरी तरफ था और भेष बदल चुका था।"

चरनदास बिना जवाब दिये मुँह घुमाये अन्दर चला गया, अन्दर पहुँच कर मौसी के पास जाकर बोला—

"यह क्या आफत है मौसी? जो भी घर मे आ जाता है. रामअवतार मेरी पोल खोल देता है। तुम्ही कहो, मै कोई घर का पानदान हूँ, जिसके प्रदर्शन से लोग खुश होंगे? या उगलदान हूँ, जो हर आदमी के सामने थूकने के लिये रख दिया जाता है?"

मौसी ने कहा—'तो इसमे हुआ क्या बेटा?"

"मुझे अच्छा नही लगता है। हर अमीर गरीब के साथ रिस्ता जोड़ा जा रहा है।"

"अरे यह तो वही सेठ है चरन, जिसके यहॉ तुम्हारे अवतार ने नौकरी की है।"

"वाह मौसी! तुम भी भेडो मे ऊँट पहिचानने वाली हो।"

"क्यो?" कौशल्या ने आश्चर्य से पूछा।

"अरे भाभी, यह वह बनिया नही है बल्कि यह तो वह खून चूसने वाला है, जो तुम्हारे और मौसी के गहने खा गया और डकार तक नही ली।"

मौसी चौकी—"वह क्या लेने आया है?"

"लेने आया है या देने, यह वही जाने।"

बाहर सेठ कह रहा था—'तुम मेरे बच्चे को देखने भी नहीं आये।"

रामअवतार बेचारा यह सुनकर शर्म से गड़ गया। सचमुच यह उसकी भूल थी। जिसको सारे गहने दे दिये, इसलिए कि उसके नुकसान मे हिस्सेदारी हो जाये, उसका बोझ कम हो जाये और उसका बच्चा बीमार हो जाने पर क्या आदमी उसको देखने भी न जाये ? यह तो बड़ी बुरी बात है, उसने सर झुका कर कहा—

"क्या कहूँ, सेठ जी, इस घर के धन्धा मे ऐसा उलझा हुआ हूँ कि निकलना ही नहीं होता।"

सेठ जी ने इधर-उधर देखा और बोले—

"मकान तो अच्छा है, लेकिन मरम्मत की जरूरत मालूम होती है।"

रामअवतार अपने चारों तरफ दीवारो के उखड़े हुए पलस्तर को देखकर कुछ बोल न सका। क्या बोलता ? मकान से ज्यादा गृहस्थी बिगड रही थी। न ओढने को, न खाने को। मा के चेहरे की हड्डिया उभर आई हैं, पत्नी का रंग पीला पड़ गया है, बच्चे के बदन मे कोई कपड़ा नहीं, दादा तो अब सचमुच बूढा लगने लगा है। उससे इन दीवारों की हालत कई गुना अच्छी है। उसका दिल तो भुरभुरा हो रहा है, एक जरा-सा झटका लगने की देर है, बस यह जले हुए कोयले की भाति अपना रूप छोड़ कर राख की ढेरी बन जायेगा। उसने सेठ की बात का कोई जवाब नहीं दिया, केवल एक आह भर दी।

सेठ जी ने फिर जेब में हाथ डाला और नोटों को हाथ लगाकर ध्यान में आया कि, मैं तो यह रुपये देने आया हूँ, पर दूँ या न दूँ, इसका फैसला न कर सका। एक तरफ तीस हजार रुपये हैं और दूसरी तरफ उसका इकलौता बच्चा। बच्चे का ध्यान शायद उसको अब भी नहीं आता, परन्तु अन्दर से चरनदास ने नन्हे को बहला-फुसला कर बाहर भेज दिया था। उसने कहा था—

"जा, तेरे पापा जी तेरे लिये मिठाई लेकर आये हैं।"

वह बाहर आकर बाप की गोद में बैठ गया। उसको देखकर सेठ जी को एक झटका लगा कि उसका बच्चा भी इसी तरह उसकी गोद में आकर बैठता था और अब डाक्टर कहते हैं कि वह फिर कभी उसकी गोद मे नहीं बैठेगा। यह सोचकर उसने बच्चे को गोद मे उठा लिया और बोला—

"क्या नाम है तेरा ?"

"मुन्ना।"

और इतना कहकर वह उसकी गोद से उतर कर दादा के पास चला गया। दादा ने कहा—

"जा बेटा, सेठ जी के पास बैठ जाकर।"

मुन्ना बोला—

"न—हमको डल लगता है।"

"अरे यह तो अपने सेठ जी हैं। इनसे डरने की क्या बात है ?"

चरनदास पीछे आड़ मे बैठा यह सब देख रहा था, उसने नन्हे को तरफ इशारा किया कि जाओ सेठ जी की गोद मे. लेकिन बच्चे ने कुछ और ही समझ लिया। वह चरनचाचा-चरनचाचा कहकर अन्दर की तरफ भागा। सेठ भागते हुए बच्चे की तरफ देखने लगा और बोला—

"कैसा प्यारा बच्चा है।"

रामअवतार के दिल मे आया कि कह दूँ कि अगर आप मेरी नौकरी का इन्तजाम कर सकें, तो कृपा होगी, लेकिन जैसे उसका गला किसी ने पकड़ लिया। फिर यह ख्याल हुआ कि कुछ रुपये ही उधार माग लूँ, मगर हिम्मत नहीं हुई। घर आये आदमी से कैसे कहे कि हमे कर्ज चाहिए।

चरनदास ने अन्दर से बच्चे को फिर फुसला कर भेज दिया और वह आकर सेठ जी को यूँ देखने लगा जैसे कुछ कहना चाहता हो। सेठ जी ने कहा—

"आओ बेटा।"

और वह अब जेब से नोट निकालने लगा।

बच्चे ने कहा—

"हम नही आते, तुम हमाले बाबू का लोपईया खा गये।"

जैसा चरनदास ने समझाया था, वैसा ही उसने कह दिया। रामअवतार के बदन मे काटो तो खून नहीं।

उसने झिडक कर कहा—

"किसने सिखाया है तुझे, कहा है चरनदास. जरा बुला उसे बाहर।"

रामअवतार के माथे पर बल पड गये। चरनदास यह सुनकर कि अब बुलावा आयेगा, भागकर अन्दर रसोई में जा घुसा और बोला—

"भाभी तेरी प्रतिमा बस उल्लू है। मैं काम बनाता हूँ, यह बिगाडता है।"

भाभी कुछ न बोली, काम करती रही। बाहर सेठ ने पाच हजार के नोट निकाले और कहा—

"यह रुपया लेकर आया था। सुना है, आपकी हालत अच्छी नहीं, यह रखलो।"

सेठ जी ने नोट देने मे पहिले दिल मे सोच लिया था पाँच हजार देकर देखता हूँ, अगर बच्चे की हालत कुछ सुधरी तो बाकी भी देदूँगा, वरना सारी रकम खोने मे क्या फायदा? उस ज्योतिषी की गाठ से तो कुछ जाता नही था। इतना सोचकर उठ खडा हुआ और बोला—

"किसी दिन अपनी माता जी को लेकर हमारे यहा आओ न।"

"जरूर आयेंग।"

रामअवतार तो बिलकुल झुका जाता था। सेठ इतना भला आदमी है, यह उसे आज ही पता चला।

सेठ ने कहा—"तो अभी चलो न? बाहर गाडी खडी है, बच्चे को देखकर आ जाना।"

"हा चलिए।"

अन्दर जाकर उसने सुहागी को पाच हजार के नोट दिये और बोला—

"मा, सेठ हर्जीमल का बच्चा बीमार है तुम भी चलो, जरा उसको देख आये।"

मा ने कहा—"बेटा दादा को ले जाओ साथ।"

चरनदास हँस कर बोला—

"दादा से क्या होगा, जाना तो मौसी को ही पड़ेगा। वहा आशीर्वाद चाहिए।"

रामअवतार ने पेड़ाखान से कहा–

"मा सेठ जी के बच्चे को देखना चाहती है।"

पेडाखान ने कहा—

"क्यो नही, वहा तो जाना ही चाहिए।"

जब ये लोग सेठ जी के घर पहुंचे, तो बच्चे की हालत वैसी ही थी। सुहागी ने बच्चे के सिर पर हाथ फेरा। सेठ जी ने कहा—

"बहन जी, इसे आशीर्वाद दीजिए, आपके आशीर्वाद से यह बच जायेगा।"

सुहागी ने कहा—

"तुझे मेरी उमर लगे बेटा, तू अपने माँ-बाप की आंखों की ठण्डक है, जल्दी से अच्छा हो जा।"

सेठ ने कहा—"बहन जी, ऐसा आशीर्वाद किसी ने नहीं दिया। मै जीवन भर आपकी गुलामी करूँगा. अगर यह अच्छा हो गया, और आप का घाटा पूरा कर दूँगा।"

रामनारायण बी० एस-सी० मे पास होगया। शादी की तैयारियाँ होने लगी। रामअवतार ने कह दिया था कि सारा पाच हजार रुपया, इसी ब्याह मे लगा दिया जाये।

वह हर रोज सेठ के घर जाने लगा था, और बच्चा धीरे-धीरे स्वस्थ हो रहा था। उसे विश्वास था कि पचीस हजार रुपया अब सेठ आकर अपने आप दे देगा। घर मे सबसे बडी उलझन थी कि विवाह मे रामस्वरूप आयेगा या नही ? उसे बुलाना चाहिए या नही ? पेड़ाखान कहता था–

"मै तो उसको बुलाना पसन्द नही करता हूँ, आगे तुम जानो और तुम्हारी मा।"

मा कहती थी—"पहलौठी का बेटा है, शादी मे नही आयेगा तो लोग क्या कहेंगे ?"

रामनारायण तो बडे भाई की सूरत भी देखना नही चाहता था, उसने साफ कह दिया—

"ब्याह मेरा है मा ! जब दुख मे बडा भाई नही आ सकता है, तो खुशी मे क्यों आयेगा, और उसके घर मे अभी एक साल पहिले इतना बड़ा उत्सव हुआ था, उसने हमे नही बुलाया, तो हम क्यो बुलाये ?"

मा का दिल किसी तरह नही मानता था। एक दिन उसने रामअवतार से कहा—

"बेटा, अब शादी के केवल दस दिन ही रह गये हैं। अभी तक मै तुम लोगो की बातो पर सोचती रही कि क्या करूँ। लेकिन अब मुझसे रहा नही जाता। अगर बड़ा भाई और बड़ी बहू घर मे नही आयेगी, तो मै यह सब सहन न कर सकूँगी, सारे रिश्तेदार आयेंगे, उनको पता चलेगा तो वह क्या कहेंगे।"

रामअवतार ने कहा—

"जो तुम्हारी मर्जी हो करो मा। मुझे क्या पूछती हो ? लेकिन एक बात बताये देता हूँ, कि बड़े बाबू नहीं चाहते कि वह आये।"

"और अगर आ गया, तो क्या करेंगे ?" मा ने पूछा।

"बडे बाबू की आदत तो तुम जानती ही हो, हाथ पकड़ कर उठा भी सकते हैं और अगर तुम सामने आ गई तो कुछ न कहकर मन्दिर मे ही जा बैठेंगे। रामनारायण अलग गुस्से में है। अगर उसने कुछ कहा तो क्या होगा ? इन सारी बातों को सोच लो।"

मा ने कहा—

"रामनारायण छोटा है, जब बडों की बात मे वह बोलेगा तो कान ऐंठ कर बिठा दूँगी उसे। मुझे तो तुम्हारे दादा का ध्यान है और बस।"

बहू भी कमरे में सिर झुकाये बैठी थी। मा ने कहा—

"तुम क्या कहती हो ?"

बहू ने धीरे से कहा—

"बडे बाबू अगर खुद उन्हे लेने जाये तो अच्छा होगा।"

"पर वह जायेंगे नही।" रामअवतार बोला।

मा ने कहा—

"मैं जाती हूँ, उनसे कहती हू जाकर।"

इतना कहकर मा उठने लगी। रामअवतार ने मा का हाथ पकड़ कर कहा—

"लेकिन मा, वह तुम्हारे कहने से चले तो जायेंगे, पर मन मे उन्हे बडा दुःख होगा।"

सुहागी ने क्षण भर फिर सोचा और बैठ गयी।

उसी रात जब दादा रसोई घर मे खाना खाने बैठे, तो रामअवतार रिश्तेदारो को चिट्ठिया लिखने के लिए रामनारायण को लेकर उनके पास आ बैठा। देहली जालन्धर, अमृतसर, कलकत्ता, बम्बई तक रिश्तेदार फैले हुए थे। बटवारे के बाद जहा जिसके सीग समाये, चला गया। सब को चिट्ठियाँ लिख दी गई।

सुहागी भी एक तरफ घूंघट निकाले बैठी थी। उसने रामअवतार से कहा—

"सबको चिट्ठिया तो तुमने लिख दी, मेरे अपनो को कोई पत्र नही भेजा।"

चरनदास बोल पड़ा—

"वाह मौसी, तेरा सबसे बड़ा अपना तो तेरे घर मे दो महीने से पहिले ही आ बैठा है, अब और किसे बुलाना है ? देश मे बेकारी बहुत फैली हुई है, जितना खर्च कम करो उतना ही अच्छा है, और सब बड़े शरणार्थी मेरी तरह अमेरिका जाने वाले नहीं हैं।"

मा ने कहा–

"बेटा, मै तो रामस्वरूप की बात करती हूँ।"

रामस्वरूप का नाम सुनकर सब चुप हो गये।

दादा ने कहा––

"उसको भी एक चिट्ठी लिख दो।"

"देहरादून मे अगर किसी और को चिट्ठी लिखी है तो उसको भी एक पत्र भिजवा दो।"

दादा चुप हो गये। बोले––

"रामअवतार जाकर उसे दूसरों के साथ न्योता दे आयेगा।"

रामअवतार ने एक मिनट के लिए सोचा और बोला––

"मै तो जाऊंगा नही।"

दादा ने कहा––"तो फिर चरनदास को भेज देना।"

चरनदास ने कानो को हाथ लगाकर कहा––

"न बाबा न, बडे लोगो के यहा मै तो नही जा सकूंगा।"

दादा ने कहा–

"बड़ा कहा से हो गया वह ?"

चरनदास बोला––

"वह नही, पर मै तो बड़ा हूँ। यहा दो महीनो से बैठा हूं, मुझसे मिलने तक नहीं आया, तो मै क्यों जाऊं ?"

"तो फिर उसकी मा चली जायेगी।"

सुहागी ने कहा––

"बड़ों के होते हुए यह बच्चे क्यो जायेगे। बड़े बाबू को ही जाना चाहिए।"

बड़े बाबू यह सुनकर उठ खडे हुए। कुछ बोले नही। पूरा सन्नाटा छा गया। चरनदास ने कहा–

"मौसी, तेरा यह बड़ा बेटा बड़ा ही दुखदाई है। अब तो घर मे उसके नाम से ही क्लेश होने लगता है।"

सुहागी कुछ बोली नहीं, केवल एक आह भर कर रह गई।

दादा रात भर न सो सका । जाने तम्बाकू की कितनी चिलमें फूंक कर भी उसे नीद नही आई । सुहागी सुबह जाग कर आगन मे आई, तो पेडाखान घर से बाहर जाने की तैयारी कर रहा था । सुहागी समझ गई कि कल की बात ने बड़े बाबू को परेशान कर दिया है । उसे ऐसा नहीं करना चाहिए था । अब उन्हें कह देना चाहिए कि वह जैसा ठीक समझे वैसा करे, मुझे कोई इन्कार न होगा । लेकिन वह खुद तो उनसे आज तक बात ही नहीं कर सकी, अब क्या बात करेगी । वह मर्यादा कैसे तोड़ सकती है ? फिर रामस्वरूप शायद बडे बाबू के कहने से आ जाये, वह तो आ ही जायेगा ।

जिस तरह स्वार्थी मनुष्य कभी-कभी अपने स्वार्थ के लिये किसी का कुछ बिगडते देखकर चुप हो जाता है, उसके दिल के अनुभव तथा दुःख की तरफ से आखे बन्द कर लेता है, ठीक उसी तरह सुहागी ने भी आज अपनी ममता के लिये बडे बाबू की पगडी के तुर्रे को नीचा होते हुए देख कर भी चुप्पी साध ली । ममता को सुख मिलेगा, घर मे फिर रूठे हुये लोग मानकर किलकारिया मारने लगेंगे । वह चुपचाप काम मे लग गई ।

बडे बाबू ने रामस्वरूप के दरवाजे तक पहुँच कर सोचा, उसके घर जाना ठीक होगा या उससे बाहर मिलना चाहिए । पल भर के लिए रुक कर वह यह सोच कर फिर चल पडा, कि अभी वह तो सोकर जागा भी नही होगा । मन्दिर से होकर आता हूँ । दो कदम चलने के बाद यह उसे अच्छा न लगा, वह समझ गया मेरा दिल वहा न जाने के बहाने ढूढ़ रहा है । उसने अपनी छाती पर एक मुक्का मारा और कहा—

"वई ! पेडाखान, इस बुढापे मे तुझे उस दुश्मन के घर जाना होगा, जो तेरे खून से पैदा हुआ है, और अपनी उस सदिया की मर्यादा को आज छोड़ रहा है, कि गैरत के लिये जिसको एक बार छोड दिया है, उसकी तरफ आख उठकर भी नही देखा । हाय री किस्मत ! इस परदेश के दुख में यह भी सहना होगा । हमे असल मे भारत माता ने बनवास दे

रखा है। अब इस बनवास मे तो यह सहन करना ही पडेगा, और जो कष्ट भाग्य मे लिखे हैं, हँसते-हँसते सहन करना चाहिए, आडे तिर्छे तरीको से क्यो ?"

इतना सोचकर वह मंदिर के दरवाजे पर से लौट आया और रामस्वरूप के घर का दरवाजा खटखटाया। रामी ने आकर दरवाजा खोला और बड़े बाबू के चरण छू कर बोली—

"आप ? आइये। अभी बाबू जी सो रहे हैं। आप अन्दर आ जाइए, मै उन्हे खबर करती हूँ।"

इतना कह कर रामी आगे बढ चली। पेडाखान ने कहा।

"अगर सो रहा है तो मै फिर आ जाऊगा।"

यह कह कर वह लौटने लगा। रामी ने देखा कि बिना मिले ही जा रहे है, तो बात बनाकर बोली—

"अब तक जाग गये होगे, मै घंटा भर पहिले की बात कर रही हूँ। आप आइए ना, मै उन्हे खबर किये देती हू।"

पलट कर रामी ने दरवाजा भीड दिया, जैसे बड़े बाबू तो दरवाजा खोल ही नही सकते थे। फिर उन्हे लौट जाना भी अच्छा न लगा। मन को कठोर करके आगे बढे। ज्यो-ज्यो वे मन को कठोर करने जाते थे, उनके चेहरे का रंग उडता जाता था। चेहरा लाल हो रहा था, और यह लाली बढते बढते कान तक पहुच गई। पेडाखान ड्राइंग रूम मे रखे शानदार सोफे पर बैठा नही, बल्कि सहारा लेकर रुक गया। रामी ने अन्दर जाकर कहा—

"बड़े बाबू आए हैं।"

"बडे बाबू कौन ?"

स्नानघर के भीतर से निकलते हुए कलावती ने पूछा।

और दादा ससुर को सामने देखकर एकदम चौक गई। फिर अन्दर की तरफ भाग गई। पेड़ाखान के सामने बहू बिना घूँघट निकाले आयेगी, यह वह नहीं जानता था। उसकी आखे बड़ी बहू के खुले चेहरे को देख

कर लजा गई और वह जमीन को झाकने लगी। बहू ने सलवार और कमीज नही पहनी थी, बल्कि अंग्रेजी किस्म का रेशमी गाऊन पहन रखा था। यह उसकी बहू है, उसकी बिरादरी के चौधरी की बेटी है, यह उसे विश्वास नही होता था। सामने पायदान पर ऊंची एडी के जूतो का ढेर लगा था। यह उनका ड्राइंग रूम भी था और ड्रेसिग रूम भी। सामने ड्रेसिग टेबल भी था, जिस पर शृगार का सामान ढंग से सजा था।

दादा सब देखता रहा। *मक का दातुन करने वाला खानदान टूथपेस्ट और टूथ ब्रश इस्तेमाल करता है। उबटन लगाने वाले पाउडर और क्रीम के चक्कर मे पड गए है। मेज पर कई ब्रश और कंघिया रखी थी, उनके डिजाइन भी अजीब-अजीब थे।

दादा का जी चाहा कि वह लौट जाये लेकिन वह लौट नही सका, जैसे सुहागी ने उसके पैर मे जजीर बाध कर भेजा हो। सुहागी की मर्जी होगी तभी वह हिल सकेगा वरना इसके लिए हिलना-डुलना मना है। उसे क्षण भर के लिए सुहागी पर भी गुस्सा आ गया, लेकिन फौरन ही उसने गुस्सा थूक दिया। नसवार की चुटकी भर कर मुह मे रख ली। आज उसे एक तेज नशे की जरूरत थी, जो कुछ क्षणो के लिये उसे इस वातावरण से बेसुध कर दे।

वह उस जगह खडे-खडे अपने घर को याद करने लगा। सादा-कच्चा मिट्टी का घर, उसके सामने बाग, घर के अन्दर कालीनो का फर्श, गावतकिये। उसी घर मे यह सब लड़के पैदा हुए। रामस्वरूप जब पदा हुआ था, तो कितनी खुशिया मनाई गई थी। दोस्तो ने कहा था कि पेडाखान दादा बन गया। अगर वह जानता कि उसका पोता ऐसा निकलेगा, तो उसका . . . ।

इतने मे रामस्वरूप बाहर आ गया। उसके मुह मे सिगरेट था, जो बढ़िया होल्डर मे लगा था। जान पडता था वह सिगरेट नही, होल्डर पी रहा है।

---

* अखरोट का छिलका।

आते ही रामस्वरूप ने कहा—

"क्या बात है ?"

उसके मुंह मे सिगरेट और अजीब तरह का गाउन, जो उसके बदन पर झूल रहा था, देखकर पेडाखान गुस्से से बौखला गया, लेकिन गुस्से को दबाकर बोला—

"रामनारायण के ब्याह मे सिर्फ दस दिन रह गये है। अब तुम्हे बाल-बच्चो के साथ उस घर मे चल कर रहना चाहिये।"

रामस्वरूप ने सिगरेट की राख झिडकते हुए कहा—

"यह सगाई मुझसे पूछ कर की थी किसी ने ? "

पेडाखान ने गुस्से से उसकी तरफ देखा उसके रोए खडे हो गये, जैसे आग की पकड़ मे आ गये हो। उसका दिल झुलस गया, और इस वाक्य से उसके अन्दर जैसे दबी हुई चिगनारी शोला बनकर फूट पडी हो। उसने कहा—

"तू कौन है ओए. जो तेरे से पूछ कर सगाई करते ? हमारा गुरू है ? पीर है ? तुझे शरम नहीं आती, ऐसी बाते करता है ?"

"अगर मै कौन हूँ, तो मेरे घर आप आये ही क्यो हैं ?"

रामस्वरूप ने भी बराबरी करते हुए कहा।

अब तो पेडाखान के गुस्से की हद हो गई। बोला—

"आग लगाता हूँ, तेरे घर को। मै तो कभी नही आता, परन्तु तेरी मां दीवानी हो गई है, उसकी हालत नहीं देखी जाती।"

"मेरी कोई मा नही।"

पेडाखान ने कहा—

"मॉ नहीं, तो पैदा कहा से हुआ ओए ?"

रामस्वरूप ने कहा—

"मै बहस करना नही चाहता। आपकी तरह मुझे भी गुस्सा आ सकता है, लेकिन क्या फायदा ? लोग सुनेगे। मेरी आपकी इज्जत बराबर नही। आप जिसको आज गालिया देते हैं, कल उसके साथ रिश्ता कर लेते है।—और मै ...।"

पेडाखान से अब रहा न गया। वह बीच मे ही बोल उठा—

"चुप ओ कुत्ते !"

और वह पाव की जूती उतारने लगा।

"मै आज तुझे इज्जत दिखा कर जाऊँगा।"

"क्या मारोगे मुझे ? मै पुलिस के हवाले कर दूगा, कहूँगा कि तुम मेरे घर चोरी करने आये थे।"

"चोरी करने आया था ? हराम जा ।"

इतना कह कर उसने जूता फेंक कर मारा कि सुहागी सामने आ गई। जूता उसके जा लगा। बहू को देख कर पेड़ाखान का गुस्सा ठण्डा हो गया।

"तुम ? सुहागी !"

पेड़ाखान की आखो मे आसू आ गये। वह वहीं बैठ गया और कुछ बोला नहीं।

रामस्वरूप कहता रहा—

"मारो, मुझे मारो। मै अभी पुलिस को खबर भिजवाता हूँ।"

फिर मा को देख कर कहने लगा—"तू भी मारने आई है ? तू मां है ? बिल्लिया—कुत्ते भी अपने बच्चो के साथ ऐसा बर्ताव नही करते, जैसा तू करती है। आज इसको भेज दिया है, इस वहशी पठान को ?"

सुहागी ने आगे बढ़ कर उसका बाजू पकड़ा और बोली—

"अन्दर चलो।"

"मै अन्दर नहीं जाऊँगा. मैं पुलिस को बुलाऊँगा। मुझे जूता मारा है इसने। मै इसकी आते निकलवा लूँगा।"

सुहागी ने रामस्वरूप के मुँह पर हाथ रख दिया। उसने हाथ हटा कर कहा—"क्या गला घोटना चाहती है तू ? अब इसको कहो ।"

दादा खड़ा हो गया और बात काट कर बोला—

"सुहागी अगर तू मेरी बहू है, तो अब इस घर मे एक पल भी मत ठहर।"

यह कहकर दादा बाहर निकल गया। सुहागी ने जाते हुए अपने ससुर की पीठ देखी, बेटे की तरफ देखा और फिर तेज कदमो से पेडाखान के पीछे चली गई।

"ममता हार गई, मर्यादा जीत गई।"

शादी हो गई। घर मे नई बहू आ गई। दूर-दूर से रिश्तेदार आये थे, लेकिन दीवार के पीछे रहने वाला रामस्वरूप नहीं आया।

मा ने भी सबर कर लिया कि अब वह नही आयेगा, और अगर आना भी चाहेगा तो बडे बाबू उसे घुसने नहीं देंगे। एक तरफ बड़े बाबू थे, सुहागी जिनकी बहू थी, दूसरी तरफ रामस्वरूप था, सुहागी की ममता—बालक की हठ और पठान की हठ मे थोडा सा अन्तर है। बालक रो-रो कर अपने आप दुखी होता है और पठान दूसरे की जिन्दगी दुखी कर देता है। यह भी तो पठान थे। लेकिन सभ्य और फिर इनमें हिन्दू संस्कृति भी थी। दिल के गुस्से को दिल मे दबा कर बैठ गये। सुहागी अगर बीच मे न होती, तो शायद कुछ झगडे भी होते। और कुछ नहीं तो कचहरी के दरवाजे तक तो जाते ही। मगर सुहागी उनके बीच मे बिलकुल बापू की तरह खड़ी थी। जिस तरह बटवारे के पश्चात् बापू ने झगडों की रस्सी को थाम रखा था, उसे खिचने नहीं देते थे, इसी तरह सुहागी भी चुपचाप अन्दर ही अन्दर बडे बाबू के गुस्से को चाट गई थी। लेकिन आन्तरिक द्वेष ने खानदान को खोखला तो कर ही दिया।

रामस्वरूप के घर मे अगर दौलत थी तो शान्ति नहीं थी, कोई दुख-सुख का साथी नहीं था। रामअवतार के घर में साथी थे, तो भूख भी थी। नई बहू ने इस गृहस्थी की हालत देखी, तो उसका माथा ठनका। दूल्हा बी. एस सी पास कर चुके हैं और आगे एम बी. बी एस. पढना चाहते हैं. लेकिन पैसा नहीं है। मँझला जेठ काम करना चाहता है. लेकिन सिवाय केमिस्ट की दुकान के कुछ कर ही नहीं सकता और इसके लिए पैसा चाहिए। बडे बाबू जिन्दगी की उस राह पर बैठे हैं, जहा आदमी को केवल आराम की जरूरत होती है, शान्ति की जरूरत होती है। मगर उस घर मे शाति कहा से आयेगी, जहा खाने के लाले हैं। रायसाहब खुद

भी अन्दर से खोखले थे। उन्होने दहेज मे कुछ ऐसा नही दिया था कि देखनेवालों की आखे चकाचौध हो जातीं। एक मध्यवर्गीय खानदान के उन लोगो की तरह दिया था, जिनके घर मे कई लडकिया शादी के लायक होती हैं। अगर सब कुछ एक को ही भर दे, तो बाकी लड़कियो का हक मारा जायेगा। रायसाहब के घर मे लडकी तो एक ही व्याहने के लिये थी, लेकिन देने को थोडी पूंजी ही बची थी। वही उन्होने दे डाली, और सुहागी इसे ही पाकर फूली न समाती थी। इस दृष्टि से घर मे सुख था, पर कोई कुछ कहता न था, कि कहने को तो रायसाहब की बेटी थी और लेकर आई है चन्द जोडे कपड़े और चन्द तोला सोना, नकदी का नाम नही।

रायसाहब की बिरादरी वालो ने कहा—"रायसाहब अकल-मन्द हैं, भूखे को उतना ही देना चाहिए कि जितना वह पचा सके।" मा ने जाती हुई बेटी को सीने से लगा कर कहा था—

"वहा दुखी मत रहना। यह सामने घर है, मुझे ऊपर से आवाज देगी तो सब कुछ भिजवा दिया करूंगी।"

और रायसाहब ने कहा था——

"बेटा, अब तेरा इस घर से सम्बन्ध नही रहा। मैने तुझे पढाया इसलिये था कि तू लोगों को यह बता सके कि हिन्दुस्तानी लडकिया पढ लिख कर भी हिन्दुस्तानी रहती है। मेरी इज्जत अब तेरे हाथ मे है। मेरी बेटी भी तू है और बेटा भी। मेरा नाम अगर चलेगा तो तेरी बदौलत चलेगा।"

गार्गी ने बाप की सीख सुन कर आचल से आसू पोछ डाले और आचल में सीख बाध ली। अब इस घर की इज्जत सम्भालना उसका काम है, और इसी मे इसके खानदान की भी इज्जत है। इन सब बातो को वह आते ही सोचने लगी। व्याह की खुशी, वह भी प्रेम - विवाह की, चार दिन भी उसके दिल मे न रह सकी। आज उसे मालूम हुआ कि गरीबी का बोझ पढने या देखने मे भले ही दिल मे एक उमंग पैदा करता

हो, लेकिन उसे भोगने मे बहुत दुख है। किन्तु अब उसके लिये इसे दु ख समझना भी पाप है। वह यह सोचकर चुप हो जाती और सोचना बन्द कर देती।

दिन भर उसे चाहे कितना ही सोच रहता हो, लेकिन शाम को जब रामनारायण मुस्कुरा कर उसके चेहरे की तरफ देखता तो गम के बादल छट जाते। बिखरी हुई गृहस्थी सिमट कर प्यार के उस बिन्दु पर आ जाती, जहा दु ख भूल कर इन्सान सुख मे मग्न हो जाता है। रामनारायण भी घर की परिस्थिति से अपरिचित नही था। उसपर भी वही सब कुछ बीत रही थी, जो दूसरे महसूस करते थे। इसलिये उसके चेहरे की चमक उड गई। एक दिन रामनारायण ने गार्गी से कहा—

" मै देखता हूँ दिन को तुम खोई-खोई रहती हो। आखिर इसकी वजह क्या है ?"

शायद वह समझ कर भी नासमझ बन रहा था। गार्गी ने चेहरे पर मुस्कुराहट लाकर कहा—

"अपने पर बीतने वाली बात, मेरे जिम्मे लगा कर क्या आप अपना बचाव कर सकेगे ?"

रामनारायण ने कहा—

"वाह ! मै तो हमेशा से ही ऐसा था, लेकिन तुम पहिले कभी ऐसी नही थी।"

"अगर आप मुझे पहिले से पहिचानते है, तो आप भी मेरे लिये कोई अजान नही है। मसूरी से लेकर देहरादून तक की सारी सडके हमारी जान-पहिचान की गवाह है। आज भी वह उसी तरह चल रही हैं, लेकिन उन रास्तो पर कहकहे लगाने वाले इतनी जल्दी उदास हो जायेगे, यह न तो मैं जानती थी और न सडके। मै तो कई दिनो से यह सोच रही थी कि आप से पूछू, आखिर मेरे किस कसूर पर आप इतने बदलते जा रहे है। और अगर मेरे चेहरे पर कोई कालिमा आपको दिख ई दे रही है, तो वह आपके फिकर की है।"

"मेरे फिकर की क्यो ?"

"इसलिए, कि हिन्दुस्तानी औरत का अपना तो कुछ भी नही होता, वह आप भी अपनी नही होती। उनका सर्वस्व तो उसी का होता है, जिसकी मूर्ति वह अपने मनमे धारण कर लेती है। मा जी की तरफ ही देख लो। बाबू जी की याद और उनकी सन्तान के लिये ही अपना सब कुछ त्याग कर बैठी हैं।"

"बस बस रहने दो, औरत हमेशा औरत जाति की ही तारीफ करती है।"

"औरत क्या ? सब कवियो ने भी तो औरत को ही महानता दी है। और शास्त्रो ने भी . ।"

"कवि तो औरत की तारीफ करेंगे ही।"

इतना कहकर रामनारायण ने मुस्करा दिया। उसकी बात का मतलब समझ कर गार्गी शर्मा गई और चुटकी काट कर बोली—

"आप बडे वो हैं। इतनी गम्भीर बात मजाक मे उडा दी आपने। मैं तो तग आ गई आप मे।"

रामनारायण ने एक आह भर कर कहा—

"गार्गी, जिन्दगी आजकल खुद इतनी गम्भीर हो रही है कि जेठ के महीने की तरह जिन्दगी का हर पेड शान्त है। हवा का कोई झोका नही आता कि पत्ते क्षण भरके लिए हिल कर एक स्वर पैदा करे और वह स्वर जीवन के इस सूने जगल का सन्नाटा पल भर के लिये दूर कर दे।"

गार्गी नारायण के चेहरे की तरफ देखती रही, क्या यह वही नारायण है, जिसकी छेड़ से वह बिगड जाती थी और कहा करती थी—

"पल भर के लिए जिन्दगी को सीरियस ( sirious ) होकर तो देखा कीजिए।"

आज वही रामनारायण इतना उदास और इतना संजीदा हो गया है। गार्गी को डर लगने लगा। वह पल भर चुपचाप उसके चेहरे की तरफ देखती रही और बोली—

'जेठ सदा तो नहीं रहता। सावन-भादो भी तो उसके साथ ही रहते है !"

रामनारायण ने और भी निराश स्वर मे कहा—

"रहते हैं, यह सुना है, लेकिन जेठ कठोर होकर हमेशा के लिये जम भी सकता है, यह देखा है। छोटे बाबू की मौत के बाद ऐसा ही हुआ, हर रोज एक उदास सूर्य निकला और जिन्दगी मे घोर अन्धेरा भर कर डूब गया। मंझले भैया ने मुझे उस अन्धेरे से दूर रखा। अपने जीवन को जला कर, मेरे जीवन मे उन्होने उजाला भरा और अपने दुखो से मुझे परिचित तक न होने दिया। मगर अब देखने मे मालूम हुआ कि मेरे रास्तो की रोशनी भैया की जलती आशाओं की लपटो से पैदा हुई है।"

'यह सब सच है। मझली बहू के चेहरे का पीलापन देख कर मुझे भी ऐसा ही लगता है, जैसे मेरे कारण इनके खून की बूँदे सूखी जा रही हैं, लेकिन फिर सोचती हूँ कि इस सोच से क्या होगा, हमे कुछ करना चाहिए। निष्कर्म सज्जन सराहने के योग्य नहीं होता।'

'सोचता तो मै भी हूँ, लेकिन .. ... ...

इतना कह कर उसने एक आह भरी।

"लेकिन क्या ?" गार्गी ने अधीर होकर पूछा।

"लेकिन यह, कि बेबस हूँ। अगर नौकरी करता हूँ तो पिता जी की वह इच्छा, जिसके लिये इस बनवास के दिनो मे भी उन्होने मुझे पढाने से नहीं रोका, अधूरी रह जायेगी, और अगर पढने जाऊँ तो कैसे जाऊँ ? न कालेज की फीस है, न बोर्डिंग का खर्चा है। सामने सिवाय भूख के और कुछ नही। अच्छा एक बात बताओ, क्या रायसाहब मुझे कुछ कर्जा नही दे सकते ? डाक्टर बनकर सब चुका दूँगा।"

गार्गी ने बिना सोचे ही जवाब दे दिया—

"नही। और अगर वह दे भी, तो मैं उनसे नही लेने दूंगी।"

"क्यो ?"

"इस बात को आप नहीं समझ सकते, लड़कियां ही समझ सकती है।"

"जरा मुझे भी समझा दो।"

"जब लड़की की शादी हो जाती है, तो वह बचपन और लड़कपन को छोड़ कर एक नया जीवन धारण करती है। मा-बाप के घर मे रह कर उनकी लाज का ध्यान रखना उसकी इज्जत है, तो पति के घर मे आकर अपने घर की लाज रखना क्या उसका कर्तव्य नही है?"

रामनारायण उसके चेहरे की तरफ देख रहा था, कुछ बोला नही। गार्गी ने धीरे से कहा—

"एक बात हो सकती है।"

"क्या? ."

"आप को रुपये कितने चाहिये?"

"तुम पूछ कर क्या करोगी?"

"क्यो, न कर सकने वालो से घर की बातें जानने का अधिकार छीन लिया जाता है क्या?"

"नहीं तो। कोई पाच हजार रुपये की जरूरत होगी।"

"पाच हजार..?"

बस इतना कहकर गार्गी चुप हो गई। रामनारायण भी चुप हो गया। फिर दोनो के बीच रात भर कोई बात नहीं हुई।

दूसरे दिन सुबह गार्गी ने सास के चरण छूकर कहा—

"शाम को लौट आऊँगी, मा जी को मिलने जाना आज जरूरी है।"

सास सोचने लगी, क्या बात है, रामनारायण और बहू के बीच मे कुछ अनबन हो गई होगी। पढी-लिखी लड़की है, जरा ठसा रखना चाहती होगी, सास कुछ बोली नही। इतना ही कह दिया—

"अच्छा बहू, शाम को आ जाना।"

और उसका मुँह चूम कर अपने काम मे व्यस्त हो गई। रामनारायण रसोई में आया तो भाभी ने पूछा—

"क्यो दो दिन भी प्रेम विवाह का चाव नही रख सके।"

रामनारायण ने कहा—

"हा भाभी, गरीबी को सम्भाला जाये या व्याह के चाव रखे जाये।"

भाभी बोली—

"बहू ने बेकार रहने का ताना दिया है क्या ?

"नही, ऐसी बात तो नहीं. .. . पर बात कुछ इसीसे मिलती-जुलती जरूर है।"

"आखिर कौन सी बात है ?"

भाभी सुनने के लिए तन्मय हो गई।

"मैने रात गार्गी से रायसाहब से कर्जा मागने की बात की थी।"

भाभी यह सुन कर धक से रह गई। बोली—

"यह तूने क्या किया नारायण, घर की लाज का ध्यान नहीं आया ?"

नारायण उठकर शहर चला गया। सास जब दोपहर को रसोई मे खाना खाने बैठी तो बहू ने कहा—

"रामनारायण ने बहू से कर्जा मागने को कहा था और उसने कर्जा मागने से इन्कार कर दिया है।"

"फिर वह मायके गई क्यो ?"

"यह तो मै नही समझी, मा जी।"

"मेरा ख्याल है, शायद अपनी मा से कहने गई है कि इस घर मे तो... . .. ।"

इसके आगे वह कुछ न कह सकी और न सुहागी ने कहने ही दिया। बीच मे ही बात काट ली—

"क्या बकती है बहू ? औरत कभी अपने आप को उघाड सकती है?"

सुहागी ने इतने विश्वास से कहा जैसे दुनिया की हर औरत उसकी

बेटी है और भला बेटी मा की नजर में ऐसा कोई अपराध कर सकती है जिससे उसके अपने घर की बदनामी हो !

रामनारायण जब रात को घर आया तो सब सो गये थे. लेकिन गार्गी रसोई में ऊँघ रही थी। रामनारायण ने उदासी के कारण उसे पुकारा नही। रसोई मे घुसने से जो आहट हुई, उससे ही गार्गी जाग गई और जल्दी-जल्दी खाना परोसने लगी।

खाना खाते समय दोनो ने कोई बात नहीं की। जब हाथ धोने के लिए लोटा लेकर गार्गी ने पानी डाला तो रामनारायण ने पूछा—

"कब आई थी तू ?"

"शाम को।"

"गई क्यो थी ?"

"आप के कर्जे के खातिर।"

"क्या कर्जा मागने गई थी ?"

"नहीं, आप के कर्जे का इन्तजाम करने गई थी।"

और इतना कह कर उसने आचल से चाभिया खोल कर देते हुए कहा—

"आपके ट्रंक मे ऊपर ही रखे हैं, निकाल लीजियेगा।"

"क्या पूरे पाच हजार दे दिए रायसाहब ने ?"

"पाच हजार ही रखे हैं, लेकिन पिता जी से नही लाई।"

"और कहा से लाई हो ?"

"अपना जेवर बेच के।"

"जेवर... ..क्यो ?"

"जेवर तो फालतू ही था, उसके बिना भी तो चल सकता है।"

"लेकिन तुम तो मा जी से मिलने गई थी।"

"हा मा जी से भी मिलने गई थी, फिर जाकर जेवर बेचा है।"

"क्या मा ने रुपये देने से इन्कार कर दिया था ?"

"मैंने मांगे ही नहीं।"

"फिर गई थी क्यो?"

"आज आखिरी बार गई थी, फिर शायद जाना नही हो सकेगा।"

"क्यो?"

"यो ही!"

रामनारायण बहुत पूछता रहा लेकिन उसने कुछ कहा नही। क्या वह उससे यह कह देती कि गहने पहने बिना अगर वह मायके जायेगी तो उनके ससुराल की इज्जत क्या रहेगी।

रामनारायण देहली जाकर मेडिकल कालेज मे भर्ती हो गया। राम-अवतार फिर पहले की तरह नौकरी ढूढने लगा। बडे बाबू की चिलम अब दिन मे कई बार सुलगने लगी, क्यो कि दूध, मक्खन तो अब घर में रहा नही। गाय सूख गई थी। पतझड का मौसम था, पेड़ो के पत्ते भी झड गये। आगन मे ठूंठे तने रह गये। सास उन्ही तनो के नीचे बैठी रहती, बेकार, क्यो कि घर मे काम ही कुछ न था। वह करती तो क्या करती? सीने-पिरोने के लिये भी धागे की जरूरत पडती है, और फिर कपडा भी तो चाहिए। अगर घर में कपडा होता तो नन्हा नंगे बदन पर बाप का कोट क्यों लटकाये फिरता? सर्दी के दिन थे। स्वेटर के लिये ऊन चाहिये ऊन के लिये पैसा; और पैसा उनके घर मे कहा? पैसा तो अब इस खानदान के लिये ऐसा हो गया था, जैसे बॉझ औरत के लिये बच्चा।

मॅझली बहू और छोटी बहू आगन मे बैठी थी। नन्हा लाठी पकडे बडे बाबू की नकल उतार रहा था। खो-खो करके खासता और फिर मूछों पर ताव देकर चल निकलता, दरवाजे पर आवाज देता—

"सुहागी, मै जा रहा हूँ मन्दिर, दरवाजा बन्द कर लेना।"

और फिर लौट कर वह भी हॅस देता। इस गरीबी मे भी मा खुश हो रही थी, कि उसका बेटा खुश था। उसकी ममता फूल रही थी।

छोटी बहू ने कहा—

"बहन जी, आप का बेटा तो बडा होकर सिनेमा मे चला जायेगा।"

कौशल्या बोली—

"जब रामनारायण छोटा-सा था न तो उसे भी देखकर यही कहते थे कि बाइस्कोप में काम करेगा और किसी एक्ट्रेस से ब्याह करेगा।"

गार्गी बोली—

"यह तो सच कहते थे, अब भी अगर वह चले जायें, तो सचमुच कोई राण्ड इन पर रीझ ही जाये।'

"वाह! अपने पति पर इतना भी भरोसा नही। रामनारायण कभी ऐसी बात कर सकता है?"

"उन पर तो भरोसा है, पर उनकी सूरत पर नही। मेरी तरह कोई भी ठोकर खा सकती है।"

मंझली बहू ने मुँह बना लिया, जैसे मुंह कडुवा हो गया हो, और बोली—

"क्या प्रेम ऐसी कच्ची डोरी होती है कि जब चाहा एक जगह से तोड़ कर दूसरी जगह जोड़ लिया?"

"इन मरदो का क्या भरोसा?"

"ऐसा मत कहो बहन। अगर मर्द भी ऐसा सोचने लगे, तो नारी का जीवन अजीर्ण हो जाय।"

"क्यों, क्या हमारे सोचने से उनका जीवन अजीर्ण हो गया।"

"उनमें और हममें यही तो अन्तर है। हमारा जीवन अगर अजीर्ण हो जाये, तो कुछ बिगड़ता नही, लेकिन मर्द के जीवन से सारा कुल बिगड जाता है।"

"पर यह भी तो मानना होगा कि औरत के बल पर ही आदमी खड़ा है।"

मा पास बैठी दोनों बहुओं की बाते सुन रही थी। छोटी बहू की बात समझ कर उसे ठीक करते हुए बोली—

"बल पर नही बेटी, सत्य पर।"

छोटी बहू को अब ध्यान आया कि सास भी पास ही बैठी है, वह झेप गई और मंझली बहू तो जैसे जमीन मे गड गई। उसने सास की तरफ देखा और फिर भागकर रसोई घर मे जा घुसी। छोटी बहू ने बहाना बनाते हुए कहा--

"चलूँ, बहन जी, अकेली चूल्हा फूँकने गई है।

इतना कह कर वह ज्यो ही उठने लगी, सास बोली—

"फूँकना नही कहते बेटा, अगर रसोई मे नारी का मन नही लगेगा, तो खाने मे रस नही मिलेगा। और रस से ही रसोई बन कर प्राणियो के प्राण बनाती है।"

छोटी बहू को मन मे बुरा तो लगा, लेकिन उठ कर अन्दर चली गई। जेठानी के साथ बैठ कर वह सोचने लगी कि खाने का रस तो खाने की सामग्री मे होता है। घी नही होगा तो रसोई बनाने वाला उसमे क्या अपने आप को झोक देगा। अभी वह बैठी मन ही मन मे विचार कर रही थी, कि बाहर सास ने पुकारा-

"छोटी बहू, जरा बाहर आकर चिट्ठी पढ देना, शायद नारायण की आई होगी दिल्ली से।"

चिट्ठी का नाम सुनकर गार्गी का कलेजा धडकने लगा। उसका चेहरा लाल हो गया और वह प्रेम के स्वर मे कुछ बेताब और बेसुध-सी होकर बाहर की तरफ भागी। खत देखकर उसकी बेसुधी और बेताबी दूर हो गई, क्यो कि वह खत रामनारायण का नहीं था, बल्कि रामअवतार के नाम था, जो मंसूरी से आया था। खत मे केवल चार लाइने लिखी थी—

प्यारे भाईसाहब,

मैने तुम्हारी नौकरी का इन्तजाम कर दिया है, तुम खत मिलते ही आ जाओ।

तुम्हारा
करमचन्द
फीरोज काटेज, कुलड़ी, मंसूरी।

सास खत सुनकर खुशी–नाखुशी जाहिर न कर सकी। केवल इतना कह कर उठ गई —

"अपनी जेठानी को खत पढ़ कर सुना देना और कह देना कि वह रामअवतार को बता दे। वह जैसा चाहेगा करेगा।"

सुहागी की आंखो मे शायद आंसू तैरने लगे थे। वह उनको छिपा कर चली गई। सुहागी नही चाहती थी कि रामअवतार बाहर जाकर नौकरी करे। लेकिन घर की हालत भी तो बिगडी हुई थी। इस गरीबी को कैसे बदला जा सकता है, यह सवाल उसके सामने था।

रामअवतार रात को खत सुन कर खुश हुआ। यह करमचन्द कौन है, इसके बारे मे किसीने नहीं पूछा। पत्नी ने भी पूछने की जरूरत नहीं समझी। मा के पूछने पर रामअवतार जरा हिचकिचाया, लेकिन फौरन ही बोल उठा—

"यह मेरा एक नया दोस्त है। लारियों के अड्डे पर एक दिन मुलाकात हो गई थी, तो उसने नौकरी दिलवाने का वायदा किया था। तुम उसे नही जानती।"

रामअवतार हिचकिचाया इसलिए था कि मा के सामने झूठ बोलते हुए उसे धक्का लगा। मगर सच्चा इन्सान भी कभी-कभी झूठ बोलने पर मजबूर हो जाता है। मगर वह झूठे इन्सान की तरह अपने फायदे के लिये झूठ नही बोलता, बल्कि किसी को व्यर्थ की चिंता से बचाने के लिए झूठ बोल लेता है। रामअवतार ने भी इसीलिए झूठ बोला था। वह जानता था अगर सच बात कहेगा तो मा को तकलीफ होगी। क्या वह मां से कह दे कि करमचन्द नाम का कोई आदमी उसका दोस्त नहीं, यह खत उसने खुद लिख कर डाक के जरिए भिजवा दिया है, क्योंकि इस गरीबी का इलाज सिवाय इसके और कोई नहीं कि वह मसूरी में जाकर अमीरो की बनने वाली कोठियो मे पत्थर ढोये पहाडो से पत्थर निकाले ताकि गर्मी मे सैर और तफरीह के लिए आनेवाले इन बंगलो में आराम से रह सके।

*Heak-Mensavoy की रौनक को बढ़ा सके। अगर मा यह सुन पायेगी तो क्या कहेगी।

रात भर मझली बहू और छोटी बहू फटे-पुराने कपडो पर टाकिया गाठती रही। बच्चो के पुराने गद्दो की रुई हाथ से धुनकर लिहाफ सीती रही। सर्दी के दिन है, बिस्तरा तो चाहिए ही। दूसरे दिन रामअवतार मा के चरन छू कर मसूरी चला गया। जाने के लिये घर मे किराया तो था नहीं, पैदल ही चल पडा।

उसकी जिन्दगी भी तो आजकल पैरो पर ही जा रही थी। उसको सवारी की जरूरत ही महसूस नही होती थी। लेकिन रामस्वरूप के घर में एक छोड दो - दो मोटरें थी। उसकी जिन्दगी फैल रही थी। मसूरी से लेकर देहरादून तक उसकी इज्जत थी। लोग उसे झुक-झुक कर सलाम करते, यद्यपि सलाम करने वालों को रामस्वरूप का केवल हिलता हुआ सर ही दिखाई देता, और फिर सलाम करने वाले के खुले मुँह मे मोटर की धूल पड़ जाती। वह मिठास, जो इन्सानियत मे शक्कर घोलती है और इन्सानो को एक साथ जोडती है, उसका कही नाम भी न था। लेकिन गरीब आदमी अमीर की धूल चाटकर ही खुश हो जाता है। वह समझता है मोटरो की धूल भी कीमती होती है। मोटर जो ठहरी, हजारो की लागत की मोटर। मगर यह हजारो रुपये कैसे पैदा होते हैं? कहा से आते हैं, यह सवाल कोई नहीं सोचता। एक अमीर के पीछे जो हजारों गरीब हाथ बाधे खड़े नजर आते है, यह दौलत उन्हीं की है। मजबूरी यह है कि हाथ जोड़ने वाले इससे बिलकुल बेखबर हैं। अगर वे सब यह जान जाये कि हमारी ही दौलत इसके पेट मे उतर रही है, तो वे और कुछ करे या न करे, लेकिन हाथ जोडना तो बन्द कर ही दे।

रामस्वरूप की दौलत भी उन्ही इन्सानो की थी, जो उसके हाथ जोडते हैं। आठ आने की विलायती दवा की कीमत वह वसूल करता था पान्च रुपये और पाच रुपये की दवा के पचास रुपये।

---

* दो होटलों के नाम।

बात सीधी थी, वह क्या करे ? दवा मिलती नही । अभी न्यू कन्साइनमेंट नही आया, गवर्नमेंट ने लाइसेन्स बन्द कर दिए है, जी हा गवर्नमेंट ने लाइसेन्स बन्द कर दिये है, पर जाली लेबुल तो चलते है । झूठे लेबुल चिपका कर खूब मारो इन्साना को । उन्हे दवाई की जगह राख की गोलिया बना कर दे दो । कोई भी पाउडर प्रेस (press) लो। टिकिया बना लो । यह मशीने तो आप खरीद ही सकते हैं ।

रामस्वरूप यह सब करता था । पुलिस वाले भी जानते थे कि एक दो आदमी उसकी दवाइयो की वजह से मौत के घाट उतर जाते थे । पुलिस तक बात पहुँची भी, लेकिन पुलिस के जो बडे अफसर थे, वह उसके साथ डिनर खा चुके थे । उसके कई दोस्त रामस्वरूप के यहा मसूरी की कोठी मे गर्मिया काट चुके थे ।

रिश्वत लेने के भी कई ढंग हैं । छोटे आदमी से नकदी वसूल की जाती है और बडे आदमियो के यहा से तो नफे आ जाते है । स्त्रियों की जान-पहिचान बढती है तो भाईचारा-सा हो जाता है । राखिया तक बधने लगती हैं । यह तो रीति की बात है, कानून के विरुद्ध तो है नहीं । यह दूसरी बात है कि बहने मुंहबोले भाई के लिए सोने की राखी हीरे से गुथी हुई ले जाये या भाई एक धागे के तार की कीमत सोने का जडाऊ हार दे दे, बहन है और वह भी मुँहबोली—साल मे एक बार आती है--वास्तव मे बहन का तो बहाना होता है ।

बहनोई के घर मे माल किसी तरह जाना चाहिए, ताकि उसकी आखो मे नमक रच जाये, और इस मुँहबोले साले की बुराइया न देख सके । यह पोल अन्दर ही अन्दर चलती है । छोटा आदमी बेगुनाह होकर भी कानून के पंजे मे आ जाये तो उसका पूरा कुन्बा इस बेकिये जुर्म का हिस्सेदार बना दिया जाता है । बडा आदमी जुर्म करके भी बेगुनाह समझा जाता है, और सारा कुन्बा उसे बचाने के लिये अपनी तिजोरियों के मुँह खोल देता है और फिर कई साले-बहनोई चले आते हैं शोक दूर करने के लिये ।

रामस्वरूप की भी जान-पहिचान मोटर की चाल की तरह बढ़ती चली गयी और खूब बढी। देहरादून और मंसूरी मे एक तरह से उसकी हुकूमत थी। अगर किसी पर कोई मुकदमा बनता तो रामस्वरूप के इशारे पर पुलिस उसको छोड़ देती। रामस्वरूप का यह कह देना ही काफी होता कि वह उसका आदमी है। मतलब यह कि उसका आदमी मुजरिम हो ही नही सकता। पुलिस समझती थी ? नही मगर उसके आदमी को पकडना, एक उदार मित्र को खो देने वाली बात थी। उदार मित्र कौन था ? राम-स्वरूप, अफसर जिसके यहा मेहमान रहते थे। लेकिन जनता उससे बडी दुखी थी। एक आदमी गुण्डो का पृष्ठ सहायक बना हुआ है, दवाओंकी कालाबाजारी करता है, यह बात अब किसी से लुकी-छिपी न रह सकी। वही रामस्वरूप, जिसका बाप हलाल की कमाई खाने और चोर बाजारीके धन्धेको रोकने की कोशिश मे जान से मारा गया, उसके बेटे की जिन्दगी चोर बाजारी की जान बन गई थी। वह अपने बाप के खून को बेच रहा था। बडे-बड़े लोग, जो ईमानदार और पुरानी बातों पर विश्वास करनेवाले थे और जिनके विचार यह थे कि खून इन्सानों की बुनियाद है और इन्सानियत नेक खून से पैदा होती है, अगर यह सुन पाते कि रामस्वरूप चोर बाजारी करता है तो उन्हे विश्वास न होता। वह हँस देते और कहने वाले को झूठा साबित करने लगते।

गरीब लोग अन्दर ही अन्दर कुढ रहे थे। लोग चाहते थे कि जो काले बाजारी से अपने घर को रोशन कर रहे हैं, उनके घरकी रोशनी बुझा दी जाये। अब सब लोग यह पता लगाने की फिकर मे थे कि कब और कैसे ब्लैक का माल बिकता है।

अगर हुकूमत की मशीन खराब हो गई है तो क्या हुआ, अभी हमारा ईमान तो खराब नही हुआ। उसके साथ ही रामस्वरूप की दुकान के सामने बरामदे मे खोमचा लगाकर फल बेचने वाला बिशनदास भी चोर बाजारी मे तंग आ चुका था।

रामस्वरूप हर रोज बिशनदास के खोमचे से सस्ते दामो पर फल खरीदता और उसके सामने ही जब काटकर खाने लगता तो उसे ऐसा

जान पडता, जैसे किसी ने उसके बच्चे के कलेजे पर छुरी रख दी हो। और अगर वह सस्ते दामो बेचने से इन्कार करता तो शेर से पंजा वही लड़ाये, जो अपनी मौत बुलाये।

देहरादून के महन्तों का जुलूस ठाकुरद्वारे से निकल चुका था। पल्टन बाजार पर लोगो की भीड जमा हो रही थी। चकरोता रोडपर जमघट था।

रामस्वरूप मोटर से उतरा। उसके साथ पुलिस के दो-एक अफसर भी थे। आज बिशनदास के खोमचे पर फल भी खूब सजे हुए थे। अंगूर-चमन का-मण्डी मे केवल दो ही पेटिया आई थी और दोनों, विशन इस ख्याल से खरीद लाया था कि सरहद के लोग यहा खूब बसे हुये हैं, अपने देश का मेवा देखेगे तो जरूर खरीदेगे।

रामस्वरूप की नजर भी अंगूरो पर जा पड़ी। दुकानदार ने अगूरों के दो एक गुच्छे धोकर लटका रखे थे और बाकी माल पेटियो मे पड़ा था।

रामस्वरूप ने कहा—

"भई विशन, आज यह काबुल का मेवा कहा से ले आया है ?"

बिशनदास ने शेखी मारते हुए कहा—

"अपनी दुकान पर तो अच्छा माल ही बिकता है, बड़े लोग खाने वाले होते हैं, यह दो पेटिया आई थीं, दोनों खरीद ली है। सारी पूजी मण्डी के आड़तियों के हवाले कर आया हूँ।"

रामस्वरूप ने एक गुच्छा उतारा और चखते-चखते सारा चख गया। बाकी के गुच्छे उसने साथियो को दे दिये। खाकर वह भाव करने लगा। उसने कहा—

"दोनों पेटियों का भाव कर लो।"

विशन ने कहा—

"दोनों पेटिया क्या करेंगे आप, पड़ा-पड़ा सड जायेगा, नाजुक चीज है। एक पेटी ले लीजिये, सौ रुपये होंगे।"

"सौ रुपये एक पेटी के ? क्या काला बाजार करता है ?"

"यह तो भादों का महीना है. फिर हरा-ही हरा क्यों न दिखाई दे आपको ?"

रामस्वरूप उसका मतलब समझ गया और चिढ़कर बोला—

"आपे में रहा कर। देखता हूँ, कुछ दिनों से तू टेढ़ी बातें करने लगा है। क्या यहां रहने का इरादा नहीं है ?"

"इरादा तो है भैया! लेकिन इज्जत से रहने को नहीं मिलेगा तो चला जाऊँगा। इज्जत के लिये तो हमने अपना देश छोड़ दिया, अपना मकान छोड़ दिया। पहले तिले, कतारी और जरी का व्यापार करता था, अब फल बेचता हूँ। यहां से जाकर कहीं चना मूंगफली बेच लूंगा, लेकिन ब्लैक का धन्धा न किया है, न करूंगा। आपको माल चाहिये तो दाम दीजिये और उठा लीजिये।"

पुलिस अफसर ने कहा—

"दाम के बिना कौन माल उठा रहा है बे ?"

बिशनदास ने उसकी बात का कोई जवाब नहीं दिया। उसने रामस्वरूप से ही कहा—

"क्या मैंने झूठ कहा है ? क्या अपने देश में मेरी इज्जत कुछ आप से कम थी ?"

रामस्वरूपने ड्राइवर को आवाज देकर कहा—

"यह दोनों पेटियां गाड़ी में रख लो और साहब के घर पहुँचा दो।"

बिशन कुछ कहने ही वाला था कि उसकी नजर पुलिस के उस अफसर पर पड़ी, जिसके हाथ में छोटा सा डण्डा था, जिससे वह अपने बूट को ठोक रहा था। उसने दिल में सोचा कि बड़े आदमियों से मुँह लगना ठीक नहीं, आज इसको माल उठा लेने दो, कल यहां से हम दुकान उठा लेंगे। पेटियां गाड़ी में रखली गई। बिशन चुपचाप गाल पर हाथ रखे देखता रहा। पुलिस अफसर भी गाड़ी में बैठकर चले गये। बिशन ने रामस्वरूप से कहा—

"बाकी का माल भी आप ले जाइये तो मै दूकान बढ़ा दूँ।"

रामस्वरूप गुस्से मे झल्लाकर बोला।

"बकवास मत किया करो, मैं तुम्हारा लिहाज करता हूँ कि तुम अपने देश के रहने वाले हो। याद है, पिछले साल सामने वाले केमिस्ट ने मेरे साथ झंझट किया था, तो अभी तक जेल मे पडा सड़ रहा है। ऐसा झूठा मुकदमा बनाया कि एक ही पेशी मे वह सीकचों के भीतर बद हो गया।"

बिशन अब और न सह सका, बोला—

"तो एक झूठा मुकदमा मुझपर भी बनवा दो, यहा से जेल मे अच्छा रहूँगा।"

इतना कह कर सामने रखे हुये सन्तरों और सेबों को उछाल–उछाल कर पागलो की तरह चिल्लाने लगा।

मेरे माल के पैसे दो। मैंने कोई कर्जा नहीं लिया तुमसे, जो दब कर रहूंगा। बच्चों की दवा की जरूरत पड़ी तो तुमने दो रुपये के चार रुपये लगाये थे। मैने आज तक शिकायत नही की। अब मेरा माल क्या हराम का है कि पुलिस वालों से नाता तुम जोडो और माल मेरा लुटा दो?"

उसका चिल्लाना सुनकर इधर-उधर के दुकानदार बाहर निकल आये और यह झगड़ा सुनने लगे। कुछ राहगीर भी खडे हो गये। बिशन सबसे कह रहा था —

"देखो जी, रोज हजारो रुपये का चोर बाजार मे माल बेचता है और गरीबों का पैसा मारता है। अँगूर की दोनों पेटिया उठाकर पुलिस वालो के हवाले कर दीं और मागने पर पैसे नहीं देता।"

चोर के दिल मे धड़का तो होता ही है। चोर बाजारी का नाम सुन-कर रामस्वरूप तडप गया और दुकान के अन्दर खिसक कर पुलिस को फोन करने लगा।

बिशनदास ने संतरो की पेटिया और अलीचियो के टोकरे बाजार मे लुढका दिये। उसकी हालत ठीक उस भावुक व्यक्ति की तरह थी, जो बरदाश्त की हद से गुजरने के बाद मौत के लिये तैयार हो जाता है। वह कहे जा रहा था—

'लूट का माल है, चोर बाजारी का माल है, उठा ले जाओ सब। अब मै यहा दुकान नही करने का। यह सारा बाजार ही चोरों का है।"

फिर लोगों की तरफ मुँह करके कहने लगा—

"यह काग्रेस का राज है? यह जवाहरलाल नेहरू की पुलिस है? हमें घर से बेघर कर दिया, यहा ला कर रखा। हम मेहनत-मजदूरी करके रोटी कमाते हैं और यह अमीर चोर बाजारी का धन्धा करते हैं। लाखों काटते हैं, फिर भी गरीबो का माल लोगो के हवाले कर देते हैं। वह कहा है जवाहरलाल? आज अगर गाधी महात्मा जिन्दा होते तो जाकर उनको पकड़ लेता और कहता इन लोगो के लिये आजादी ली थी तुमने? इन चोर बाजार वालों के लिये?"

काग्रेस को कोसने और जवाहरलाल पर बिगडने के कारण लोग इकट्ठे हो गये थे और बिशनदास की इस हालत पर हँस रहे थे। आखिर एक काग्रेसी टोपी वाले ठिगने कद के आदमी ने आगे बढकर पूछ लिया—

"क्या हुआ भाई, जो तू अपने नेताओ पर इतना बिगड रहा है?"

बिशन को बोलने का और भी मौका मिल गया। वह कह पडा—

"अपने नेता? ओए, यह नेता अपने नही, धनवानो के हैं, जो चोर बजारी करते हैं और पुलिस से बचने के लिए गरीबो का माल पुलिस के सुपुर्द कर देते हैं।"

गाधी टोपी वाले साहब जरा समझदार थे, फौरन ही मामले की तह तक पहुँच गये और बोले—

"इसका सबूत क्या है कि यह आदमी ब्लैक मारकिट करता है?"

बिशन आपे से बाहर हो गया।

"ओए, तू सबूत मांगनेवाला कौन है ? उल्टा ख्याल सर पर रखकर आ गया है। सबूत ? मैं कहता हूँ तूने भी इस रामस्वरूप की तरह ब्लैक मारकेट करके मंसूरी मे बंगला खड़ा कर दिया होगा। जाओ रास्ता लो। नेताओं को बुरा क्यो कहता है ? 'नकल उतार कर बोला।' जैसे वह उसके नेता हैं, हमारे नहीं।"

वह बेचारा अपना-सा मुँह लेकर चुप हो गया। लोग इधर-उधर हँसने लगे। अब जुलूस पलटन बाजार तक पहुँच चुका था। हाथी ठीक बिशन की दुकान के सामने झूल रहे थे। लोग उस जुलूस को देखने लगे। गाधी टोपीवाले महाशय भी मौका ठीक समझ कर वहा से खिसक गये। इस बिशन की गालियो के कारण रामस्वरूप ने पुलिस को फोन किया, लेकिन थानेदार साहब तो जुलूस के साथ गये थे. मिलता कौन ? रामस्वरूप तिलमिला कर रह गया। वह सोचने लगा कि इस बिशन को ठीक उसी तरह कत्ल करा देना चाहिये, जिस तरह उसके बाप धनीराम को बाजारवालों ने कत्ल करा दिया था। यह पुलिसवाले भी खूब हैं। एक आदमी किसी शरीफ आदमी के गिरेबान को झंझोड रहा है और पुलिस मौके पर नहीं पहुँचती। सारा खिलाया-पिलाया हराम गया।

रामस्वरूप यही सोच रहा था कि दुकान मे एक ग्राहक आ गया। उसने दवा माँगी। रामस्वरूप ने दवा दी। ग्राहक ने दाम पूछा, रामस्वरूप ने कीमत बताई। दवा खरीदने वाले ने कहा—

"साहब ! इसकी कीमत कुछ ज्यादा है, जरा कम कीजिए।"

रामस्वरूप चिढ़ कर बोला—

"लेनी है तो लीजिए, वरना रास्ता नापिए। चले आते हैं, गाधी टोपी लटकाये, कम कीजिये दाम ज्यादा है। धतूरा खरीदिये जाकर। आप पेनिसिलिन खरीदने कहा आ गये।"

उसके मिजाज को देखकर खरीदार ने सौ का नोट निकालकर दिया और कैशमेमो मागा। रामस्वरूप ने साफ कह दिया—

"कैशमेमो नहीं काट सकते। लेनी है तो लीजिए, वरना यह रखा है आपका नोट।"

"दवा तो जरूर चाहिए, बीमार के लिए।"

उस आदमी ने कहा।

रामस्वरूप ने उत्तर दिया—

"बीमार को मरने दीजिये, दवा की क्या जरूरत है ?"

ग्राहक सौ के नोट का बाकी पैसा और दवा की शीशी अपनी जेब में डाल कर निकल गया। जुलूस अब बिलकुल दुकान के आगे पहुँच चुका था। बिशन लुटी हुई दुकान के चबूतरे पर बैठा शून्य की ओर ताक रहा था। थानेदार उसके पास आया और बोला—

"तू बाजार मे बहुत हुल्लड़ मचाता है, बन्द कर दूँगा ले जाकर थाने मे।"

बिशन बोला—

"और वह तेरा बाप लगता है जो . . . ।

अभी उसका वाक्य पूरा भी न हुआ था कि थानेदार ने उसे हण्टर मारना शुरू कर दिया। जुलूस के लोग इकट्ठे हुए, "क्या हुआ... .. क्या हुआ ?"

थानेदार कह रहा था—

"इसने महाराज को पत्थर मारा ?"

बिशन पिटते हुये भी गालिया बके जा रहा था। दो सिपाहियों ने आकर बिशन को पकड़ लिया। रामस्वरूप बरामदे मे आ चुका था और उस ग्राहक के साथ खड़ा बिसनदास की पिटाई देख कर खुश हो रहा था। वह जोश में आगे बढ़ गया और कहा—

"मारो साले को, मुझे गालिया दे रहा था। इसे ले जाओ, मुझे कहता है, मै तुम्हे जान से मार दूँगा।"

गाधी टोपी वाला आदमी कुछ बोला नही, तमाशा देखता रहा। जब पुलिस वाले ने बिशनदास को थाने ले जाने के लिये घसीटना शुरू किया, तब वह आगे बढ़ा और गंभीरता से कहने लगा—

"भई, इस आदमी को भी पकड़ो, जो चोरबाजारी का धन्धा करता है।"

थानेदार ने उसकी तरफ गुस्से से देख कर कहा—

"क्या बकते हो जी ? क्या यह दुकानदार फल बेचने वाला आपका दामाद लगता है, जो इसकी वजह से चिढ़ करके उस शरीफ आदमी को दोषी ठहराने लगे हो। हम उसे जानते है; वह भला आदमी है।"

लेकिन गाधी टोपीवाले ने और ज्यादा नर्मी से कहा—"थानेदार जी मैंने उसकी दुकान से दवा खरीदी है ब्लैक मे।"

"दिखाओ जी दवा ?"

थानेदार ने ऐंठ कर कहा।

"और अगर न दिखाऊँ तो ?"

गाधी टोपी वाला भी अब झल्ला गया। थानेदार पल-भर उसकी तरफ घूरता रहा, फिर बोला—

"तो इस टोपी की तरह आप की भी इस्त्री कर दूँगा।"

"अच्छा ! लेकिन कायदे के बिना ही ?"

"कायदा क्या होता है ? तुम क्या वकील हो ?"

"ऐसा ही समझ लो।"

"कानून पुलिस वालो के हाथ में होना है साहब, एक बार तो बांधकर ले ही जाऊँगा, फिर भले ही कोई छोड़ दे आप को।"

अब बाजार आदमियो से और भी भर गया था। इन्सपेक्टर पुलिस भी जुलूस मे था। झगड़े की खबर पाकर घोड़ा दौड़ाये हुए आ गया और गाधी टोपीवाले को देखते ही छलाग मारकर नीचे उतरा, फिर पैर ठोककर बहुत जोरो से सल्यूट मारा। सब चौक गए, किशनदास चौका, रामस्वरूप भी। थानेदार की तो जान ही निकल गई। पेटी पेट पर से खिसककर नीचे आ गई। लोगो मे भाग दौड़ होने लगी। गाधी टोपीवाले ने कहा—

"इस आदमी ने ब्लैक में दवाई बेची है मेरे हाथ। रुपये इसकी तिजोरी मे रखे है। सौ के नोट पर मेरे दस्तखत मौजूद हैं। आपके थानेदार साहब हमे गालिया देकर झूठा बताते हैं और उसे सच्चा।"

थानेदार की घिग्घी बँध गई। लोगो ने सुना तो कहा "अरे यार, यह तो यू० पी० गवर्मेंट के पार्लियामेन्ट्री सेकेट्री गोविन्द सहाय हैं।"

बिशनदास ने जोश मे आकर नारा लगाया—

"गोविन्द सहाय" . .

और जिन्दाबाद होने लगी। कांग्रेस भी जिन्दाबाद हो गई! 'चोर बाजार का काला चोर मुर्दाबाद"—नारे गूँज गये।

इन्सपेक्टर साहब ने थानेदार की पेटी उतरवा ली, दूकान से नोट बरामद कर लिया, फिर रामस्वरूप को हथकड़ी लगा कर ले चले। लोग उसके मुँह पर थूँकने लगे। कुछ मनचले आगे बढ कर दुकान के अन्दर घुस गये और दुकान लूट ली। लोग पुलिस के रोके न रुकते थे। वह गाधी टोपीवाला आदमी एक कोने मे खड़ा सब तमाशा देखता रहा। उसने भी जनता को रोका नही। रोकता कैसे? बड़े कहलाने वालों के कर्म जो देख चुका था।

पोस्टमैन ने सुहागी के दस्तखत लेकर पच्चीस रुपये गिन कर उसके हाथ पर रख दिये। पच्चीस रुपये पाकर सुहागी को इतनी खुशी हुई जैसे उसे पाकिस्तान मे खोई हुई जायदाद मिल गई हो। आज उसके अनपढ़ बेटे रामअवतार ने बिना बाप की पूंजी के मा को रुपये कमा कर भेजे थे। रामअवतार अनपढ होते हुए भी नौकरी कर सकता है, यह उसकी मा को विश्वास नही होता था। वह यही सोच सोच कर परेशान हो उठती थी कि बड़ा बेटा तो भगवान की कृपा से सुखी है, छोटा भी अब डाक्टर बन जायेगा। लेकिन इसका क्या होगा, जिसके पेट मे ढाई अक्षर भी नहीं पड़े। आज पच्चीस रुपये पाकर उसकी आखो मे आसू आ गये। राम-

अवतार कमा सकता है, मा के लिये यह गर्व की बात तो थी ही, मगर उसकी बहू के लिये तो मालूम होता था कि इससे बढ कर कोई खुशी की बात हो ही नही सकती।

मा ने रुपये लेते ही पुकारा—

"बहू! देख रामअवतार ने मसूरी से पैसे भेजे है।"

मझली बहू बेसुध-सी होकर अन्दर से भागी और सरपर आंचल ठीक करते हुए पास आ खडी हुई। सास ने पचीस रुपये गिन कर मझली बहू के हाथ मे रख दिये। छोटी बहू भी आ गई। मॅझली बहू ने एक बार खुद गिनें और फिर छोटी बहू को देकर कहा—

"जरा गिन देना बहन, मेरे हाथ अच्छे नही हैं।"

इतना कहकर वह फिर अन्दर चली गई और काम मे लग गई। राय-साहब की बेटो को भी पचीस रुपये पचीस हजार प्रतीत हुए और उसने गिनकर मा के हाथ पर रख दिये। मा ने कहा—

"बहू थोड़ा-सा हलवा बना ले. मन्दिर में प्रसाद चढा दूॅ। अच्छा रहने दे, घर मे कुछ है ही नही, हलवा किससे बनेगा। हलवाई की दुकान से कलाकन्द खरीद कर प्रसाद चढा दूॅगी। मेरे बेटे की पहली कमाई है। अरे हा! अभी से कहा मै मन्दिर चल पड़ी, उसके दादा तो आ जाये। उन्ही को मंदिर भेजूॅगी।"

इस कमाई ने इतनी खुशी चेहरो पर नही डाली थी, जितनी दिलो म भर दी थी। अभी-अभी मा को यह पता ही नहीं था कि रामअवतार ने यह पचीस रुपये, पहाड़ों को काट कर, जमीन खोद कर और पसीना बहा कर इकट्ठे किये है। अगर उसकी माँ यह देख लेती, तो उसकी खुशी आंसू बन कर बह निकलती बेटे के पसीने के साथ।

रामअवतार, कड़कड़ाती सर्दी मे पहाडी की चट्टाने तोड़ते न थकता था। उसके चेहरे से मालूम होता था कि वह पहाड तोड़ने वाले खानदानो से अलग था, लेकिन काम करते हुये उसके चेहरे पर इन खानदानो से ज्यादा खुशी

रहती। मेहनत भी वह इस तरह करता, जैसे इसी पहाड की खुदाई से उसकी गरीबी का इलाज हो जायेगा, इसके टपकने वाले पसीने की बूंदों से एक ऐसा पौधा फूट पडेगा जिसकी पत्तिया सोने की होंगी।

वह दिन भर पहाडी पर काम करता और रात को एक मामूली से लिहाफ मे आग के पास पडा रहता। यही उसके दोस्त का वह मकान था, जिसका बहाना बना कर वह घर से निकला था। लेकिन मा बिलकुल बेखबर थी। उसकी नजर मे रामअवतार का दोस्त कम से कम रामस्वरूप की तरह कोई मालदार आदमी था, जिसने उसे नौकरी दिलाई थी।

आज रुपये पाकर मा घर मे खुशी मे फूली नहीं समाती थी। इसने कई बार दादा की चारपाई पर रुपये रखे और उठा लिए, यह सोच कर कि कागज के पर्चे हवा से न उड जाय, लेकिन दादा को कैसे पता चलेगा कि उनके पोते की कमाई है। नोट देख कर, तो जरूर पूछेंगे कि "यह रुपये कहा से आये, ऐसा उसने कई बार सोचा और सोच कर मन ही मन में खुश हो गई।

इतने मे दरवाजा किसी ने खटखटाया। सुहागी ने रुपये अपने ससुर की चारपाई पर रख दिये कि अभी आकर देखेंगे। लेकिन दरवाजा खोलते ही नन्हा बोलने लगा—

"बड़े बाबू जी, आज बाबू जी ने रुपये भेजे हैं।"

परन्तु दादा वहा नहीं थे। राय साहब आये और बेटी को पुकार कर बोले—

"गार्गी। तेरी सास कहा है?"

समधिन सर पर कपड़ा ठीक कर के आगई। गार्गी भी अपने पिता के पास आ खड़ी हुई।

राय साहब ने कहा—

'एक बड़ी बुरी खबर लेकर आया हू, रामस्वरूप को पुलिस वाले पकड़ ले गये हैं।'

"वह क्यों?" उसने हैरानी से पूछा।

"चोर बाजार मे माल बेचने के जुर्म मे। मुकदमा बड़ा सगीन है, जिसके हाथ दवा बेची थी, वह गवर्नमेन्ट का आदमी था। लोगो ने दुकान लूट ली। मै जमानत देने गया था, पर पुलिस ने जमानत लेने से इन्कार कर दिया। कल रविवार है, परसो सोमवार को पेशी है।"

मा यह सुन कर सन्नाटे मे आ गई। अगर वह पास के खम्भे का सहारा न लेती, तो शायद वही गिर पडती। उसका हाथ काप कर रह गया। शायद कापते हुये हाथ को रायसाहब ने देख लिया था, इसी लिये रायसाहब मा की भावनाओ को सम्भालने के लिये बाते करने लगे—

"यह काग्रेस का राज्य है। जो जिसके जी मे आता है, करता है। अग्रेजों के जमाने मे मेरे नौकर ने एक आदमी को कत्ल कर दिया था। सब कहते थे, जमानत नही होगी, लेकिन साहब मै जाकर खडा हो गया कलेक्टर के सामने; और रात के बारह बजे नौकर को बाहर निकलवा लाया। आजकल तो पूछ-ताछ ही नही। जिसको देखो, अफसर है। ऐसी आजादी भी किस काम की। बेटा गार्गी! तेरा क्या हाल है? तू ने तो घर आना ही छोड़ दिया है।"

गार्गी ने सास की तरफ देखा और फिर रायसाहब की तरफ देख कर सिर हिलाकर चुप हो गई। कुछ देर तक बिलकुल खामोशी रही, फिर रायसाहब ने उठते हुए कहा—

"अच्छा बेटा, कभी घर आना। तेरी मा तुझे बहुत याद करती है। परसो नारायण की चिट्ठी मुझे आई थी, तुझे भी मिली होगी। अच्छा नमस्ते।"

कहकर रायसाहब दरवाजे के बाहर चले गये। जितनी बाते रायसाहब ने कहीं, वह उसी खबर और उसके असर का नतीजा थीं। ऐसे मौके पर इन्सान अकसर ऐसा ही करते हैं।

रामस्वरूप का दादा पेडाखान कट्टर पठान था। वह रामस्वरूप की खातिर थाने, कचहरी एक बार भी नहीं गया। रामस्वरूप उसका पोता है,

यह कहना भी उसके लिये शर्म की बात है । जिसका बाप चोर बाजारी के विरुद्ध मे मौत के घाट उतारा गया, उसका बेटा चोर बाजारी के जुर्म मे गिरफ्तार हो, यह तो सचमुच डूब मरने की बात है । दादा ने अपने पोते को छुडाने की कोशिश नहीं की, बल्कि वह सबसे कहता था—

"देखो बुराई का नतीजा । भगवान की लाठी यूँ लगती है ।"

दादा को उसके साथ कोई सहानुभूति नही थी । मगर सुहागी बेटे के घर जरूर गयी थी, और वहा रामस्वरूप के ससुर बैठे थे । उन्हे देख कर सुहागी को तसल्ली हुई कि चलो, कोई तो बेटे के लिये भागने वाला है । चौधरी के पास कुछ माल-वाल तो था नही, जो मुकदमे पर खर्च करते, अपनी बेटी के पास से रुपये लेकर देहली गये । वहा से किसी बैरिस्टर को लेकर आये । पुलिस ने रिमाड लिया, बैरिस्टर ने जमानत कराई ।

रामस्वरूप जमानत पर आ गया और मुकदमा लड़ने लगा । नये-नये वकील और बरिस्टर दूर-दूर से बुलवाये जाने लगे । कलकत्ते, बम्बई के बेरिस्टर ज्यादा चालाक हैं, वहा के वकील स्याह को सफेद और सफेद को स्याह साबित कर देते हैं । ऐसा बयान करते है कि अदालत दग रह जाती है । देहली के वकील कानून तोड़ते है और बनाते है । इसलिए कानून बनानेवाले की जरूरत तो थी नही सिर्फ कानून को मरोडने वाले की जरूरत थी । लेकिन कानून को मरोड़ने वाला अपने "मुवक्किल" को भी मरोड लेता है, इन्साफ का शिकजा वकीलो ने हाथ देकर थाम रखा था, और उनका ख्याल था, मुकदमे की मिसल पर जब धूल पड जाती है, तो घटना की तस्वीर गवाहो की बुद्धि मे इस कदर धुन्धली पड़ जाती है कि गवाह दो-चार अटपटे वाक्यो से घबरा जाता है । इसलिए मुकदमा लम्बा होने लगा । देहरादून के सारे वकील इस मुकदमे मे आने लगे । मगर मुकदमा सच्चा था पुलिस ने कुछ इस तरह पैरवी की कि रामस्वरूप के चारों तरफ दीवारें खड़ी हो गयी । रामस्वरूप इस कानून की दीवार से बाहर निकलने के लिए रास्ता ढूढ़ने लगा ।

इन रास्तो को ढूँढने के लिए बाहर से वकील बुलाये गये। बम्बई-कलकत्ता, मद्रास, देहली जहा कही भी अच्छे वकील की खबर सुनी, उसे बुलवा भेजा।

मुकदमे के शुरू मे सारे वकील मन्सरी के "स्वाम होटल" मे इकट्ठे हुये थे। सारा कमरा खचाखच वकीलो से भरा हुआ था और रामस्वरूप इन काले कोटो के बीच सफेद सूट पहिने तन कर बैठा था। उसे आज मालूम हुआ, मेरे पास रुपये है और रुपया दुनिया का अच्छे से अच्छा दिमाग खरीद सकता है और वे दिमाग हुकूमत की लोहे की दीवार मे कानून के हथौड़े से इतना बड़ा छेद कर देते, कि जिससे अपराधी अपने गुनाहो के जुलूस के साथ निकल सकता है। उसने इन काले कोटो से अन्दाजा कर लिया कि यह भी काले बाजार के दृढ स्तम्भ हे।

एक वकील ने, जो उस मुकदमे मे शुरू से शामिल था और सब कागजो को ध्यान से पढ चुका था, कहा—'मैने इस मुकदमे को गौर से देखा है। इसका एक-एक कागज मेरी नजरो से गुजरा है और मै इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि अपने मुवक्किल रामस्वरूप को बेगुनाह साबित करना कोई मुश्किल काम नही है और फिर जहा इतने बड़े-बड़े वकील जमा हो, वहा अदालत का झुक जाना आसान है।"

एक वकील, जो शायद देहली से आया था, उसने कहा—"अदालत वकीलो के सामने नहीं झुकती, सच्चाई के सामने झुकती है। कानून सचाई की देखभाल के लिये बनता है और वर्तमान प्रजातंत्र, जो हिन्दुस्तान मे चल रहा है, यह हिन्दुस्तान के स्वभाव के विरुद्ध है। प्रजातंत्र सच्चाई-पसद लोगों मे चल सकता है, जहा के वकील अपने कामो मे सच्चाई को सब कुछ मानते हों। मेरे सामने जो मुकदमे की फाइल रखी हैं, उससे पता चलता है रामस्वरूप सचमुच मुजरिम है, और मुजरिम को सहारा देना, उसको बचाना, यह सच्चे वकीलो का कर्तव्य नहीं है।'

रामस्वरूप यह सुन कर बौखला गया। उसने कहा—"आपको मैने इस लिये नहीं बुलाया कि आप मेरे खिलाफ बोलना शुरू कर दे। अगर आप

ऐसे ही धर्मात्मा है तो तिलक लगा कर हरिद्वार मे बैठिये, आप यहा आये ही क्यो ?"

"अगर मै यह जानता कि एक गुनहगार मुझे झूठ बुलवाने के लिये बुला रहा है तो मै कभी भी नही आता।" वकील ने मुस्करा कर कहा।

रामस्वरूप बोला—"मै गुनहगार नही हूँ।"

वकील के माथे पर बल पड गये, उसने कहा—"क्या तुमने दो रुपये की दवा, दस रुपये मे नही बेची ?"

"बेची है।"

रामस्वरूप ने स्वीकार किया।

"दो रुपये की खरीदी हुई चीज को दस रुपये में बेचना कोई गुनाह नहीं है। यह व्यापार है, कारोबार है। मेरे पास एक चीज रखी है, आपको जरूरत है, मै जिस दाम पर चाहूँगा, बेचूँगा। अगर आपको जरूरत होगी, तो खरीदियेगा।"

वकील इस बात पर चिढ गया। उसने झल्ला कर कहा—

"यह दलील जो आप दे रहे है, इस तरह की हजारो दलीले हत्यारा भी अपने पास रखता है, लेकिन वह कानून के पजे से बच नही सकता। और जहा तक जरूरत का प्रश्न है, दवा कोई ऐशआमी की चीज नही, जिन्दगी की आवश्यक चीज है। जिस आदमी ने दवा का आविष्कार किया था उसने आपके कारोबार के लिए नही, बीमार इन्सानो के लिए ही आविष्कार किया था। और कम्पनी ने इसे बीमारो के फायदे के लिए बनाया है, आपका एक खास कमीशन निर्धारित है, इस दवा पर आपका हक नही है, उस आदमी का हक है जो बीमार पडा है, और जिसका भाई, बाप या बेटा आपके पास दवा खरीदने के लिए आया है और जो बिस्तरे पर पडा एडिया रगड रहा है, दवा का इंतजार कर रहा है, मौत जिसके सिरहाने खड़ी है, उसी मजबूर आदमी के लिए यह दवा है। अगर इस मजबूरी से आप फायदा उठाते हैं, तो आप गुनाह करते हैं, आप मुजरिम

हैं, आपको सचमुच सजा मिलनी चाहिए।" फिर वहा बैठे वकीलो की तरफ मुँह करके वह बोला—"मै अपने वकील भाइयो से भी यही प्रार्थना करूँगा कि अब हमारा देश आजाद है. हमलोगा को सच्चाई का साथ देना चाहिए, पैसे का नही। दुनिया का हर इन्सान क्या वकील बनकर अपनी इसानियत को खो देता है ? प्राचीन काल में जब हिन्दुस्तान पर विदेशिया का राज था, उस समय विदेशी हुकूमत के निर्दयी हिमायती सच बोलने वाले पर या आजादी मागने वालो पर झूठे मुकदमे खडे कर देते थे। मगर अब जबकि हमारा राज्य है. और झूठे मुकदमो का जमाना निकल चुका है, हमे यही चाहिये कि हम इस तरह के झूठे इन्सानो का साथ न दें। रामस्वरूप की तरह सैकडो लोग हमारे देश मे भरे पड़े है। अगर इनको इनके किये का फल न मिला, तो दूसरे लोग इस आग पर और तेल डालेगे। इस ब्लक मारकेट की आग मे हजारों मासूम बच्चे जल रहे हैं और जलेगे. हजारो औरतो के सुहाग लुट रहे हैं और लुटेगे।"

इतना कहकर वकील ने अपना कोट उठाया और सामने रखे हुए ह्विस्की के पैग को ठुकरा कर बाहर निकल गया। उसके जाने के बाद भी एक मिनट तक वहां खामोशी छाई रही। सब वकील एक-दूसरे का मुँह ताकने लगे। फिर एक के बाद एक उठने लगे।

रामस्वरूप की आखो के सामने जेल का दरवाजा घूम गया। जेल की मुसीबतें भयंकर आकृतियों मे उसके सामने आकर घूमने लगी। उसने उठते हुए वकीलों को देखा तो बोला—

"आप भी जा रहे हैं ? मै हर वकील को एक-एक हजार रुपया और अधिक दूँगा, लेकिन आप मेरा मुकदमा लड़िये।"

पैसेवाले का यह आखिरी जाल था. जिसके तार रुपहले थे, जो हर आदमी को काबू कर सकते हैं। वकील रुक गये।

रामस्वरूप ने इनकी फीस चुकाने के लिए अपना मन्सूरी का बंगला बेच दिया, हथियाया हुआ आधा मकान गिरवी रख दिया बीवी के जेवर

बिक गये। अब घर मे कुछ नहीं था। हराम का माल वकीलो के पास पहुँच चुका था। रुपया इसी तरह आता है और इसी तरह चला जाता है। रामस्वरूप का रुपया भी चला गया।

जिस दिन रामस्वरूप मन्सूरी का बगला बेचने जा रहा था, रामअवतार रास्ते मे पहाड तोड रहा था। रामस्वरूप की नजर उस पर पड़ गई और रामअवतार ने भी उसे देख लिया। भाई उसके करीब से मोटर दौडा कर निकल गया। रामअवतार के दिल पर चोट लगी—हाथ काप गया। दुख और गुस्से की भावना से मजबूर इन्सान क्या कर सकता है? अमीर का गुस्सा तो नौकरो पर निकल जाता है पर गरीब का गुस्सा उसे ही खाने लगता है।

रामअवतार ने गुस्से से पत्थरको झझोड़ा। पत्थर पहाड़ से तो अलग हो गया, लेकिन उसके सीने से अलग न हो सका। थोडी देर उसने पत्थर को छाती से सहारा देने की कोशिश की, लेकिन अन्त में वह भारी पत्थर के नीचे आ गया। थोड़ी देर तक वह छटपटाया। कई बार उसने पत्थर हटाने की कोशिश की और जब न हटा तो उसे भगवान की देन समझ कर हिम्मत हार दी। उस पत्थर के नीचे थोड़ी सी कश्मकश के बाद खामोश हो गया उसका दिमाग धीरे-धीरे सो गया। सोते-सोते उसने लोगो की "बचावो", "भागो", "दौड़ो" की आवाजे सुनी। फिर क्या हुआ? उसे नही मालूम। बेहोशी मे उसे ऐसा अनुभव हुआ, जैसे भाई की मोटर का पहिया उसके ऊपर से गुजर गया हो और वह दब गया हो।

---

सुहागी जब मन्दिर से लौट कर आई, तो रामस्वरूप की बहू घर के दरवाजे पर खड़ी थी। उसने सास को देख कर दरवाजा बन्द कर लिया। रामी निकल कर बाजार जा रही थी। अपनी मालकिन की सास को देख कर पहले ठिठकी, फिर मालकिन के डर की वजह से आगे बढ़ गई। दो कदम चल कर सोचा, ऐसा भी डर काहे का, दो महीने से तनख्वाह भी नही दी। जो अपने घर वाले की मा पर घर के दरवाजे बन्द रखती है, वह अपने नौकर को क्या देगी। इतना सोच कर वह पलट आई। मा भी चौखट के बाहर ही बन्द दरवाजे के पास खड़ी थी। रामी ने आकर कहा—

"आज मालिक के फैसले की तारीख है।"

मा ने पूछा—

"क्या रामस्वरूप चला गया?"

"जी हा, दस मिनट भी नही हुये, अभी घर से निकल कर गये हैं। रास्ते मे आपसे मिले नही?"

"नहीं बेटा, मेरी ऐसी किस्मत कहा? मैं तो बेटे के मुखको तरस गई हूँ।"

यह सुन कर रामी की आखे भर आई।

"अच्छा! भगवान उसे सुखी रखे।"

इतना कह कर मा अन्दर चली गई। दरवाजे के अन्दर दादा खड़ा था। उसने शायद रामी की बात भी सुनी थी, इसलिये लौट कर बरामदे में रखे पलग पर जा बैठा। पगड़ी उतार कर खूँटी पर टाग दी, जैसे अब उसने बाहर जाने का इरादा बदल दिया हो। वह पहले जा रहे थे, अब क्यों लौट आये, सुहागी ने यह सब देखा और सोचने लगी, "दादा शायद

कचहरी जाने से कतरा रहे हैं। उन्हे मालूम नही होगा कि आज फैसला है। अब उन्हे कैसे पता चले ? नन्हा भी घर मे नही, गार्गी के साथ बाहर गया है। अब क्या करे ? दादा के साथ तो वह बात नही करती। अब क्या मर्यादा तोड कर उसे कहे कि वह कचहरी जाये, आज उसके पोते के मुकदमे का फैसला है ? यह सोचती हुई वह अन्दर चली गई। दादा ने माचिस जला-कर सूखा तम्बाकू सुलगाया और दो-एक कश खींच कर खासने लगा। मा ने मॅझली बहू से कहा—

"क्या अवतार ने आने को तो नही लिखा ?"

मॅझली बहू चावल बीन रही थी। उसने सिर उठाकर मा जी की तरफ देखा और नजर झुका कर फिर चावल बीनने लगी। उसे मा जी पर गुस्सा आ गया था कि मा के प्यार और इस घर के कारण उसका पति बाहर काम करने गया है। मा का पेट भरे, दादा तम्बाकू पिये, रामनारायण कालेज मे पढ़े, और वह रामअवतार, उसका प्यारा. जिसकी सेवा करना उसका धर्म है, वह दूसरों की सेवा का पुण्य कमाने परदेश मे रहे ! उसपर किसी ने यह खबर भी उड़ा दी कि वह वहा पत्थर तोड़ता है। यह रामस्वरूप ने ही उड़ाई होगी, उसके जेठ ने। बडा बुरा आदमी है। औरत-बच्चे को लेकर अलग हो गया और खानदान का भारी बोझ अपने छोटे भाई के सर रख दिया। यह बाते वह सोचती रही और सास उसके मुँह की तरफ ताकती रही।

"अरी बहू क्या पूछा मैंने ?"

सास ने बहू के विचारो का सिलसिला तोड़ दिया।

मॅझली बहू ने कहा—

"बता तो दिया, नही आई।"

उसने चावल का कंकड़ बीन कर उसे बाहर फेका और चावल केटली मे डालकर नल की ओर धोने के लिए बढ गई। बहू का मिजाज चिड़-चिड़ा हो गया है, सास ने समझा, लेकिन उसकी तरफ ध्यान नहीं दिया। थोड़ी देर के लिये जैसे बहते पानी में हवा से उड़ कर धूल आ जाती है

और फिर बह जाती है और पानी साफ हो जाता है, इसी तरह सास के दिल मे यह बात आकर चली गयी । जब बहू चावल धोकर वापस आई तो सुहागी ने कहा—

"देख बहू, वह चरनदास भी नहीं आया और रामअवतार भी नहीं आया। दोनो को लिखा था कि उनके भाई पर मुकदमा चल गया है, उन्हे आना चाहिए, लेकिन. . ।"

मॅझली बहू ने बात काटकर कहा—

"वह आकर क्या करते ? इतनी सर्दी मे मसूरी बैठे हैं, ताकि घर-वालों का पेट पले, अब अगर भाई के मुकदमे के लिये यहा आ जायेगे तो खायेंगे क्या हम लोग ?"

"हा, तू सच कहती है बहू, यह तो है ही। पर सुन, तेरे बड़े बाबू कचहरी क्यों नहीं जाते ?"

मॅझली बहू जो अब तक झल्ला कर बात कर रही थी और सास को गुस्सा दिलाना चाहती थी, चुप होकर मा की तरफ देखने लगी। मा ने कहा—

"आज बड़ी बहू, कलावती बडी दुखी होगी बेचारी ?"

यह सुनकर मॅझली बहू के गुस्से का पार न रहा। वह फूट कर रो पड़ी और रोते हुए बोली—

"और मैं सुखी हूॅ क्या, जिसका पति परदेश में मारा-मारा फिरता है ? मेरा सब कुछ लूट कर बड़ी बहू ही तो ले गई है, आपके चौधरी की बेटी । न वह लूट कर ले जाती और न आज हमे यह दिन देखना नसीब होता। जैसा कोई करता है, वैसा भरता है।"

मा को बहू से जवाब पाने की आशा न थी। एक तरफ पत्नी थी, दूसरी तरफ मा। पत्नी की नजर केवल अपने प्यार को देखती है, पर मा की नजर मे एक फैलाव रहता है। ममता किसी एक केन्द्र पर ठहर नहीं सकती। मा चुप हो गई।

दादा बाहर बैठा सास-बहू की बाते सुन रहा था । उसने डिबिया से नस्वार निकाल कर मुँह मे रख ली, पलंग पर रखी चादर से हाथ पोंछ लिया और फिर आसमान को तरफ देखा, सामने गाय बैठी जुगाली कर रही थी । दादा ने सोचा यह बेचारी भी दुखी है; और किसी के यहा जाती तो सुखी हो जाती यह सोचकर वह चुप हो गया । वह अधिक उदास हो गया ।

घटाघर की घड़ी ने नौ बजाये । गार्गी के साथ नन्हा अभी लौट कर नहीं आया था । रामअवतार भी नही आया । पास ही तो मसूरी है । ऐसा काम भी क्या ? एक दिन मे तो हम भूखे न मर जाते और वह चरनदास मुझे मा कहता है । सुहागी यह सोचते-सोचते दरवाजे पर झाक आई, वहा कोई नही था । दरवाजे को बन्द देखकर मा अन्दर जाने लगी । दादा को देखकर उसने बहू को आवाज दी ।

"मंझली बहू ! खाना तैयार हुआ कि नहीं, बड़े बाबू को कचहरी जाना है ।"

दादा यह सुनकर चौक गया । कचहरी ? दादा ने दिल मे सोचा, सुहागी उसे कचहरी जाने का इशारा दे रही है । दादा कुछ बोला नहीं । उसने नस्वार थूक दी । थोड़ी देर के बाद सुहागी थाली मे खाना परोस कर ले आई । दादा ने थाली की तरफ देखकर कहा—

"क्या मुझे कचहरी भेजना चाहती हो सुहागी ?"

सुहागी कुछ बोली नहीं, थाली चौकी पर रखकर हाथ धुलाने के लिए लोटा लेकर खड़ी हो गई । दादा ने कहा—

"सुहागी ! मै कचहरी नही जाऊँगा । मै उसकी सूरत नही देखना चाहता । उसने मेरे बेटे की इज्जत मिट्टी मे मिला दी है । बाजार मे जाकर देखो, लोग धनीराम के नाम पर थू . ...थू कर रहे हैं । मै कचहरी नही जाऊँगा—बिलकुल नही जाऊँगा ।"

दादा इतना कहकर उठ खड़ा हुआ । सुहागी ने लोटा रख दिया और बोली—

"तो फिर मै जाऊँगी कचहरी ।"

आज पहली बार बहू ससुर के सामने बोली थी ।

"तू जायगी ? तू .. ..तू ?"

दादा ने झल्ला कर कहा ।

और फिर गम्भीर आवाज मे बोला—"सुहागी ! हमारे घर की बहू-बटिया कचहरी नही जाया करतीं ।"

"मै अगर इस घर की बहू हूँ , तो मा भी हूँ । मै जाऊँगी ।"

इतना कहकर वह अन्दर चली गई ।

"तू जायेगी तू...?—क्या मैं मर गया हूँ ? बड़े बाबू मर गये है ? उसे मौत भी नहीं आती । मै मर जाऊ तो अच्छा है । जाता हूँ कचहरी ।"

इतना कहते-कहते पगडी सिर पर रख बिना खाये-पिये घर से बाहर निकल गया । जाते हुए ससुर को सुहागी घूघट की ओट से देख रही थी, उसकी आखों से झर-झर आसू बह रहे थे । अपने दुख पर या ससुर की हार पर . . . ?

यह पता नहीं ।

छोटी बहू का दिल आज जाने कैसा हो रहा था। रसोई का काम निपटा कर भी वह रसोई से बाहर न निकल सकी। उसका दिल उमडा-उमडा-सा चला आता था। बिना किसी बात के ही आखो के सामने के दृश्य धुँधले हो रहे थे। वह दिन मे कई बार अपने आचल से अपनी आखे पोछना भी भूल गई।

सुहागी का मन भी आज घर मे नही था। एक दिन पहले वह बरामदे की सीढियो पर बैठी रामस्वरूप का इन्तजार करती थी कि वह अपने बेटे के जन्मदिन पर अपनी मा को बुलाने आयेगा, आज वह फिर उसी तरह बरामदे की सीढ़ियो पर पेडाखान के जाने के बाद जो बैठी, तो बैठी ही रह गई। उसके चेहरे पर बड़ी शाति नजर आ रही थी, पर अन्दर की हालत भगवान जाने। वह शायद सोच रही थी कि इसी बरामदे मे रामस्वरूप ने चाबियो का गुच्छा लाकर फेका था और कहा था—"हा, मै रावण हूँ, ब्लेक मार्केट करता हूँ। मेरा तुम्हारा निभाव नही हो सकता, मुझे अलग कर दो।" और फिर उसने आगन मे यह दीवार खड़ी कर दी थी। सब कुछ बाट लिया था, भाइयो का हिस्सा भी उसने हड़प कर लिया। मेरी ममता को भी उसने दु ख दिया। फिर मै उसके लिये इतनी दु खी क्यो होती हूँ? ऐसी बाते सोच-सोच कर उसने दिन मे कितनी ही ठण्डी सासे ले डाली, किन्तु उसके अन्दर जो दुःख की आग जल रही थी, वह ठण्ढी न हुई।

अभी कल की बात है, रामस्वरूप के घर मे डोमनियो के गीत गूँज रहे थे, और आज वहा कैसी चुप्पी है। शायद वह घर मे नही, मगर मुन्ना तो होगा। उसकी भी आवाज नही आ रही। रामअवतार कहा रह गया, क्यो नहीं आया? चरनदास भी नहीं आया। क्या सचमुच रामअवतार भाई के घर बाट लेने पर उससे अलग हो गया? क्या उसने

अपना दिल भी फेर लिया ? नही - नही, बाहर की दुनिया तो लोग बाट सकते हैं, अन्दर की दुनिया कैसे बट सकती है ? भावना बदल सकती है बट नहीं सकती। पर मेरा अवतार तो बदल भी नही सकता। ऐसी बात सोचते - सोचते शाम हो गई। आगन के पेडो की छाव लम्बी हो गई। आज रामस्वरूप के घर से भी धूप सिमट कर पिछवाड मे जा छुपी थी।

किसी ने धीरे से दरवाजा खोला और सुहागी की यादो के धागे सिमट गए। उसका दिमाग कुछ जानने को पल भर के लिये चुप हो गया। वह फटी - फटी आखो से आने वाले आदमी को देखने लगी।

चरनदास भी, जो कहकहे और हँसी से घर को आनंदित कर देता था, आज चुपचाप आकर अपनी मौमी के पास खड़ा हो गया। न चेहरे पर हँसी, न मुँह में बात, लेकिन पेड़ाखान चुप न रह सका। उसने आगन मे खड़े होकर देखा कि उसकी बहू कहा है। वह कचहरी से एक खबर लेकर आया था जिसे वह किसी को नहीं बता सकता था, सिवाय सुहागी के, और सुहागी उसे बरामदे मे बैठी नजर आ गई। उसने कहा—'सुहागी! फैसला हो गया। तेरे बेटे को छ महीने की और कैद होगी। न ढाई हजार होगा, न तेरा बेटा छूट कर आयेगा—" और फिर उसने पगड़ी टागते हुए कहा—"अच्छा नाम रोशन किया है तेरे बेटे ने मेरे बेटे का!"

सुहागी अपने ससुर की आखिरी बात सुने बिना ही बरामदे से उठकर अन्दर की ओर चली गई। और कहा जाती? वह अपने दिल का दु:ख किससे कहती? वह अलमारी में रखे हुए सोने के ठाकुर के सामने जाकर बैठ गई। ऊपर धनीराम की पगड़ी टंगी थी और तस्वीर भी। सुहागी कभी भगवान को देखती और कभी अपने पति की तस्वीर को। तस्वीर चुप थी, भगवान चुप था, और सुहागी भी चुप थी।

रामअवतार मसूरी अस्पताल मे पड़ा हुआ अपने घर की हालत पर विचार कर रहा था। उसकी पसलिया टूट चुकी थीं, और डाक्टर ने उसे

दो महीना अस्पताल में रहने का आदेश दिया था। रामअवतार अब यह सोच रहा था कि दो महीने तक उसके घरवाले क्या खायेंगे? कैसे जिन्दा रहेंगे? इतने में उसे खबर मिली कि उसका बड़ा भाई सजा पा गया। एक नर्स एक डाक्टर को आज की यह खबर सुना रही थी। डाक्टर "धनीराम एण्ड सन्स" केमिस्ट की दुकान से भली भांति परिचित था। उसे इस बात का बहुत दुःख हुआ, समाचार पत्र पढ़ते हुए डाक्टर ने कहा—

"देखो! इस आदमी के बाप ने काले बाजार के विरोध मे जान गवा दी और उसका बेटा आज काले बाजार के जुर्म मे कैद हुआ।"

रामअवतार बिस्तर पर पडा उनकी बात सुन रहा था। उसके सामने अपना घर, धनीराम, मा, पेडाखान सब चलते-फिरते नजर आने लगे। मा के माथे पर जो तिलक चमकता हुआ नजर आता था, आज वहा पर एक काला धब्बा दिखाई दे रहा था, और बाप की पसली से उसने जो लाल खून बहता हुआ देखा, वह भी उसे काला दिखाई दे रहा था, वह खून जिससे रामस्वरूप पैदा हुआ है। उसकी पसलियो का दर्द कम होने के बजाय और बढ़ने लगा था और डाक्टर को आज चिंता होने लगी थी कि इस मरीज का क्या होगा, क्योंकि मरीज का स्वास्थ्य उसके विचारो के साथ बढता-घटता रहता है।

उसकी आखों मे आसू छलक आये, वह चुपचाप पलंग पर पडा कराहता रहा।

लेकिन रामअवतार की जिम्मेदारियो ने उसे मरने नहीं दिया। वह थोड़े दिनो में ठीक हो गया और डाक्टरो ने उसे अस्पताल से छुट्टी भी दे दी।

रामअवतार जब घर पहुँचा तो मा सीढ़ियोंके पास खामोश बैठी थी। दादा घर पर मौजूद नहीं था। चरनदास भी चुपचाप बैठा था। मा ने राम-अवतार को देखा, तो चौक पड़ी। उसकी बाह गले में पड़ी थी।

"हाय मा, मर गई। क्या हुआ तुम्हे?"

"कुछ नहीं, जरा पहाड़ से फिसल गया था।"

मा ने उसके चेहरे की तरफ देखा और कहा—

"घर में खत तक नही लिखा। इधर तुम्हारे बडे भाई....."

इसके आगे मा कुछ बोल न सकी। मंझली बहू दरवाजे की आड़ से अपने पति को देख रही थी। उसकी हालत देख कर कौशल्या की आखो में आसू छलक आये।

"दादा कहा है ?"

रामअवतार पूछता हुआ अन्दर चला गया।

चरनदास कुछ बोला नही। आज उसकी वह शोखी मर गई थी, जो रामअवतार के देखते ही उबल पड़ती थी। उसने मौसी के चेहरे की तरफ देखा, जो दुख की लकीरो से भरा हुआ था। इस वातावरण मे उसका दम घुटने लगा। वह, जो हमेशा खुश रहने का आदी था. इस वातावरण मे रहे तो कैसे ?

रामअवतार मा की सूरत देख कर उसके दुख को समझ गया, लेकिन कुछ बोला नहीं। उसे साफ तौर से पूछने की हिम्मत न हुई।

आदमी—और अच्छा आदमी—हर बुरी बातो से दूर रहने की कोशिश करता है। वह बुरी खबरो से भी परहेज करता है। अब वह जेल की खबर को मा के मुँह से सुन कर उसके चेहरे को आसुओ से धुलता नहीं देखना चाहता था, इसीलिये चुप साध गया।

रात को कौशल्या ने सब हाल सुनाया—

"जेठ जी जेल गये हैं।"

यह तो वह जानता था, पर जुर्माना ऊपर से है और अगर न दे सके तो ज्यादा जेल भुगतनी पड़ेगी, यह उसे मालूम नहीं था। रामअवतार परेशानी मे खो गया। वह करे तो क्या करे ?

जब से गार्गी के जेवर बिके थे, वह मैके नहीं जाती थी। कई बार बुलावा आया, लेकिन गार्गी ने टाल दिया। जाती तो कैसे ? उसके पास वे गहने नहीं थे, जो वह दहेज में लेकर आई थी। इन नँगे

हाथों से मैके जायेगी, तो ससुराल की इज्जत पर धब्बा लग जायेगा। इसी लिये वह चुप साध गई।

रायसाहब, एक रात बुरी तरह खासने लगे। गर्मियों के दिन थे, राय साहब छत पर ही सोते थे। उनकी खासी पर अडोस-पडोस के लोग जाग गये। किसी ने कहा—

' अदरक के रस मे शहद मिला कर दो।"

किसी ने कुछ कहा और किसी ने कुछ दूसरी ओषधि बताई। लेकिन उनकी खासी तो जसे नदी का बाध था, जो टूट गया, तो फिर रोके नही रुकता। वह खासते रहे। गार्गी सामने की छत पर अँधेरे मे खडी उनकी खासी की आवाज सुन-सुन कर परेशान हो रही थी। वह पड़ोसियो की तरह दूर खड़ी थी, लेकिन उनकी तरह कोई इलाज नही बता सकती थी। सास ने आकर गार्गी से कहा—

"तेरे पिता जी की हालत बहुत ज्यादा खराब है और तू यहा छत पर खड़ी देख रही है, जायेगी नहीं ?"

गार्गी ने एक बार सास की तरफ बडी-बड़ी आखे उठा कर देखा और क्षण भर तक देखती रही, जैसे कह रही हो, "मा जी, आप मेरे दिल की हालत तो जानती हैं, जाऊं तो कैसे जाऊ ?" सास ने आगे बढ कर उसके सर पर हाथ फेरते हुए कहा—

"बेटा! तेरी बात मेरी समझ मे नही आती। यह पास मकान है, लेकिन शादी के बाद तू एक दिन गई थी, फिर तू क्यों नहीं गई ? आखिर क्यो ?"

गार्गी ने कहा—

"कोई खास बात नहीं, योही अब उस घर मे जाने को जी नहीं चाहता।"

मा ने कहा—

"एसी पत्थर दिल सन्तान तो देखी नहीं बेटा। आखिर बात क्या है ? क्या तू इस शादी पर नाराज है ? तुझे यह घर पसन्द नहीं ?"

अब माने सच्चाई कुरेदने के लिये फावडा उठा लिया था। गार्गी कुछ कहने के बजाय चुप हो गई, शायद अन्धेरे मे उसकी आखे भीग गई होंगी। इतने मे रायसाहब के घर से फिर बड़े जोरों से खासने की आवाज आई। सास ने कहा—

"देख, क्या हाल हो रहा है। सन्तान दुख में काम आयेगी, यह सब हमेशा सोचते हैं, और अगर दु:ख मे सन्तान इस तरह किनारा कर ले, तो इन्सान को कितना बडा धक्का लगता है, इसका अन्दाजा तू नही कर सकती।"

"मा जी, मैं कैसे जाऊँ ? अगर उन्होने पूछा तेरे जेवर कहा गये, तो क्या जवाब दूँगी ? मुझे मा-बाप के दुख के साथ उनकी इज्जत भी प्यारी है, जिसके लिये अग्नि को साक्षी बना कर मैने सौगन्ध खाई थी।"

मा उसके आसुओं में बह गई। उसके गालों पर भी आसुओं की धारा बहने लगी। सब दुखी हैं, अब सास बहू को कैसे कहे कि तू अपना कर्तव्य छोड दे।

आखिर मा ने वहा—

"बेटा, इस बीमारी में वह तुझसे गहनों के लिये नही पूछेंगे और अगर पूछें, तो मेरा नाम लें लेना कि सास ने उतरवा कर अपने पास रख लिया है, या बेच दिया है। जब मुझसे पूछेंगे तो मैं जवाब दे लूँगी। तू जा।"

गार्गी चुपचाप खड़ी रही, और बार - बार उस छत की तरफ देखती रही, जहा रायसाहब खांस रहे थे। वहा डाक्टर ने आ कर एक इन्जेक्शन लगा दिया और रायसाहब सो गये। गार्गी की मा उनके सिरहाने बैठी थी अकेली। सब नौकर चाकर सो गये थे। पड़ोस की खिड़किया भी बंद हो गई थीं। रायसाहब की पत्नी गहरी सोच में डूबी हुई थीं। ऐसे समय गार्गी आकर कुर्सी के पास खड़ी हो गई। मा ने उसकी तरफ देखा और देखती रही। उसका चेहरा उतरा था, हाथ काप रहे थे। आखों में वीरानी के साथ लज्जा का प्रभाव उमड़ रहा था। हाथ साड़ी के अन्दर छुपे हुए

थे। मा - बेटी पहले तो एक - दूसरे को देखती रहीं, फिर लिपट कर रोने लगीं।

उनकी कोई चीख नही निकली, मुहल्ले वालो ने सिसकियां भी नहीं सुनीं। प्यार और ममता जब आपस मे रूठकर मिलते हैं, तो आवाज पैदा नही होती। रात भर इन्ही खामोश आसुओ मे दोनो भीगती रहीं।

रात के आखिरी पहर मे जब रायसाहब की आख खुली और दवा का असर खतम हुआ, तो उन्होने पानी मागा। गार्गी ने गिलास भरकर दिया। रायसाहब ने अन्धेरे मे बेटी को देखा नहीं, समझे गार्गी की मा है। बोले—

"गार्गी नहीं आई न? देख लिया तुमने, इन रिफ्यूजियों ने कैसा लूटा है मुझे। यह सब कालेबाजारी हैं।"

गार्गी कुछ कहना चाहती थी, लेकिन उसका गला रुध गया—राय साहब ने पानी पीकर गिलास गार्गी के हाथ में दे दिया और कहा—

"अच्छा! होगा तो वही, जो किस्मत मे लिखा है। मुझे तो ऐसा लगता है गार्गी की मा, जैसे वह मेरी अर्थी पर भी नही आयेगी।"

गार्गी से और सहा न गया वह यकायक बोल उठी—

"पिता जी!"

रायसाहब चौक पड़े, और उठ कर उन्होने बेटी को सीने से लगा लिया।
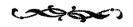
कल रामस्वरूप की कैद का आखिरी दिन है। अगर किसी ने जुर्माना भर दिया, तो वह छूट जायेगा, वरना जुर्माने मे उसे छः महीने और कैद भुगतनी पडेगी। चरनदास और रामअवतार के बीच मे खुसर-फुसर होती रही कि रुपया कहा से आये ?

रात को एक बार फिर पहले की तरह पंचायत बैठी। रामअवतार का ख्याल था, कहीं से रुपया लाकर भर देना चाहिये। दादा ने कहा था—

"हमारे खानदान से उसका कोई सम्बन्ध नही, जिसने हमें बरबाद किया—ब्लैक मारकिट का धन्धा किया, उसको फल भोगने दो।"

चरनदास अन्दर से तो दादा के पक्ष में था. लेकिन ऊपर से मा का जी रखने की खातिर कुछ बोलता नही था। सुहागी ने कहा--

"उसे तो छुड़ाना ही चाहिये, मकान बेच दो।"

इस पर दादा झल्ला गया। बोला--

"आधा मकान तो वैसे ही वह हथिया कर ले गया है. आधा जो बाकी है उसे बेच कर उसका जुर्माना भर दो, फिर बहुओं और बच्चों को लेकर सड़क पर जा बैठो।"

चरनदास ने मौसी को खुश करने के लिये कहा—

"तो जो लोग सड़कपर बैठे हैं, क्या वह आदमी नहीं होते ? आज लगभग आधा हिन्दुस्तान, जो रिफ्यूजियो के रूप में आया है, फुटपाथ पर ही गुजारा कर रहा है, हम भी तो उसी कबीले के लोग हैं।"

दादा यह बात सुनकर आगबबूला हो गया।

दादा बोला—

"फुटपाथ पर बहू - बेटियों का सोना घनश्याम के खानदान में बुराई नही होगी, पर पेड़ाखान के खानदान में यह ऐब समझा जाता है।"

घनश्याम चरनदास के दादा का नाम था। अगर कोई दूसरा आदमी होता तो बिगड़ उठता, लेकिन चरनदास ने हँसकर कहा--

"घनश्यामदास का खानदान तो इस देश को पसद ही नही करता, जहा धर्म और ईमान उलझते है, इसीलिए तो उसका पोता चरनदास अमेरिका जा रहा है ।"

दादा ने कहा—

"चुप रह ओए तू। नही तो मै कुछ और कह बैठूंगा, अमेरिका का पुत्तर !"

लेकिन चरनदास चुप न रहा, बोला—

"मुझे कहने के बजाय अगर रामस्वरूप को कहते, तो आज इस झगडे की नौबत ही क्यो आती। मा की ममता एक तरफ है घर की छत एक तरफ है, जो तुम्हें अधिक प्यारी हो वही देख लो और वैसा करो ।"

चरनदास ने बात खत्म करते हुए कहा।

दादा ने दृढता से कहा—

"छत नही बिकेगी।"

रामअवतार बोला—

"जैसा मा कहे, वैसा करना चाहिए।"

मा अब सारी बात समझ गई थी, एक रामस्वरूप के लिए सारे घर को बेघर करना कोई अकल की बात नहीं। मां ने ममता दबाने की कोशिश की और ज्यादा बात बढ़ाने के बजाय सिर्फ इतना कह कर ही उठ गई—

"जो मेरी ममता की किस्मत मे लिखा है, वह होगा, वही होकर रहेगा। मकान नही बिकेगा।"

चरनदास ने कहा—

"अब घरवालो में थोडी-थोडी अक्ल आती दिखाई दे रही है। पहले सब निरे भावुक हो रहे थे। जाने वाला तो जेल चला गया, पन्द्रह

दिन काटे तो क्या, और छः महीने काटे तो क्या ? पेड़ाखान के मुँह पर जो कालिख लगनी थी, लग गई। क्यो दादा ?"

चरनदास ने जरा वातावरण का भाव बदलने के लिये यह बात कही।

पेड़ाखान ने कहा—

"बकवास मत कर ओए। तुम अंग्रेजी पढ़े लिखे आदमी 'शोरापुश्त' होते हो, शरारत पैदा करते हो, बिलकुल अंग्रेजों की सी सीख है तुम्हारी। ससुरे जाते - जाते भाइयो का बटवारा करके चले गये। मै कहता हूँ कि यह बटवारा कभी नही रह सकता। यह धर्म के खिलाफ है, प्रकृति के विरुद्ध है, इन्सानियत की गिरावट है। तुम सब देख लेना, एक दिन वही लोग आयगे और आकर हमसे कहेंगे तुम घर चलो, उस घर में जिस घर को छोड़ कर आये हो।"

चरनदास ने कहा—

"रामस्वरूप तो एक दिन भी नही आया काका, जो तुम्हारे खून से पैदा हुआ है।"

बात बड़ी तीखी थी, पर थी सच्ची। दादा ने पलट कर चरनदास को देखा, पर बोला नहीं।

अँगौछा कँधे पर डालकर घर से बाहर निकल गया।

चोर ..चोर की आवाजे गूँजने लगीं—'कोई गया है। कोई गया है–दीवाल फादकर गया है।'

रामअवतार सीढ़ियों पर खड़ा चीख रहा था—दादा ने भड़भड़ा कर उठते हुए अपनी लाठी सम्भाली और फौरन बोला--

"अरे यहा चोर क्यों आयेंगे, अपनी मेहनत बेकार करने ? सामने रायसाहब का घर उन्हें दिखाई नहीं देता ?"

लोग इधर-उधर से जो अपनी खिड़कियों और मुण्डेरों से उचक-उचक कर देख रहे थे, सुनकर हँसने लगे। पेड़ाखान फिर बोला, सच तो कहता हूँ शहद की मक्खी भी उसी बगीचे मे जाती है, जहा फूल हो। बिल्ली भी उसी घर मे घुसती है, जहा दूध का प्याला नजर आये, लेकिन चोर क्या बेवकूफ होगा, जो इस घर मे आयेगा, जिसमे न तन पर कपड़ा न पेट मे रोटी।

घर मे सब जग गये थे, लेकिन किसीने उठकर यह देखने की कोशिश नहीं की कि गया क्या है ? गरीबी तो ऐसी चीज नही, जिसे कोई चुरा कर ले जा सके। इन्हीं बातो मे सुबह हो गई। रामअवतार ने अन्दर जाकर सिर पर पगड़ी रखी और यह कह कर बाहर चलने को तैयार हुआ--

"जरा पुलिस स्टेशन मे रिपोर्ट तो कर आऊँ।"

दादा ने कहा—

"जाने दो, अन्दर है क्या ? और गया क्या ?"

रामअवतार ने कहा—

"कुछ न गया हो, लेकिन आगन में चोर के पाव के निशान तो साफ दिखाई दे रहे हैं और दीवार की मुण्डेर भी उखड़ी पड़ी है। आज नही है, तो नही ले गया, कल होगा तो ले जायेगा।"

इतना कह कर रामअवतार निकल गया।

घर से निकल कर वह सीधा हर्जीमल की पेढ़ी पर पहुँचा और जेब से सोने के ठाकुर निकाल कर कहने लगा —

"सेठजी ! यह ठाकुर सोने के हैं। इस पर मुझे ढाई हजार रुपये चाहिये। जब रुपया आयेगा तो छुडा कर ले जाऊँगा।"

हर्जीमल ने कहा--

"भैया, भगवान की कीमत तो कोई नही दे सकता, पर सोने की कीमत ढाई हजार जँचती नही।"

यह कहते-कहते हर्जीमल ने ठाकुर हाथ में उठा कर जाचे और दिल में खुश हुये। सोना तो शुद्ध है और ठाकुरजी भी काफी भारी हैं, इनकी पूजा भी खूब हुई होगी। फिर बोले--

"तुम्हे करना क्या है ढाई हजार का ? अभी उस दिन तो पाच हजार तुम्हे देकर आया था।"

वह तो शादी मे उठ गये। अब एक ऐसी विपत्ति आ पडी है कि १० बजे से पहले-पहले मुझे ढाई हजार रुपये चाहिये।"

हर्जीमल ने कहा--ऐसी बात है, तो ले जाओ। भगवान को लेकर आये हो, तुम्हे निराश करना अच्छा नहीं।"

इतना कह कर सेठ जी उठ कर अन्दर चले गये। रामअवतार का दिल धड़क रहा था—"क्या हो'—क्या न हो" ? कही अन्दर जाकर सेठजी की नीयत बदल गई और कह दिया कि ढाई हजार का माल नहीं है, तो क्या होगा ? यह सवाल उसकी आखों के सामने घूम रहा था। होंठ सूख गये। सेठ जी को पैसे लाने तक वह जिन्दगी और मौत की कशमकश में था। सामने दीवाल पर टॅगी घड़ी टिक-टिक चल रही थी। सेठ जी को अन्दर गये अभी पाच मिनट भी न हुये थे, लेकिन रामअवतार के सर पर से कई वर्षों का बोझ गुजर गया।

इतने मे मुनीम जी भी आ गये। आते ही वे अपनी चौकी के सामने जाकर झुके, उस स्थान को प्रणाम किया। राम नाम लेकर बैठते ही बोले—

"सुबह-सुबह आप क्यो आ गये जी ?"

रामअवतार ने कहा—

"सेठ जी अन्दर गये हैं।"

"अच्छा ! अच्छा !"

मुनीम जी मुस्कराते हुए बोले—

"अन्दर गये हैं। मैं समझा था, अभी अन्दर से बाहर आये ही नहीं। और सुनाओ सब खैरियत है न ?"

यह समझ कर कि रामअवतार की मुलाकात सेठ जी से हो गई है, मुनीम जी का बात करने का ढंग बदल गया। रामअवतार बार-बार खिड़की

की तरफ देख रहा था और उस दरवाजे की तरफ, जहा से सेठ जी अन्दर गये थे आखिर सेठ जी आये और बोले—

"हा भई ! यह लो ढाई हजार रुपये ।"

रुपये लेकर बिना गिने ही रामअवतार बाहर की तरफ भागने लगा। मुनीम जी ने कहा—

"भागते क्यों हो भाई, खाते मे दस्तखत तो कर दो ।"

सेठ जी ने इशारे से मना कर दिया और बोले—

'जाने दो ! वह तो घर का ही आदमी है, फिर कभी दस्तखत करा लेंगे ।"

रामअवतार ने एक बार पलट कर देखा और फिर भाग गया । उसके जाने के बाद सेठानी जी बाहर निकल कर आई और बोली—

"हाय ! आपने उससे बात तक नहीं की कि हम यह ठाकुर जी वापस नही देंगे ? मै तो अभी जाकर पूजा मे बैठाये देती हूँ—फिर न कहना ?"

सेठ जी ने कहा—

"बैठा ले न भागवान, कौन रोकता है ? अगर उसे कहता कि ठाकुर की कीमत ले लो, तो कई हजार का घाटा खाना पड़ता और तुम इसको बिना लिए छोड़ती नही । मै तुम्हारी जिद से परिचित हूँ । और अगर वह अकड़ जाता, तो मुँह मागे दाम देने पड़ते । अब न लिखा, न पढ़ी । क्यों मुनीम जी ?"

"हा जी ।"

मुनीम जी फौरन बोले—

"और अगर आ भी गया तो ठाकुर पीतल के थे या सोने के, कौन जानता है ? न आप जानते हैं, न मै ।"

ठीक उसी समय सेठानी जी का मीठा भजन सुनाई दिया—

"घर आये गिरधारी . ...मै नाचूँगी ।

घर आये श्यामबिहारी . ..मै नाचूँगी ।

नहा धोकर, चदन घिस कर सुहागी ने अलमारी के पट खोले कि ठाकुर जी की पूजा करे।

"हाय मेरे ठाकुर जी !" कहकर बेहोश होकर गिर पडी।

घर मे हाय-हुल्लड़ मच गया मँझली बहू ने छोटी बहू को पुकारा, दादा भागा। अब पता चला कि घर में और किसी का कुछ हो या नहीं, मा का जरूर कुछ था। वही चोर ले गया है।

छोटी बहू ने कहा—

"भगवान करे उसके हाथ टूट जायँ, वह अपनी जवानी से चला जाये, उसे कभी सुख नसीब न हो।"

छोटी बहू की गालिया सुन कर मँझली बहू का कलेजा धड़कने लगा। जाने क्यो उसका दिल कहता था कि कही उन्होने ही यह सारा ढोग न किया हो ? रात को मुझसे पूछा तो था, मा ठाकुर की अलमारी में ताला डालती हैं या नहीं। इसकी वजह क्या थी ? मँझली बहू समझ गई कि वह क्यों सवेरे से गायब हैं। रात को चिल्लाये भी वही थे। यह सब उन्होंने ही किया होगा। छोटी बहू गालिया दिये जा रही थी—

"उसके घर में झाड़ू फिर जाये. जो चुरा ले गया ठाकुर जी को। मां जी, देखना, ठाकुर जी उसके घर को तबाह करके रहेंगे।"

मँझली बहू से यह सहन न हो सका। उसकी आखे डबडबा आईं, और वह नन्हे को सीने से लगाये रसोई मे चली गई। उसे रामअवतार पर गुस्सा आ रहा था। क्या वह इतने गिर गये हैं ? अपने ही घर में चोरी कर डाली ? वह तो ऐसे नहीं थे। मंसूरी जाकर रहे थे न। वहा और क्या होगा ? कौन जाने वहां किसी राड के चक्कर मे उलझ गये हो ? उसी के लिये चोरी की होगी, फिर हाथ बधा हुआ है, पसलियो में पलस्तर लगा है, इस हालत में भी वह रात को उठकर चोरी करके भाग गये। हे राम. इन मर्दा को कैसे - कैसे फरेब आते हैं। अब तो इस घर में जीने का भी धर्म नहीं है, जहर खाकर सो रहूँगी। वह एकबार घर आये, तो उन्हीं के सामने पुड़िया फाक लूँगी।

रायसाहब की बीबी भी भाग कर घर में आई कि समधिन बेहोश हो गई हैं। उनके घर मे चोरी हो गयी है और चोर ले गया है—सोने के ठाकुर जी। मुसीबत में भी किस - किस तरह सॅभाल के रखे थे उसने यह ठाकुर।

जो आया, उसने अफसोस किया। सब इस पर दुखी हुए। और जो औरते आई, उन्होने दो - चार गालिया जरूर दी। मॅझली बहू सिर झुकाये घर के काम-काज मे लगी रही और गालिया सुनती रही।

"अब मै नही जिऊॅगी। मेरा समय आ गया है। मेरे ठाकुर मुझसे रूठ कर चले गये। अपनी एक निशानी भी छोड़ गये थे, वह भी चली गई। अब क्या जीना? अब नही जिऊॅगी।" सुहागिन कह रही थी।

दादा घर मे मुहल्ले की औरतों को देख कर दुबका बैठा था। क्या करे? सोचता था रामअवतार कहा गया? वह आ जाये, तो आज ही इस घर को छोड़ कर हरद्वार चला जायेगा। वहां जाकर मजूरी करेगा, हर की पौड़ी पर रात को पड़ा रहेगा। अब आखिरी वक्त है, धनीराम चला गया और मैं बैठा हूँ, भगवान का कितना अन्याय है।

रामअवतार का बच्चा, घर का यह कोहराम सुन कर परेशान हुआ जा रहा था—"दादी लोती है, क्यो? मा बोलती नही, किस लिये?" वह बार-बार अपनी मा से जाकर पूछता था—

"दादी मा क्यों लोती है? ठाकुल कहा चले गये?" मा कहती क्या, चुप होकर उसकी तरफ देखती। उसको कैसे कहे कि तेरे बाप की करतूत पर आसू बहा रही हैं। अन्त मे बच्चा मायूस होकर बाहर दादा के पास गया और दादा से पूछने लगा—

"ठाकुल कहा चले गये, बले बाबू?"

"ठाकुर जी हमसे रूठ गये बेटा।"

इतना कह कर दादा ने नन्हे को अपनी गोद मे बिठा लिया। उसका दिल ममता से भर गया, वह उसे छोड़ कर कैसे जायेगा? हरिद्वार मे

भगवान के करीब तो ही जावेगा, परन्तु इससे जो दूर हो जायेगा। यह भी तो भगवान का रूप है।

चरनदास कल से ही कहीं गायब था। कहा गया, कोई नही जानता था वह इस उदासी से घबरा कर कहीं शान्ति के लिये जा बैठा था। हँसोड़ आदमी उदास वातावरण में एक मिनट भी टिक नही सकता। उसे रस चाहिये, एक मजा चाहिये और अगर रस नहीं है, तो जिन्दगी फीकी, बेरंग, बेमजा। और चरनदास तो ऐसा आदमी था, जो हर जगह कोई न कोई मजा पैदा कर लेता था। लेकिन यहा तो सब लोग उदासी और परेशानी से शर्त बाधे बैठे थे। इनमे मजा पैदा करना कोई आसान काम नहीं था। इसीलिये चरनदास मसूरी चला गया। उसने सोचा कल रामस्वरूप के जुर्माने की तारीख गुजर जायेगी, तो धीरे-धीरे घर मे शान्ति आ जायेगी। फिर मन्सूरी से आकर मौमी को समझा-बुझा कर थोडे दिनो के लिए दिल्ली ले जाऊँगा।

आज वही जुर्माने की तारीख है। रामस्वरूप की रिहाई या छः महीने की कैद का फैसला ढाई हजार रुपयों के नीचे दबा है। अगर यह रुपयों की ढेरी सरकार के खजाने मे जमा हो गई, तो रामस्वरूप के हाथ मे उसके रिहाई का परवाना दे दिया जायेगा, वरना जेल की चक्की की खूँटी तो उसके हाथ में है ही।

"रा मस्वरूप वल्द धनीराम !"

जेल के वार्डर ने काम करते कैदियो के बीच आकर जोर से पुकारा ।

एक आदमी चक्की छोड कर खड़ा हो गया। उसकी दाढी बढी हुई थी. बदन पर खद्दर का कुरता था और कमर मे पायजामा खद्दर का, वह भी घुटनों तक । ब्लैक के रुपयो से अंग्रेजी सूट सिलवाने वाला रामस्वरूप आज इस वेष मे जेल - वार्डर के सामने खड़ा था ।

"इधर आओ, आज तुम्हारी रिहाई है ।"

रामस्वरूप को 'रिहाई' पर विश्वास नहीं हो रहा था ।

बाकी सब कैदियोने उसकी तरफ देखा । किसी पुराने कैदी ने कहा—

"बस ? कुल इतनी कैद लेकर आये थे ? अभी तो जेल के कानून भी सीख नहीं पाये और छोड़कर चल दिये ।"

और फिर जाते हुए वार्डर से उसने पुकार कर कहा—

"इससे पैसे ले लेना जमादार पान-बीड़ी के काम आयेंगे ।"

जो वार्डर उसको ले जा रहा था बोला—

"सुनते हो ? यह क्या कहते है, इनके पैसे देते जाओ ।"

रामस्वरूप ने कहा—

'पैसे कहा हैं भैया ? मै तो सोचता था कि मेरा जुर्माना कौन देगा । जरा देखना तो जुर्माना किसने भरा है, कागज पर लिखा होगा ।"

जमादार ने कहा—

"आम खाने से मतलब है तुम्हें या पेड़ गिनने से ? जल्दी चल, जल्दी । वहा जेलर साहब तेरा इन्तजार कर रहे हैं; और देख, जो तेरे रिश्तेदार आये हैं, उनको कह देना, वार्ड नंबर १५ में अगले के पास

खड़ा रहूँगा, मुझे जो उनकी जेब मे हो वह दे जाये, तुम्हारे कैदी भाइयों के लिए ।''

दरवाजे के बाहर रामस्वरूप की पत्नी अकेली खड़ी थी घूँघट निकाले । जो भी जेल का आदमी अन्दर जाता था, उसीसे कहती थी--

'मुझे उनसे मिलना है ।'

इतने मे जँगले के अन्दर रामस्वरूप नजर आ गया । दोनो ने एक-दूसरे को देखा । रामस्वरूप समझ गया । कलावती ने जुर्माना भरा है, और कौन भरेगा ? सब छोड़ जाते हैं । पूरे समय से 'रिहाई' की सारी दफ्तरी लिखापढ़ी के बाद रामस्वरूप बाहर आ गया । कलावती ने डबडबाई आखो से पति की तरफ देखा, जिसके चेहरे पर अपराध की मोहर स्पष्ट थी और शर्मिन्दगी को मिटाने के लिए झूठी मुस्कान उसके ओठो पर उभरती और रह जाती थी । इन थोड़े-से दिनो मे ही इसकी आखो के नीचे स्याह हलके नजर आने लगे थे । चेहरे की रौनक दूर होगई थी । और ब्लैक के रुपये की स्याही, उसकी आत्मा की स्याही, उसकी हवस की स्याही, सब अन्दर से निकल कर उसके चेहरे पर उभर आई थी । वह लज्जायुक्त हँसी हँसने की कोशिश करता हुआ कलावती के सामने गया और बोला--

"तुम आई हो ?"

"और कौन आता ?" इतना कह कर वह फूट पड़ी ।

"और कौन है हमारा ? तुम्हारी माँ कल रात घर मे आई थी और कह रही थी मकान बेचदो तुम, जुर्माना भरने के लिये । वह हमे अपने साथ रहते नही देख सकते । और मै तो कब की चली गई होती दिल्ली, पिताजी आये थे, लेनेके लिये । लेकिन आपको यहा छोड़कर मै कहा जासकती थी । तुम्हारे घरवालों ने मुझे बहुत दुःखी किया है ।" उसने इतना कहते-कहते अपने आसू पोछ लिए । "हा, और जब मैंने मकान बेचने से इन्कार किया तो मुँह बनाकर चली गई । जाते-जाते कहती गयीं, 'ऐसी औरतें इस युगमे देखी हैं, जो पति को जेल में रखना पसंद करती है ।' बताइये, आपको मैंने जेल में भेजा है ?"

इतना कहकर वह फिर फूट पड़ी। रामस्वरूप ने कहा—

"उसे घर से निकाल देना था। पुलिस मे रिपोर्ट भी रामअवतार ने की होगी, मुझे पकड़वाने के लिये। और बिशनदास को शह भी उसी ने दी होगी, वरना वह दो कौड़ी का आदमी ऐसी बाते कर सकता था? इस तरह अकड़ सकता था?"

यह बाते करते-करते, वे दोनो ही कम्पाउण्ड मे पहुँचे कि वार्डर ने आकर सलाम किया। रामस्वरूप ने पत्नी की तरफ देख कर कहा—

"तुम्हारे जेब में कितने पैसे हैं?"

"एक कौड़ी भी नहीं है, मै तो यही कहने आई थी. कि मेरा क्या होगा?"

रामस्वरूप चुप हो गया और वार्डर से बोला—

"भैया, इस समय तो कुछ भी नहीं, और कोई रिश्तेदार भी नहीं आया।"

वार्डर बोला—

"वाह जी, अभी एक आदमी और भी आया था, जिसका हाथ बधा हुआ था। उसको खिसका दिया। खानदानी मुजरिम मालूम होते हो। फिर जेल मे आवोगे, तो पूछूँगा।"

इतना कहकर वार्डर घूरता हुआ चला गया।

कलावती ने कहा—

"क्या रामअवतार आया था? हाथ तो उसीका बँधा हुआ है।"

"आया होगा, यह देखने के लिये कि मै छूटता हूँ या नहीं। अपना कलेजा ठण्डा करना चाहता होगा। क्या ऐसे ही भाई होते हैं? खैर कोई बात नही। तू चिन्ता न कर मै फिर दूकान बनाऊँगा और अब ब्लैक मार-केट के लिए ऐसे-ऐसे ढंग सोचे है कि न पुलिस पकड़ सके और न कानून गिरफ्तार कर सके। थोड़े ही दिनो मे बिल्डिंग खड़ी कर लूँगा। घर वाले खूब जलेगे।"

यह बातें करते-करते वे सडक पर पहुँच गये। एक तांगे वाले ने पुकारा—

'तांगा बाबू जी ?"

लेकिन ये पैदल चलते गये ।

रामस्वरूप एक ओर बिल्डिगो के ख्वाब देख रहा था तो दूसरी तरफ अपने बच्चे को देखने के लिए उसकी चाल में फुरती भी आ गई । चलते-चलते उसने कहा—

"मुन्ना को साथ नही लाई ?"

कलावती बोली—

"घसिटती हुई जाने खुद कैसे पहुँची हूँ, उस मासूम जान को इतनी दूर कैसे ला सकती थी ? मेरे आते हुए वह बुरी तरह रो रहा था, आप से मिलने के लिए तड़प रहा है । यह छ. महीने मैंने उसे कैसे सभाला है, मेरा दिल ही जानता है । हर रोज पौ फटते ही वह दरवाजे की चौखट पर जाकर बैठ जाता था और आप की राह तकता । रामी को उसे ले जाने को कहती तो वह बिगड़ जाती । घर में पैसा न होने से नौकरों का दिमाग भी चढ गया है ।"

रामस्वरूप के दिल में मा के खिलाफ तो जहर भरा ही था। नौक-रानी के खिलाफ भी भर गया ।

कलावती ने फिर कहा—

"मेरी आख बचाकर दुश्मनों के घर जा बैठती है वह, और जाने क्या-क्या बातें करती है ।"

रामस्वरूप बोला—

"तो उसे निकाल बाहर करना था ।"

कलावती ने पति की ओर देखा और कहा—

"अगर तनखवाह के पैसे चुका सकती, तो कब की निकाल चुकी होती।"

रामस्वरूप चुप हो गया । वह दिल में सोचने लगा कि उसे अब जिन्दगी में क्या कुछ करना है । भाइयों को इस अत्याचार का मजा चखाना

है नौकरों को निकाल देना है, नये नौकरों का प्रबन्ध करना है और अब नये सिरे से ब्लैक की नई स्कीमा को कार्यरूप में लाना है। लेकिन जरा सभलकर कि कानून की लपेट मे न आ सके।

थोडी देर तक दोनों चुपचाप चलते रहे और फिर करणपुर मुहल्ले की मोड़ के पास पहुँच कर नहर को पार करके वह गली मे दाखिल हो गये। पेडो की परछाइयाँ अब जमीन पर नहीं थीं, लेकिन नहर के पानी का बहाव वैसा ही था।

घर के दरवाजे के अन्दर दाखिल होकर रामस्वरूप की नजरें अपने बच्चे को तलाश करने लगीं। कलावती ने पुकार कर कहा—"मुन्ना, देखो तुम्हारे बाबूजी आ गये।"

मुन्ना ऊपर था। भागकर मुँडेर पर आया। "बाबू जी" वह चिल्लाया और तालीं पीटता हुआ सीढ़ियो की ओर भागा, मगर उसका पाव पहली सीढी पर न पड़कर दूसरी सीढ़ी की ओर लपका। फिर मुन्ना सीढ़ियो परसे लुढकने लगा।

रामस्वरूप बच्चे की तरफ भागा, मगर मुन्ना बेहोश होकर अपने आप बाप के पाव के पास आ रहा।

कलावती की चीख निकल गई। सामने रायसाहब के घर से गार्गी की मा चीख पडी—"गारगी, हाय, तेरे जेठ का बेटा!"

रामस्वरूप ने बच्चे को गोद मे उठा लिया। मुहल्ले के लोग घर मे आ गए। गार्गी भी भागकर डाक्टर को लेने चली गई। मुहल्ले के आखिरी नुक्कड़ पर ही डाक्टर की डिस्पेन्सरी थी।

सब लोग हैरान थे। कलावती को उसके पति की रिहाई की मुबारक-बाद भी न दे सके, बच्चे को बेहोश देखकर हमदर्दी भी न बता सके।

रामस्वरूप ने बच्चे को पलंग पर लिटा दिया। एक आदमी ने फटे हुए सर से बहते हुए खून के बहाव को रोकने के लिये पट्टी बाधने की कोशिश की।

डाक्टर को बुलाने के लिए कोई और भी भागा, मगर डाक्टर से पहले सुहागी दरवाजे के अन्दर दाखिल होकर मुन्ने की तरफ बढ़ी। उसने रामस्वरूप की ओर देखा। रामस्वरूप ने मा को देखा। सुहागी के मुँह से निकल गया—

"स्वरूप—मुन्ना!"

अब तक जो वातावरण पथराया हुआ था, उसे मा की आवाज ने तोड़ दिया। उसके बाद उसका गला भर्रा गया। उसकी जबान तो बंद हो गई लेकिन आखे बोल पड़ी। दो आसू टपक पड़े। स्वरूप की खामोशी टूट गई। उसने आगे बढ़कर मा की ओर देखा और बोला—

"मुझे किसी की हमदर्दी की जरूरत नही।"

मा ने कहा—

"मै तो मुन्ना ........।"

रामस्वरूप ने बात बीचही मे काट दी—"अगर इस दीवार के पीछे रहने वालो की मदद के बिना मुन्ना नहीं बच सकता, तो मुझे उसकी जिन्दगी भी नही चाहिए!"

मा गुमसुम बेटे के मुँह की तरफ देखने लगी, फिर बहू की ओर देखा और मुन्ने के पलँग की तरफ बढ़ने लगी। कलावती ने बच्चे की ओर से मुँह हटाकर कहा—

"हमारे दु.ख से अपना कलेजा ठण्ढा करके जायेगी।"

अब मां न रुक सकी। उसे अपने पोते की ओर देखने की हिम्मत भी न हुई। वह बाहर की ओर चलने लगी। खुले हुए दरवाजे के पास जाकर उसने पलटकर एकबार मुन्ने के पलँग की ओर देखा, तो बाहर से पेड़ाखान की आवाज गूँजी—

"तू बेगैरत है क्या, सुहागी? तू क्या मेरी बेटी नहीं है? तेरी आखों का पानी मर गया। तू खून कराके रहेगी।"

सुहागी अपने ससुर की बात सुनकर दरवाजे से बाहर निकल गई। बाहर दादा छाती कूट रहा था। गुस्से को किस पर निकाले? बहू को

कोस कर या अपने को दु ख पहुँचा कर । उसने अपने कान ऐंठ लिए—
"वई तोबा है, कैसे लोग हैं । तू भी स्वरूप की मा है । तुझे धनी की इज्जत का ध्यान थोड़े है ।"

मा कानो पर हाथ रख कर और आखो की बन्द पलको मे आसू दबाये धनीराम की तस्वीर के सामने जाकर गिर पड़ी और फर्श पर लोट गई ।

पड़ाखान, जो आज तक बहू को गुस्से की नजर से देखना पाप समझता था, बाहर आगन मे खड़ा वाही - तबाही बक रहा था ।

सुहागो ने भी तै कर लिया था कि अब वह उस घर मे नही जायेगी ।

रामअवतार घर मे अन्दर ही था, लेकिन वह उठकर बाहर नहीं आया । क्या हुआ, क्या नही हुआ, वह बैठा - बैठा सब जान रहा था ।

छोटी बहू गार्गी रसोई मे बैठी थी और मँझली बहू पतिके पास बैठी डुबक - डुबक कर रो रही थी । उसने रामअवतार से कहा—

"क्या इसी भाई के लिये इतना बड़ा नाटक खेला है, जो मा की बेइज्जती करते जरा नही हिचकिचाता ।"

रामअवतार ने दुख भरी नजरो से बीबी की तरफ देखा और सर झुका लिया ।

उसी शाम को रामनारायण भी दिल्ली से आ गया । उसने किसी को आने की खबर नही दी । उसने सोचा गार्गी मुझे देखेगी तो चौंक जायेगी । मा भी हैरान होगी । लेकिन घर में आते ही उसे हैरानी हुई । सारी काया पलट गई थी । बड़े भाई जेल से हो आये हैं, घर मे चोरी हो गई है, मा अब भी बड़े भाई के लिए तड़पती है । बड़े भाई की हालाकि कमर टूट चुकी है, तो भी अकड़ अभी तक बाकी है । कल उसने मा का बाजू पकड़ कर घर से निकाल दिया था । उसका खून खौल गया । जितनी खुशी वह लेकर आया था, सब मिट्टी हो गई । उसे मा पर ज्यादा गुस्सा आ रहा था, कि वह अभी तक क्यों उसका नाम लिए जा रही है,

जिसने सारा खानदान बरबाद कर दिया है। दादा का मत भी यही था। वह कहता था—

'वह इज्जत, जिसके लिए हमने पिशोर मे रहना कबूल नहीं किया, आज इस कमबख्त ने बरबाद कर दिया। बात तो पाकिस्तान मे भी इतनी ही थी न, कि धर्म बदल डालो, तो रह जाओ। धर्म, रीति के सिवाय और कुछ नही। तुम्हारे बाप की रोटी थी ईमानदारी। उसे रामस्वरूप ने बदल दिया, गोया अपना धर्म बदल डाला। अगर धर्म ही बदलना था तो अपने बाग, अपना मकान, अपनी जायदाद छोड़कर हम लोग क्यों आए यहा ?"

रात को दादा ने पलग पर बैठकर नारायण को बातें समझानी शुरू कीं—

"इस बहू ने मेरे मुँह पर तोबड़ा बाध रखा है। कुछ बोलने नहीं देती। तू उसे समझा नारायण, नही तो मैं इस घर को छोड़ कर चला जाऊँगा। तू पढ़ा-लिखा है। परन्तु वह भी तो पढ़ा लिखा था—रामस्वरूप, तुम पढ़े-लिखे बड़े शैतान होते हो। अक्ल तुममें अधिक होती है न ? अक्ल—वाह-वाह क्या चीज बनाई है भगवान ने। जिसको अधिक देता है, वह एटमबम बनाता है। इस रामस्वरूप ने भी एक एटमबम बनाया है, पढ़ा-लिखा था न, घर को, खानदान को बरबाद करने के लिए।"

पेंडाखान को आज मौका मिला और बोलता चला गया। घर मे देखने से तो सब सो गए थे, लेकिन सोया कोई नही था। गार्गी बड़े कमरे मे बिस्तर पर लेटी रामनारायण का इन्तजार कर रही थी। मंझली बहू कौशल्या अभी अभी रामअवतार के हाथ पर मालिश करके पट्टी बाध कर लेटी थी। रामअवतार का बदन कुछ गर्म लग रहा था। वह सोच रही थी कि रामनारायण आ गया है, जरा इसको कहूँ देखे तो, उसके भैया को ताप तो नही चढ़ आया।

मा कहने को बिस्तर पर लेटी थी, लेकिन उसके कान दीवार के साथ लगे थे, कि उस घर का क्या हाल है, जहा कल मेरा बेटा जेल से छूट आया है।

आखिर रामनारायण उठकर अन्दर आया तो भाभी ने धीरे से कहा—

"नारायण ! जरा भैया का बदन तो छू कर देखो, बुखार आ गया है शायद।"

रामनारायण ने छू कर देखा तो सचमुच बुखार था।

"हा बुखार तो है। लेकिन यह मसूरी मे गिरे कैसे ?"

भाभी ने धीरे से कहा—

'राम जाने भैया, गिरे या गिराये गये। बताते तो कुछ नही, बस पड़े रहते है पसलियो पर पलस्तर है, बाह गले मे डाल रखी है, मालूम होता है काफी गहरी चोट है। दिन को बोलते नही, लेकिन रात को बेखबरी मे कराहते हैं।"

"बुखार क्या रोज आता है ?" नारायण ने पूछा।

"नहीं, कल दौड-भाग ज्यादा किया, इसीलिए बुखार आ गया। दवा लेने गये और...।"

भाभी कुछ कहना चाहती थी लेकिन रुक गईं। रामअवतार ने उसे सौगंध दी थी कि किसी को चोरी का भेद न बताए।

"और क्या ?" रामनारायण ने भाभी को चुप देखकर पूछा—

भाभी ने बात बदलते हुए कहा—

"और यह जो घर में कुहराम मचा हुआ है, यह तो तुम देख ही रहे हो। इसमे तो तन्दुरुस्त आदमी भी बीमार हो जाता है, फिर बीमार का क्या हाल होगा ?"

रामनारायण रात को यही सोचते-सोचते सो गया कि इस घर का क्या हाल होगा। उस समय तक क्या करेंगे, जब तक मैं डाक्टरी पास नहीं कर लेता।

चरनदास को मसूरी मे आकर पता चला कि रामअवतार यहाँ पत्थर तोडता रहा है, अस्पताल मे पडा रहा है, और भाई की मोटर उसके करीब से गुजरती रही है ।

चरनदास अब मसूरी मे न ठहर सका । उसने सोचा, जो हो, सो हो एकबार हर्जीमल के यहाँ ज्योतिषी का रूप धारण करके जाना ही होगा । धनवालो के इस अत्याचार पर उसका दिल बैठ गया । ये लोग आदमी को जीने नही देते और फिर इस दौलत का भी क्या भरोसा ? आज है कल नही । रामस्वरूप कल तक मालदार आदमी था, मसूरी मे उसका बगला था, मोटरे उसके रहती थी, और आज जेल मे सड रहा है ।

चरनदास, जो हर बात को हँसी मे उड़ा देता था, ऐसी गंभीरता से इस बात पर विचार करने लगा, जिस गभीरता से वेदान्ती आत्मा-परमात्मा के प्रश्न पर विचार करते हैं । वह यह सोचता हुआ कब मसूरी से चला और कब देहरादून पहुंच गया, उसे पता तक नहीं चला ।

देहरादून के मोटर स्टैंड से वह सीधा सेठ हर्जीमल की पेढ़ी पर चल दिया । बस में भी लोग उसे ज्योतिषी ही समझते थे । सब से बड़ी उलझन जो उसके सामने आई, वह यह थी कि उस ज्योतिषी का नाम भूल गया था, जिसने पहले एक बार सेठ हर्जीमल को दर्शन दिये थे । अब क्या करे, जाये या नहीं ? उसकी समझ में कुछ नहीं आता था । फिर भी सोचता - सोचता वह हर्जीमल की गद्दी पर पहुंच गया । मुनीम ने फौरन पहचान लिया और भीतर भागा । उसने जाकर खबर दी—

"सेठ जी, वह महात्मा आये हैं, जो उस दिन बच्चे को प्राणदान देकर गए थे ।"

"अरे—अरे !"

सेठ जी उठकर बाहर आगए। उन्होने महात्मा के चरण छुए। सेठानी जी पूजा मे बैठी थीं, पूजा को छोड़ - छोड़कर वह भी यह कहते-कहते आ गयी थीं—

"हमारे घर आप पधारे हैं, आइए न, अन्दर आइए ?"

और उसने ले जाकर सीधा उनको ठाकुर जी के पास बैठा दिया।

"लीजिए महाराज, जरा अपने हाथो से आरती उतारिये ठाकुरों की।"

चरनदास घबराया। आरती-वारती उसने कभी नहीं उतारी थी। कुछ मुँह मे पढा और झट उठकर खड़ा हो गया।

"नही, हम कृष्ण के पुजारी नहीं हैं। हम शकर के पुजारी हैं। कृष्ण की पूजा करना आप गृहस्थो का धर्म है।

"यहा तो शंकर जी भी विराजमान हैं।" सेठानी ने कहा।

चरनदास ने गौर से देखा तो सामने शकर की मूर्ति भी रखी थी। कृष्ण की मूर्ति पर उसकी नजर ठहर गई। उसने पहचान लिया, यह कृष्ण की मूर्ति मौसी की है, यहा कैसे आई ? उसने सोचा इसकी खोज लगानी चाहिए। चरनदास ने कृष्ण की मूर्तिकी ओर इशारा करते हुए कहा—

'यह मूर्ति आप की नहीं है।"

सेठ जी ने कहा—

"सच है महाराज, लेकिन अब तो यह अपनी ही है, एक आदमी बेच गया है।"

"हूँ" चरनदास थोड़ी देर बाद बोला—"वह आदमी जख्मी था, है ना ?"

"हा, सच है महाराज. बिलकुल सच। उसका हाथ टूटा हुआ था।"

"पहले भी तुमने उसका बहुत-सा माल अपने घर में रखा है, सच है ना ?"

"जी हा, लेकिन वह तो . ......।"

"वह तो क्या ? तुम धनवान लोग गरीबों को दुःखी करते हो। अब यह युग बदलने वाला है, प्रलय आनेवाला है। इस घर का अन्न ग्रहण

करना पाप है । तुम्हारा बच्चा बच गया क्योंकि हम कह गये थे । अब अगर लोगा का लूटा हुआ धन नही लौटाओगे, तो फिर किसी मुसीबत मे पड़ोगे ।"

इतना कह कर चरनदास उठ खडा हुआ । सेठ जी और सेठानी जी कहते रहे ? बैठो महाराज—महाराज बैठिये तो सही" लेकिन ज्योतिषी महाराज रूठकर चल दिये और कहने लगे—

"आपत्ति आने वाले घर मे हम रमते जोगियो का काम नही, तुम्हे समझाना था, समझा दिया ।"

चरनदास इतना कहकर सीढी उतर गया । मुनीम जी बाहर बैठे थे कुछ अपना भविष्य पूछने के लिए, लेकिन महात्मा तो रुके ही नहीं । सेठ जी ने मुनीम जी से कहा—

"आज महात्मा जी रूठ गये हैं ।"

"क्यों ? क्या कुछ सपत्ति मागते थे ?"

"अपने लिये तो नहीं पर कहते थे, लोगों का लूटा हुआ धन वापस कर दो ।"

"राम ! राम ! बताइये भला धन की लूट कैसी ? हम तो धन्धा करते हैं ।"

सेठानी ने पर्दे के पीछे से कहा—

"सच कहते हैं महात्मा जी, लूटा हुआ धन वापिस नहीं करेंगे, तो आपत्ति आ जायेगी ।"

सेठ जी बिगड़ पड़े—

"लो जी मुनीम जी, सुना तुमने, हम लुटेरे हैं । भाई ! किसी को जरूरत होती है, तो आकर ले जाता है, दे जाता है । हम तो किसी के पीछे जाते नहीं ।"

सेठानी जी ने भी तेवर बदल कर कहा—

"जहा शहद होगी, वहा मक्खी जरूर आयेगी ।"

सेठ जी हँस कर बोले—

"हां! भगवान तेरा भला करे, शहद थोड़ा ही मक्खी को बुलाती है ?"

सेठानी जी ने अपनी गलती समझ ली कि बात तो उल्टी हो गई, बोली—

"जैसे चिड़िया को फांसने के लिये चिड़ीमार जाल बिछा कर और दाना फैला कर रखता है, वही गति आप की है।"

"हम चिड़ीमार हैं जी ? बकती न जाओ जी। तुम अन्दर जाकर बैठो।"

सेठानी अन्दर चली गयीं। सेठ जी मुनीम जी से बोले—

'यह ज्योतिषी झूठा मालूम होता है। कहता है, माल लौटाओगे नही तो आपत्ति आ जायेगी। हम भी देखेंगे।"

मुनीम बोला—

"जी हां, बिल्कुल देख लेंगे।"

मुझे यह ज्योतिषी रामअवतार का नातेदार मालूम होता है।

सेठ जी बोले—

"अरे हां हो भी सकता है, मैंने इस शकल का आदमी एक दिन उसके घर देखा था।"

चरनदास ने घर में आकर देखा, रामनारायण आया हुआ है।

मौसी ने कहा—

"बेटा, मेरा तो सब कुछ चला गया, मेरे ठाकुर जी चोरी हो गये।"

"चोरी हो गये ? वह कैसे ?" चरनदास ने पूछा।

रामअवतार बीच मे बोल पड़ा—

"कल रात चोर आये थे, और चुरा कर ले गये। आओ देखो, यह मुण्डेर टूटी पड़ी है,—इधर से भाग गये। यहा उसके पैरों के निशान थे।"

दिखाते-दिखाते चरनदास को रामअवतार बाहर ले आया।

चरन बोला—

"मै ठाकुर तो हर्जीमल के यहा देखकर आया हूँ।"

रामअवतार ने कहा—

"हा, ठाकुर देकर रामस्वरूप का जुर्माना भरा है।"

चरनदास ने पूछा—

"बेच दिए या गिरवी रखे ?"

"गिरवी।"

"रसीद लाये।"

"नही।"

"और अगर वह मुकर गया तो, लिखा-पढी तो है नही।"

"न हो, लेकिन वह ऐसा आदमी नहीं है। पिछले दिनो तुम्हें याद है, नारायण की शादी पर घर आकर पाच हजार रुपये दे गया था वह।"

चरनदास ने ठनक कर कहा—

"वह नहीं दे गया भाई, मै उसको लेकर आया था।"

"वह कैसे ?" रामअवतार ने पूछा।

"ज्योतिषी बन कर गया था, और कैसे। उसका बच्चा बीमार था। धनवान शक्की तो होते ही हैं, इस शक मे कि कही रुपया न दिया तो बच्चा मर जायेगा, वह पूरे तीस हजार देने आया था, लेकिन फिर भी बेईमानी पर अड़ा रहा। उसने पाच हजार से ही छुट्टी करवा ली। अब सारे रुपये देकर न जाये और ठाकुर न लाये तो मेरा नाम चरनदास नहीं।"

कबाड़ी बाजार के आदमी ने आकर रामस्वरूप के घर के फर्नीचर के दाम लगाये पांच हजार के माल के कुल पचहत्तर रुपये। कबाड़ी जानता था, बड़े लोग जब बनते हैं तो रुपये का माल दस रुपये में खरीदते हैं और जब बिगड़ते हैं तो दस का माल चवन्नी में बेचते हैं। जरूरत के वक्त

चीज की कीमत नहीं रहती, जरूरत की कीमत होती है। कबाडी को माल खरीदने की क्या जरूरत ? चार पैसे कमायेगा, यही न ? और रामस्वरूप को भी पैसे की जरूरत है, क्योंकि बच्चा मौत के मुँह में है।

कबाडी बोला —

"माल तो अच्छा है बाबू जी, लेकिन काम का नहीं, शौक की चीज है और शौकीन लोग कबाड़ी बाजार मे कहा आते हैं ? मै तो लकडी के भाव बेचूंगा इसे।"

रामस्वरूप ने कहा—

"मुझे जरूरत है भाई, अभी जरूरत है। कल तो मै यह मकान भी बेच सकता हूँ, लेकिन लूटने की कोशिश मत करो।"

"राम - राम कहिये बाबू जी, मैं कहा लूटता हूँ ? अगर कोई ७५) रु. से ज्यादा दे, तो उसी को दे दीजिये।"

रामस्वरूप को यहा इन्कार की गुजाइश नहीं थी, क्योंकि बच्चे को दवा चाहिये और दवा बच्चे को आज ही मिलना चाहिए।

बाहर आगन में यह सौदा हो रहा था कि रामी ने आकर कहा—

"मुन्ने की हालत खराब होती जा रही है, जल्दी अन्दर चलिए।"

कबाडी ने कहा—

"तो अच्छा बाबू जी, कल आऊँगा, आप सोच लीजिए।"

"नहीं - नहीं, सोचने की क्या बात है, तुम माल उठाओ।"

कबाड़ी ने एक बार फिर माल पर निगाह डाली और अपनी पैंट से पुराने - पुराने नोट निकाल कर रामस्वरूप की हथेली पर रख दिये। नोट लेकर रामस्वरूप अन्दर चला गया। नन्हे के मुँह से झाग आ रहा था और वह बेसुध पड़ा था। कलावती ने रोकर कहा—

"भगवान के लिये इसे बचाइये, नही तो मै मर जाऊँगी।"

रामस्वरूप भागा - भागा गया और शहर का बड़ा डाक्टर ले आया। डाक्टर ने फीस के ५०) रुपये गिनकर जेब मे डाल लिये और एक नुस्खा लिख कर देते हुए कहा—

'यह इंजेक्शन अभी ले आइये तो बच्चा शायद बच सकेगा।'

दवा कितने की आयेगी ? इंजेक्शन कितने में मिलेंगे ? यह रामस्वरूप भलीभांति जानता था। लेकिन उसकी जेब में केवल पच्चीस रुपये थे। केमिस्ट बाजार, जहां अभी कुछ ही महीने पहले उसकी दूकान थी और हजारों का व्यापार करता था से दवा लाना क्या मुश्किल है। सब जानते हैं इसे, लेकिन जब इसने बाजार में कदम रखा तो किशनदास फलों का खोमचा लगाये दीख पड़ा। अब वह धनीराम के बरामदे से उतर कर सड़क पर आ गया था।

उसने रामस्वरूप को पुकारा।

रामस्वरूप उसकी तरफ देखकर आगे निकल गया और ठीक अपने सामने वाली दुकान में घुसा। "घसीटाराम एण्ड सन्स' के यहां जाकर बोला—

'लाला जी ! यह दवा जल्दी से दे दीजिये।"

लाला जी ने देखा और बोले—

"आओ रामस्वरूप ! क्या बात है ? भई तुम्हारे मुकदमे का फैसला हो गया ?"

"मुकदमे की बात छोड़िये, मेरे बच्चे की हालत बहुत खराब है, यह इन्जेक्शन दे दीजिये।"

लाला जी ने इन्जेक्शन के डिब्बे के लेबल पर हाथ रख कर कहा—

"अरे यह दवा तो हमारे यहां है नहीं, बाजार से लाकर देनी पड़ेगी। और दाम बहुत ज्यादा मांगते हैं यह लोग। तुम तो जानते ही हो सब बेईमान हैं।"

"नहीं-नहीं, लाला जी ऐसा न कहिए। आप तो ईमानदार आदमी हैं, अगर आप की दुकान पर दवा नही मिलेगी तो कहां मिलेगी ?"

"मेरी ईमानदारी की बात छोड़ो रामस्वरूप जी, दवा है ही नहीं। दूँ कहां से ? और आप को याद है, हमारी दुकान से आदमी आप के यहां जाता था, तो आप भी ब्लैक में बेचते थे। अब कोई बाजार में लायेगा, तो वह भी ब्लैक में मिलेगी। सौ-दो सौ रुपयों के इन्जेक्शन हैं, कहिये

तो ला देता हूँ । यो कोई असली दामो मे बेचे तो पच्चीस तीस रुपये का माल होगा ।''

''आप मँगवा दीजिए, जो कहेंगे दे दूँगा ।''

रामस्वरूप ने जल्दी से कहा--

''मेरे पास समय नही है, मौत मेरे बच्चे के सिरहाने खड़ी है ।''

लाला जी दु:ख प्रकट करते हुए बोले--

'' राम-राम । भगवान आप के बच्चे को उमर दे, तो लाइये दो सौ रुपये, मै अभी मँगवाये देता हूँ ।''

'' दो सौ रुपये फिर दे जाऊँगा ।''

रामस्वरूप ने गिड़गिड़ाते हुए कहा ।

''अच्छा ! तो आप उधार चाहते है ? उधार देना तो बन्द कर दिया है और दुकान अब मेरी रही नही, बड़े लड़के के सुपुर्द है । वह आयेगा तो शायद आप को दवा बाजार से लाकर दे दे ।''

रामस्वरूप ने गुस्से मे कहा --

''यह हथकण्डे मैं सब जानता हूँ । साफ-साफ कहिये ना कि दवा आप ब्लैक मे बेचना चाहते हैं ।''

''यह बात साफ कैसे कही जा सकती है ? आप ही कह सकते हैं, जो दिलेर बहादुर हैं और जेल भी काट आये हैं ।''

बात बढने लगी । रामस्वरूप बकता - झकता बाहर निकल गया । वह जिस दूकान पर जाता था, वहीं उसे दवा नहीं मिलती थी । एक दूकान-दार से रामस्वरूप ने कहा--ब्लैक में दवा बेचते हो । इसकी कीमत तो २५) रुपये है । तब दूकानदार ने बिगड़ कर कहा--वह कीमत तो आपके बाप के वक्त की थी ।

उसके कानों मे नहीं - नही की आवाजे गूँजने लगी ।

''दवा नहीं है'' ''ब्लैक मे शायद मिले ।''

''नहीं'' ''ब्लैक'' ''काला बाजार'' जिसने इन्सानकी जिन्दगी अजीर्ण कर रखी है । मेरे बच्चे पर इन लोगो को तरस नही आता ।'' वह बड़बड़ाने लगा ।

अन्दर से कोई उसको कह रहा था—

"तुझे भी तो लोगो के बच्चो पर तरस नही आता था, तू भी तो काले बाजार मे धन्धा करता था।"

यह आवाजे जैसे धनीराम, उसका मरने वाला बाप, उससे कह रहा हो।

"तुमने मेरी पगडी का सौदा किया, मेरी इज्जत पर थूका। मै जो हमेशा ईमानदारी की जिन्दगी बसर करना चाहता था, मै जो काले-बाजार को अपने खून से धोकर साफ कर देना चाहता था, लेकिन मेरा खून इतना काला निकल जायेगा, यह मै नही जानता था।"

वह यह आवाजे सुनता - सुनता अपनी दूकान के आगे से निकला। धनीराम एण्ड संस का बोर्ड टेढ़ा लटक रहा था। उसके मुँह पर स्याही पुती हुई थी। दुकान बन्द थी और मालूम होता था धनीराम की रूह वहा बैठी बेटे की ईमानदारी का मातम कर रही है।

वह वहा से भागा और भागता चला गया। उस अपराधी की तरह जो खून करके शरण ढूँढता है।

इधर नन्हे की हालत बिगड़ रही थी। बाबू जी दवा लेने गये हैं और अभी तक वापस नहीं आए। कलावती बार - बार दरवाजे पर जाती और लौट आती। आखिर उसने परेशान होकर कहा—

"रामी, देख तो वह कहा गये? क्या उन्हें बच्चे का भी ध्यान नहीं है।"

रामी बाहर निकली तो पेड़ाखान सामने दीखा। वह बोली—

"बड़े बाबू! मालिक को तो नहीं देखा?"

"मै उस कुत्ते की शकल क्या देखूँगा?"

इतना कहकर पेड़ाखान आगे बढ़ गया। अब रामी क्या करे? वह क्या बाजार जाकर देखे? घर में बच्चे को कुछ हो गया तो मालकिन कहा-कहा भागती फिरेगी? जरा बड़ी मा से ही कह दूँ, वह रामअवतार को खोजने भेज देगी। इतना सोच कर रामी घर में आ गई।

सुहागी चुपचाप बैठी गोल झरोखे की तरफ देख रही थी, जो दोनों घरों के बीच में मा की खुली आंखों की तरह देखता रहता था। रामीने सुहागी से कहा—

'मा जी! बाबू जी नन्हे की दवा लेने गये थे, अभी तक वापस नहीं आये। इधर नन्हे की हालत बड़ी खराब है। बड़ा डाक्टर आया था, वह दवा लिख कर दे गया था।''

इतना कहते-कहते रामी सुहागी के करीब आ गई और धीरे से बोली—

'घर में पैसा भी नहीं है, शहर में दवा भी मँहगी मिलेगी।''

मा ने उसकी तरफ देखा और उठकर खड़ी हो गई फिर बोली—

'चल, मैं आती हूँ। मा ने अपने बेटे को पुकारा ''रामअवतार ऐ रामअवतार, देख तेरे भतीजे को क्या हो गया है। तेरा भाई अभी तक दवा लेकर नहीं लौटा। बड़ा डाक्टर लिख कर दे गया था।''

एक सास में मा ने कई बातें कह डालीं, और फिर चलते हुए बोली-

''तू जल्दी से दवा लेकर आ।''

ज्यों ही वह दरवाजे के पास पहुँची, दादा आगे खड़ा था। ऐन दरवाजे के बीचोबीच। रामी तो बाहर चली गयी पर सुहागी लौटकर सीढ़िया पर बैठ गयी और दीवार के उसी झरोखे की तरफ ताकने लगी। गोल झरोखा आदमी के कद से ज्यादा ऊँचाई पर था, जिसके आगे कोई पट नहीं था. बिल्कुल मा के दिल की तरह वह खुला रहता और दोनो घरों को देखता, दोनो घरों की आवाजे सुनता पर मा की भाति कुछ कर नहीं सकता था।

रामअवतार अन्दर से उठ कर बाहर आया और मा के पास आकर बोला—

''मा कुछ रुपये हों तो दे दो मैं जाकर मुन्ने के लिए दवाई ले आऊँ।''

मा ने बेटे की तरफ निराश आंखों से देखा, मानो कह रही हो, "मेरे पास क्या है बेटा ?"

रामअवतार ने कहा—

"बापू की पगड़ी के कुल्ले में एक सोने का फूल लगा है, उसे उतार दो ।"

दादा एकदम चौंक कर खड़ा हो गया ।

"ओए, बाप की पगड़ी के फूल को बेचेगा तू ?"

रामअवतार ने कहा—

"हां ! बेचूँगा बड़े बाबू ।"

"तू अपने बड़े भाई से भी बेशर्म निकला, मा को कहता है, फूल उतार दे ।"

"मैंने कोई बुरी बात नहीं की । जिस आदमी ने मनुष्यों की जानें बचाने के लिये काले बाजार का विरोध किया और मुसीबतों में भी काले-बाजार का व्यापार नहीं किया, जो हमेशा यह कहता था कि दवा बीमारों की अमानत है, आज उसी का पोता बिना दवा के मर जाये, यह कैसे हो सकता है । क्यों, काका क्यों ?"

उसने दादा को झजोड़ दिया । दादा को ऐसा जान पड़ा जैसे धनी बोल रहा है, वही उसे काका कहता था ।

रामअवतार ने आगे कहा—

"और तुम जो इज्जत-बेइज्जती की बात करते हो, बाप की पगड़ी तो उसी दिन बिक गई थी, जिस दिन बड़े भाई ने ब्लैक मारकीट का धन्धा शुरू किया था ।"

दादा उसके चेहरे की तरफ देखता रहा । थोड़ी देर के बाद सुहागी घूंघट निकाले, ससुर के सामने पगड़ी लेकर आ खड़ी हुई । दादा ने बहू की ओर देखा और फिर पगड़ी के कुल्ले में लगे हुए सोने के फूल को नोचकर उसने रामअवतार के हाथ पर रख दिया । सोने का चमकता हुआ

फूल, जो धनीराम काले बाजार का धन्धा करनेवालो को दिखाकर कहा करता था—

"देखो मैं ईमानदार हूँ।"

शाम को रामस्वरूप घर मे आकर बैठ गया और बोला—

"कलावती! यह नन्हा अब नहीं बचेगा, इसे नहीं बचना चाहिए, क्योंकि मेरे किये का यही फल है।"

कलावती तड़प गई—

"नहीं, नही ऐसा न कहिए। मैने कोई पाप नहीं किया।"

रामस्वरूप बोला—

"पाप तो हम दोनों ने मिलकर किया है। तुम धन-दौलत चाहती थी तुम्हे मिल गई, मैंने सैकड़ो-हजारों बच्चो को मौत के घाट उतार कर पैसा इकट्ठा किया था, वह चला गया, अब यह बच्चा भी चला जायेगा। दवा कहीं से नहीं मिलती और ऐसा होना ही चाहिए था। अपने किये का फल भोगना ही पड़ता है। नन्हा अब तक जिन्दा इसीलिये है कि इसके मरने का तमाशा देखकर हम लोग दुःखी हो। मैं इसीलिए घर नहीं आना चाहता था कि इसके दुःख को न देख सकूँगा, लेकिन इसकी चीखे और दर्द देखे बिना हमें सबक नही मिलेगा। मुझे नसीहत नही आयेगी। मै जो गरीबो को लूटता था, तुम जो अपने बच्चे को बेई-मानी के पैसे से बड़ा आदमी बनाने की चिन्ता मे थी, अब यह बड़ा आदमी बन रहा है, हमारे पाप का फल यह भोग रहा है। मेरे पाप का प्रायश्चित यह कर रहा है। मैं, जिसने बाप की पगड़ी के नाम पर छोटे भाई का हिस्सा हड़प लिया, मा की छाती पर ये काली दीवार खड़ी कर दी, यह बटवारा नही, बेईमानी है, काला बाजार है। ब्लैक मेलिंग है। यह कहते-कहते उसने सहन मे खड़ी दीवार के साथ सिर टेक दिया और वहीं धरती पर बैठ गया।"

कलावती चीख पड़ी—

'मेरा नन्हा ।'

उसने बच्चे को उठा कर सीने से लगा लिया और रामस्वरूप पत्थर की तरह देखता रहा। उसकी आंखों में आंसू नहीं थे, दिल में एक दर्द जरूर था। शायद वह समझता था कि अगर दर्द आंसू बनकर बह गया, तो मेरे कर्मों का प्रायश्चित अधूरा रह जायेगा। कलावती रो-रो कर बेहाल हो रही थी। ठीक उसी समय रामी ने बड़े डाक्टर के साथ घर में प्रवेश किया। दवाओं का बक्स उसके हाथ में था। डाक्टर ने बच्चे को देखा और इन्जेक्शन लगा दिया, बोला—

'अब यह बच जाएगा। अगर आधा घंटा और यही दशा रहती तो बच्चे का बचना मुश्किल था।"

डाक्टर इतना कहकर चला गया।

"दवा कहां से आई रामी ?" रामस्वरूप ने पूछा।

"यह मत पूछिए बाबू जी। जिसका कोई नहीं होता, उसका भगवान होता है।"

"लेकिन दवा तो ब्लैक मारकेट के सिवा कहीं मिलती नहीं।"

"जी हां, सब यही कहते थे। लेकिन जिसने जेल का रुपया भरा है, वही दवा लेकर भी आया है।"

'किसने भरा है जुर्माना ? कौन लाया है दवा।"

और उसने कलावती की ओर देखा।

रामी बोली—

"रामअवतार।"

इतना कहकर रामी रामस्वरूप की ओर देखने लगी।

"रामअवतार ?'

रामस्वरूप इससे आगे कुछ न कह सका। उसने अपना चेहरा अपने दोनों हाथों से ढाक लिया।

ठीक उसी समय नन्हा होश में आकर दादी मा को पुकारने लगा।

"दादी मा – दादी मा।"

कलावती ने रामस्वरूप की तरफ देखा। रामस्वरूप बाहर निकल गया और पास के दरवाजे पर खड़ा होकर उसने जोर से पुकारा—

"मा.. ...।"

मा चौंक उठी—

"बेटा"

सुहागी आगे बढ़ी, लेकिन पेडाखान ने उठकर दरवाजा बंद करते हुए कहा—

"चला जा बेशर्म, तू हमारे लिये मर चुका है।"

सुहागी पीछे हट गई, पेडाखान ने दरवाजे पर जंजीर लगा दी। सुहागी आगे बढ़कर दरवाजे की जंजीर खोलने लगी, लेकिन पेडाखान ने कहा—

"तू मेरी बहू है तो रामस्वरूप की सूरत नहीं देखेगी। मा के हाथ रुक गये। वह पेडाखान की बहू थी, अपने बच्चे की मा नहीं।

शाम हो चुकी थी, रोशनी जल गयी थी। सेठ हर्जीमल जी मुनीम जी के साथ बैठे दिन भर का हिसाब-किताब कर रहे थे।

इन्सपेक्टर ने अन्दर घुसते हुए पूछा—

"हर्जीमल सेठ कौन है ?"

पुलिस को, और वह भी हाथ में हथकड़ी, देखकर मुनीम जी की सिटी-पिटी गुम तो हो ही गयी थी, सेठ हर्जीमल जी भी घिग्घी बंध गई, बोले—

"जी-- जी,— हर्जीमल ? — क्या बात है ? आइये, तशरीफ रखियें न।"

"हम पूछते हैं—हर्जीमल कौन है ? समझे तुम ?"

"जी मैं हूँ—हर्जीमल—फरमाइये।"

"मुझे आपकी तलाशी लेनी है।"

"तलाशी !"

सेठ जी का दम खुश्क हो गया। वह घबरा कर बोले—

"तलाशी ! क्यों ? आखिर . ।"

इन्सपेक्टर वाक्य पूरा करते हुए बोला—

"कारण क्या है ? यही पूछना चाहते हैं ना आप ? कारण यह है कि आप के नाम वारण्ट है।"

इतना कहकर इन्सपेक्टर ने सारे कागजात उसके सामने फेंक दिए।

"लेकिन मैंने कुछ नहीं किया इन्सपेक्टर साहब। मुनीम जी. जरा वकील को बुलाइए आप।"

वकील का नाम सुनकर इन्सपेक्टर का कलेजा जरा-सा हिल गया. लेकिन उसने अपने आपको सँभाल कर मुनीम जी को डाटा—

"खबरदार, वकील को कचहरी मं बुलवाइयेगा।"

और उसने सदर दरवाजे की कडी लगा दी। मुनीमजी डर गये। इन्सपेक्टर ने कहा—

"आप ने चोरी की है, मेरे पास रिपोर्ट है।"

"राम-राम, मै चोरी करूँगा? सेठ हर्जीमल चोरी करेंगे?"

"हा, आपने सोने के ठाकुर चुराये हैं।'

' सोने के ठाकुर? वह तो, वह लड़का रामअवतार मेरे पास गिरवी रख गया है।"

इन्सपेक्टर ने कुर्सी खींची और बैठते हुए कहा—

"लाइये, वह सोने के ठाकुर यहा रखिए लाकर।"

सेठ जी अन्दर से ठाकुर ले आए। सेठानी भी दरवाजे के आड़ मे खडी होकर धड़कते दिल से यह बाते सुनने लगी थीं। उसने सोचा कल सुबह ज्योतिषी महाराज कह गए थे लूट का माल आपत्ति लेकर आता है। यही आपत्ति है, और क्या?

बाहर इन्सपेक्टर ने सोने के ठाकुर उठाकर गौर से देखा फिर वह बोला—

"हा यही है, कितने मे गिरवी लिए है आपने?"

' दो हजार रुपये में।" सेठ जी बोले।

"खाता दिखाइए।"

खाते के नाम पर मुनीम जी दबक गए क्योंकि सेठ जी ने खाते मे तो लिखवाया ही नही था। अगर हर्जीमल की नियत अच्छी होती तो खाते पर चढाते, उनकी नियत तो भगवान को हजम करने की थी। लेकिन भगवान कैसे हजम होते, जो सबको हजम करते हैं, उसको हजम करने के लिए तो लोहे का कलेजा चाहिए, और सेठ जी अगर दो रोटी ज्यादा खाले, तो हाजमे के चूर्ण की आवश्यकता होती थी।

सेठ जी हकलाते हुए बोले—

"वह लेकिन ... बात ऐसी हुई . कि वह आदमी जरा.. ।"
इन्सपेक्टर ने कहा--
"तो लिखा पढ़ी नहीं की आपने ? इसका मतलब यह हुआ कि ?"
"जी नहीं . ।"
"हां या-नहीं, दो अक्षरों में जवाब दो।"
"जी नहीं ।"

सेठ जी का रंग उड़ गया, चेहरे पर हवाइयां उड़ने लगीं, दिल था कि धड़कता चला जाता था। "पानी" सेठ जी ने दुखी नजरों से मुनीम जी की तरफ देखा।

अन्दर से पानी का गिलास आ गया सेठ जी ने पानी पिया और बोले--

"मैं बिल्कुल निर्दोष हूँ इन्सपेक्टर साहब, यह माल मैंने चुराया नहीं है, मोल लिया है।"

"अभी आप कह रहे थे, गिरवी लिया है, अभी आप कह रहे हैं मोल लिया है। ठीक-ठीक बतलाइए क्या हुआ और क्या मामला है ?"
इन्सपेक्टर ने डांटा।
"मैंने चोरी नहीं की है, मुझे बचाइए, मैं आपके पैर पड़ता हूं।"
इतना कहते-कहते सेठ जी इन्सपेक्टर के पैर पर गिर पड़ा। इन्सपेक्टर ने उन्हें ऊपर उठाया और बोले--

"आप ऐसा मत कीजिए, मेरी ड्यूटी का प्रश्न है।"

अब इन्सपेक्टर का स्वर जरा नरम हो गया था। इन्सपेक्टर की नमी देखकर सेठ जी बोले --

"लेकिन आप सब कुछ कर सकते हैं।"
सेठानी जी भी बाहर निकल कर बोलीं--
"सेठ जी पर तरस खाइए।"
इन्सपेक्टर ने कहा--

''बहन जी, मै कुछ नही कर सकता। चोरी का माल सेठ जी के यहा से बरामद हुआ है । यह माल देहली के एक सेठ का चोरी हो गया था।''

''परतु हमे क्या पता कि यह माल चोर का है या साहूकार का? हमारे पास एक आदमी लेकर आया, हमने रख लिया।''

सेठानी ने वकालत की।

''लेकिन इसकी कुछ लिखा-पढी तो होनी चाहिए?''

''हा, यह दूसरी बात है। पर जो आदमी रोज आता है, वह चोर भी हो सकता है। उसका और गहना भी तो हमारे घरमे रखा है।''

इंसपेक्टर बोला—

''तो लाइए वह भी दिखाइए वह भी शायद चोरी का ही हो!''

''अभी लाती हूँ।''

सेठानी जी अन्दर चली गयी। इधर सेठ जी हाथ-पैर जोड़ रहे थे। मुनीम ने कहा—

''कुछ ले-लिवा कर मामला खत्म कर दीजिये इन्सपेक्टर साहब! हम भी आप के काम आयेगे?''

इस बात पर इन्सपेक्टर बिगड गया—

''मुझे रिश्वत देते हो?''

उसने कलम निकाला और कहा—''अपना नाम बताइए!''

अब तो मुनीम जी भी हाथ पैर जोडने लगे।

''मै बाल बच्चेदार आदमी हूँ। माल सेठ जी का है, और फिर बात यह है कि हमे थाने-कचहरी का तो पता नही है। आप चाहे तो मामला सुलझ सकता है।''

इतने मे सेठानी जी ने सारे गहने लाकर उलट दिये। वही पठानी ढग के मोटे-झोटे कड़े, गले की हँसली, माथे का झूमर, अँगूठिया, आरसिया। रामअवतार जितने गहने रख गया था, वह सारे के सारे मौजूद थे। इन्सपेक्टर ने गहने उठाकर देखा और कहा—

'इसकी लिखा-पढी भी नही है ?'

"है जी ।" सेठ जी बोले ।

सेटानी ने कहा—

"अब विश्वास आया आप को ?"

"विश्वास तो आया लेकिन आप को भी कचहरी जाकर गवाही देनी पडेगी ।"

"राम-राम, मै कचहरी जाऊँगी ? कभी नही ।"

"हमे कोई रास्ता बताइए ?"

इन्सपेक्टर सोच मे पड गया । सेठ जी ने मुनीम जी को कहा--

"कुछ चाय-पानी का प्रबन्ध तो करो ।"

"न जी, चाय-पानी की जरूरत नहीं ।"

इन्सपेक्टर ने कहा—

"आप एक काम कीजिए, यह माल उसी के घर पहुँचा दीजिए, तो फिर हम उसी को गिरफ्तार कर लेगे, आप पर कोई आच न आयेगी ।"

सेठानी ने कहा—

"आज ही पहुँचा आयेगे ।"

"तो फिर मै कल शाम को ही वहा छापा मारूँगा ।" इन्सपेक्टर बोला ।

'हा यह ठीक है ।" सेठ जी खुश हो गये ।

'उस ससुरे को तो आप जेल ही भिजवाइये ।" और फिर मुड़कर अपनी घरवाली से कहने लगे—

"देखा जी तुमने, सूरत से कितना शरीफ मालूम होता था बदमाश ? पिछले दिनो ही उसके घर पाच हजार रुपये देकर आया था मैं ।"

इन्सपेक्टर ने कहा—

"बहुत बड़ा बदमाश मालूम होता है, लेकिन मै सारा रुपया उगलवा लूँगा, आप जरा यह माल पहुँचा दीजिये उसके घर में ।"

"हा जी, हा जी, फौरन पहुँचाता हूँ ।"

' देर मत कीजिएगा ।" कहकर इन्सपेक्टर साहब चले गये ।

इन्सपेक्टर के जाने के बाद सेठानी जी बिगडने लगीं —

"देखा न ? ज्योतिषी महाराज झूठ थोडे ही कह गये थे कि लूट का माल आपत्ति लेकर आता है ? अब जब तक यह माल नही जायेगा, मै इस घर मे अन्न ग्रहण नही करूँगी ।"

इतना कहते-कहते वह रोने लगी । इन्सपेक्टर ने सीढियो पर ही अपना कोट उतार कर बगल मे दबा लिया और मकान के नीचे खड़े तागे मे बैठ गया । चरनदास पहले ही से तागे मे मौजूद था । तागा चला तो चरनदास ने पूछा—

"क्यों नारायण क्या हुआ ?"

नारायण ने कहा —

"भैया अभी तो ठीक है । कल माल घर लेकर आयेगा ।" और फिर धीरे से बोला, ताकि तागेवाला न सुन ले "और फिर मैं रामअवतार के यहा छापा मारूँगा, इसपर सेठ जी बहुत खुश हुए ।"

"सारा माल लेकर आयेगा ?"

"हा, सारा माल ही कहता था, मैंने देखा है, मा के और भाभी के गहने ज्यो के त्यो रखे हैं ।"

"कल आयेगा या आज ?"

"कहता तो आज ही था, पर अब तो रात होगई है, कल ही लायेगा ।"

"क्यो ?"

"रिफ्यूजियो के मुहल्ले मे यह साहूकार लोग अपने माल के साथ रात मे घुसते जरा डरते हैं, इसलिए कल ही लेकर आयेगा । लेकिन भाई इसका भरोसा नहीं ।"

रामस्वरूप और कलावती, नन्हे के सिरहाने बैठे थे । नन्हा होश में था, परन्तु ऐसा होश भी किस काम का कि बच्चे को नीद ही नहीं आती,

तडप रहा है। दर्द ने बेचैन कर रखा है। मा बच्चे को निराश आखो से देखती है और रामस्वरूप की तरफ देखकर चुप हो जाती है। दोनो बच्चे को देखते हैं, परन्तु कुछ बोल नहीं सकते, क्योकि जब हृदय बोलता है तो जीभ गूँगी हो जाती है। बीच मे कभी-कभी बच्चा दादी मा को याद कर लेता था—"दादी मा, दादी मा!" 'दादी मा' सुनकर कलावती के हृदय पर एक प्रहार-सा होता है। वह सोचती—"मैने इसे पाला-पोसा है, पेट मे रखा है और यह मुझे छोड कर दादी मा को पुकारता है। और दादी मा को ये बुलाने भी गये, तो वह नही आई। वह आएगी क्यो?" और कलावती का सर शर्म से झुक गया।"

इधर दादी मा के रास्ते मे इतनी ऊँची दीवार खडी थी कि वह इसको छलाग नही सकती थी। यह दीवार उसके इसी बेटे ने खडी की थी, जो आज दरवाजे के पास आकर उसे पुकार रहा था। वह सोचने लगी, बडे बाबू अगर दरवाजे बन्द न करते तो क्या हो जाता? मै अगर नन्हे के पास जा बैठती तो क्या बिगड जाता? रामस्वरूप को अपने कलेजे से लगा कर दो आसु बहा लेती तो क्या हो जाता? भूचाल आ जाता?.... हा, इस शान को चोट लग जाती कि जिसे एक बार छोड़ दिया, दुबारा उसकी ओर मुँह उठाकर देखना पाप है। परन्तु मै क्यो चुप रही? उस झूठी मर्यादा के विरुद्ध विद्रोह क्यो नहीं किया! मुझे बड़े बाबू को कह देना चाहिये था कि मछली पानी को कैसे छोड़ सकती है, और अगर छोड़ दे, तो जियेगी कैसे?

सुहागी रात भर इन्हीं विचारों मे डूबी रही। दूर घड़ियाल बजा—एक-दो-तीन-चार। चार बज गये? झरोखे तक पहुँचने के लिये वह स्टूल पर खडी हो गई। सुहागी का दिल दुख और दर्द से भर गया। बड़े कमरे मे सब सो रहे थे। सारा कमरा बिस्तरों से भरा हुआ था। शीत से प्रत्येक मनुष्य रजाई में लिपटा पड़ा था। मॅझली बहू का बच्चा मा के सीने से चिपटा सोया हुआ था। सुहागी का दिल भर आया, सब निश्चिन्तता से सो रहे हैं। किसी को यह खयाल नही कि मेरा दिल कराह रहा है, अपने बच्चे को

छाती से लगाने के लिए । वह उठी और बाहर की तरफ चल दी । दरवाजे के बाहर उसने निकल कर देखा कि पेडाखान छप्पर के नीचे सो रहा था और उसके हुक्के की आग ठण्डी हो चुकी थी । गाय छप्पर के नीचे बैठी थी । उसके बछडे की गर्दन अपनी मा की गर्दन के ऊपर थी । मा धीरे-धीरे आंगन को पार करके बाहर के दरवाजे पर पहुँच गई । उसने देखा, वहा ताला लगा है । ताला देखकर मा तडप गई । इतना जुल्म ? दरवाजे को ताला लगा दिया घरवालो ने जिससे मै रामस्वरूप से न मिल सकू, उसके तडपते बच्चे को न देख सकू, इन सबके दिल पत्थर के हैं । अब क्या करूँ ?"

बीच की दीवार के खुले हुए झरोखे से प्रकाश दिखाई दे रहा था, जैसे उस घर मे रोशनी हो । यह रोशनी सुहागी ने पहले कभी नहीं देखी थी । मालूम होता था, यह प्रकाश वर्षो के पश्चात् अपने आप उत्पन्न हो गया है और मा की ममता को अपनी तरफ बुला रहा है । सामने बरामदे में स्टूल रखा था । सुहागी ने उस स्टूल को लाकर दीवार के साथ लगा दिया । झरोखे तक पहुचने के लिए वह स्टूल पर खड़ी हो गई । पंजो के बल पर खड़ी होकर भी वह झरोखे तक न पहुच सकी । एक बीते की दूरी अब भी रह गई । उसकी आखे झरोखे के उस तरफ नही देख सकती थीं । आखिर सुहागी ने ईटे लाकर स्टूल के नीचे रख दी और फिर खड़ी होकर देखने लगी । मा और बेटे के बीच की दीवार तो उसी प्रकार खडी थी, परन्तु उसके घर की प्रत्येक वस्तु उसे दृष्टिगोचर हो रही थी । सामने बरामदे मे रामी कम्बल लपेटे दरवाजे पर बैठी ऊँघ रही थी ।

रामस्वरूप कहा है ? कलावती कहा है ? नन्हा कहा है ? वह नजर नहीं आ रहे थे । सुहागी ने अपनी गर्दन झरोखे मे उचक कर डाल दी और देखने लगी । वह पंजों के बल खड़ी थी । उचककर देखने के कारण पजो से स्टूल खिसक गया और वह लुढक कर उल्टा हो गया । सुहागी की गर्दन झरोखे मे अटक गई और वह बिना सहारे के हवा मे लहराने लगी । एक चीख निकली और "बेटा" कहकर सुहागी ने गर्दन पर बोझ डाल दिया।

चीख की आवाज सुनकर दादा जाग उठा। रामनारायण भागा और रामस्वरूप जागा। सब मा को लटकते देखकर घबरा गये। रामस्वरूप और कलावती उधर से लपके। मा, मा की आवाज गूँजने लगीं। रामनारायण स्टूल रखकर मा को उतारने लगा, परन्तु उसकी गर्दन न निकल सकी। वह बेसुध लटक रही थी। उसकी आखे खुली थीं और बाहर को आ गई थी। दादा कह रहा था—

"दीवार गिरा दो, दीवार। सुहागी बेटा मुझे माफ कर दे। अरे क्या देख रहे हो?"

रामस्वरूप दीवार के उस तरफ खड़ा तड़प रहा था—"मा, मेरी मा" आखिर उसने दीवार को लात मारी। कोई भागा, फावड़ा उठाकर लाया और दीवार गिरा दी गई।

अब मा-बेटे के बीच कोई दीवार नही थी, परन्तु मा की हालत अच्छी नहीं थी। उसकी नाडी मन्द चल रही थी। दादा कहे जा रहा था—

"यह मेरा जुल्म है, मैने इसकी जान ली है।"

रामस्वरूप कहता था—

"नहीं, मैने मा की जिन्दगी लेने की कोशिश की है मा.. ।"

रामनारायण ने कहा—

"भैया! मा मर गई।"

रामअवतार बोला—

"नहीं, मा नही मर सकती, मा ने कभी हमे कष्ट नहीं दिया। वह इस समय कैसे मर सकती है, वह जानती है कि घर मे जलाने के लिए भी पैसा नहीं है।"

ठीक उसी समय मा की आवाज धीमी-सी सुनाई दी।

"बेटा! बेटा!"

मा होश मे आने लगी। "मा" रामस्वरूप चिल्लाया—

"मा, मुझे क्षमा कर दो, मां, मैने तुम्हे बहुत दुःख दिया।"

सब लोगो ने मिलकर मा को बरामदे में लाकर लिटा दिया। अब दिन निकल रहा था। चरनदास ने रामस्वरूप से कहा—

"बेशर्म, माफी माग रामअवतार से, जिसने मा के ठाकुर चुरा कर तेरा जुर्माना भरा है, जो बाप की पगड़ी का फूल बेचकर तेरे बच्चे के लिए दवा लाया है। कालेबाजार के व्यापरी शर्म कर अपनी करतूत पर।"

रामस्वरूप सिर झुकाये मा के पाव मे बैठा था। कलावती पास खडी आसू बहा रही थी। मुहल्ले के सब लोग जमा हो गये थे। रायसाहब कह रहे थे—

"ऐसे भाई भी कहा मिलते हैं?"

दादा कह रहा था—

'मुझसे बुरा आदमी भी नहीं मिल सकता।"

इतने मे सेठ हर्जीमल ने प्रवेश किया। रामनारायण और चरनदास ने आखों ही आखो मे इशारे किये और दोनों वहा से खिसक गये। हर्जीमल ने आकर कहा—

"रामअवतार जी, यह आप अपने ठाकुर जी वापस ले लें और यह गहने भी। जब आपके पास पैसे आयेंगे, मुझे आकर दे देना। मैं यह माल घर मे नहीं रख सकता।"

इतना कहकर उसने एक डब्बा-सा वहा रख दिया और भाग गया। शायद उसको डर लगा था कि कहीं इन्सपेक्टर न आ जाये। दादा ने डिब्बा खोला, ऊपर ठाकुर जी बैठे मुस्कुरा रहे थे और वही जेवर, जो ठेका लेने के लिए रामअवतार हर्जीमल के पास रख आया था।

किसी की समझ मे यह बात नहीं आई थी कि सेठ हर्जीमल गहने वापिस क्यो दे गया। चरनदासने कहा—

"पुलिस इन्सपेक्टर से कल अगर इसकी मुलाकात नहीं होती, तो यह कभी आज गहने वापस लेकर नही आता। सरमायादार ने असल में रामअवतार को फंसाने की कोशिश की है, उसको विश्वास हो गया है कि

यह चोरी का माल है। और अब इस घर पर पुलिस छापा मार कर सबको बाध कर ले जायगी। क्यो रामनारायण ?"

"हॉ भैया। हमारी जय बोलो। हम इन्सपेक्टर बनकर गये थे।" दादा नें डिब्बे मे से ठाकुर जी निकाल लिये और सुहागी के पास ले जाकर कहा—

"बेटा, देख तेरे ठाकुर जी आये है।"

सुहागीने आखे खोलकर देखा, वही ठाकुर जी मुस्कुराते हुए।

"मेरे ठाकुर ! कहा चले गये थे ?" मा ने ठाकुर की तरफ देखकर मन ही मन सवाल किया।

चरनदास बोला—

"मौसी, तेरे ठाकुर तेरे गहने लेने गये थे, वह लेकर वापस आगये।"

दादा ने कहा—

"लेकिन इसमें धनीराम के कुल्ले का फूल नही है।"

रामस्वरूप ने कहा—

"वह मै लाऊँगा। मैने बाप की पगड़ी काले बाजार मे नीलाम की है, अब मै ही उसे लाऊँगा।"

रामअवतार ने भाई की तरफ देखा और रामस्वरूप ने उसकी तरफ। दोनो गले मिल गये।

दादा ने चिल्लाकर कहा—

"तुम दोनो बेशर्म हो, ओए। मै अगर रामअवतार की जगह होता, तो कभी तेरे साथ नहीं बोलता, देखता तक नही तेरी तरफ बेगैरत।"

सुहागी उठकर बैठ गयी। दादा उसे देखकर चुप हो गया और बोला—

"तू मुझे कभी नहीं बोलने देगी, कभी नही। वई - वई - जो तुम्हारा जी चाहे करो, मैं कुछ नहीं बोलता।"

और वह चारपाई पर बैठकर सोचने लगा—"इस मा ने तो अपने बेटों को एक कर दिया, परन्तु जाने भारत माता अपने बिछुडे बेटो को कब एक करेगी।

—o—